भारत पाक सम्बन्ध और कश्मीर समस्या (1971-2000)

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी की
डॉक्टर ऑफ फिलासफी उपाधि
हेतु प्रस्तुत

2002
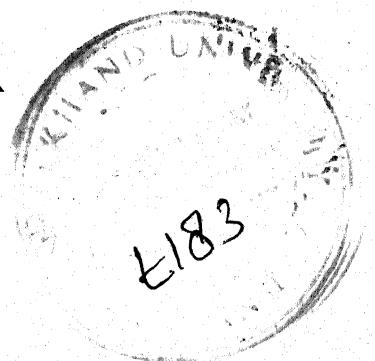
निर्देशक :
डॉ. राजेन्द्र कुमार
(रीडर)
राजनीति विज्ञान विभाग
दयानन्द वैदिक महाविद्यालय, उरई

शोधकर्ता :
आशुतोष द्विवेदी
एम.ए. (राजनीति विज्ञान)

निर्देशक प्रमाण–पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि **"भारत पाक सम्बन्ध और कश्मीर समस्या (1971–2000)"** नामक शोध प्रबन्ध बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी की राजनीति विज्ञान की शोध उपाधि (डॉक्टर ऑफ फिलासफी) के लिये श्री आशुतोष द्विवेदी द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है। उपरोक्त शोध कार्य शोधार्थी श्री आशुतोष द्विवेदी ने मेरे निर्देशन में किया है और इस विषय पर विश्वविद्यालय में कोई शोध कार्य नहीं किया गया है।

श्री आशुतोष द्विवेदी ने मेरे साथ इस शोध प्रायोजना पर दो वर्ष से अधिक कार्य किया है और इन्होंने 200 दिनों से अधिक व्यक्तिगत उपस्थित रहकर शोध कार्य को सम्पन्न किया है। मैं इनके उज्जवल भविष्य की कामना करता हूँ।

दिनांक : 22.12.02

(डा. राजेन्द्र कुमार)

रीडर, राजनीति विज्ञान विभाग

दयानन्द वैदिक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उरई

आभार प्रदर्शन

सर्वप्रथम मैं अपने निर्देशक डॉ. राजेद्र कुमार (रीडर, राजनीति विज्ञान विभाग, दयानन्द वैदिक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उरई) का हृदय से आभारी हूँ, जिनके कुशल निर्देशन में मैंने शोध प्रबन्ध तैयार किया है। शोध प्रबन्ध के निर्माण में उनके मूल्यवान निर्देश, उपयोगी सुझाव, तार्किक पद्धति एवं प्रेरणादायी प्रोत्साहन के कारण नियोजित अध्ययन पूर्ण हो सका है। मैं डॉ. जयश्री पुरवार, जो स्नातकोत्तर कक्षाओं से ही मेरे लिये एक असीम प्रेरणा स्रोत रही हैं, का भी सहृदय आभार व्यक्त करता हूँ। उन्होंने इस शोध प्रबन्ध के सम्पादन में अपना महत्वपूर्ण समय निकालकर मेरा मार्गदर्शन किया। मैं अपने गुरु डॉ. आदित्य सक्सेना एवं डॉ. रिपुसूदन सिंह का अभिनन्दन करता हूँ जिनकी प्रेरणा एवं प्रोत्साहन से इस अध्ययन को पूर्ण करने का प्रयास कर सका हूँ। मैं अपने पिता जी एवं माता जी का वन्दन करता हूँ जिनके स्नेह एवं आशीर्वाद से ही यह प्रयास सम्भव हो सका है। मैं अपनी बहन स्वरूप शिक्षिका गाँधी डिग्री कालेज, उरई स्व. डॉ. कल्पना एवं जीजाजी का हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने मुझे उचित मार्गदर्शन प्रदान किया।

मैं हृदय से आभारी हूँ डॉ. एन. डी. समाधिया (प्राचार्य, दयानन्द वैदिक महाविद्यालय, उरई) के प्रति, जिन्होंने अपना सकारात्मक सहयोग प्रदान किया।

मैं आभारी हूँ अपनी सहयोगी बहन कल्पना एवं जीजाजी श्री बाई. एन. द्विवेदी का जिन्होंने उचित समय पर मदद कर इस प्रयास को सफल बनाया तथा बहन अर्चना एवं जीजा जी श्री पीयूष नायक का भी आभारी हूँ जिन्होंने अपने आशीर्वाद एवं सहयोग कर उत्साहवर्धन किया। मैं आभारी हूँ अपनी प्रतिदिन की सहयोगी बहन डॉ. दर्शना का जिन्होंने उचित चेतावनी के साथ कार्य सम्पादन में सर्वाधिक योगदान किया। मैं अपनी मौसी श्रीमती कृष्णा देवी पुरोहित के प्रति हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने अपने आशीर्वाद एवं प्रोत्साहन से मेरा उत्साहवर्धन किया। मैं आभारी हूँ अपने बड़े भाई श्री यादवेन्द्र सिंह सिकरवार ग्वालियर के प्रति जिन्होंने कार्य सम्पादन के समय अत्यधिक स्नेह प्रदान किया।

मैं अपने मित्र श्री यूनुस खान (मुस्लिम बोर्डिंग इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद), श्री प्रभात सिंह (सर पी. सी. बनर्जी छात्रावास इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद) एवं श्री नीरज द्विवेदी (सर पी. सी. बनर्जी छात्रावास इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद) का हृदय से

आभारी हूँ जिन्होंने इस कार्य के लिये पूर्ण सहयोग प्रदान किया।

मैं अपने मित्र श्री योगेन्द्र स्वर्णकार (संचालक, स्वर्ण कम्प्यूटर्स, उरई) एवं उनके सहयोगियों का हृदय से आभारी हूँ, जिन्होंने लगातार बिना किसी व्यवधान के अपने समयाभाव के बावजूद भी कम्प्यूटर द्वारा शोध ग्रन्थ को तैयार करने में पूर्ण सहयोग प्रदान किया है।

मैं इन संस्थाओं एवं कर्मचारियों के प्रति भी आभारी हूँ जिन्होंने आवश्यक सामग्री प्रदान करने में आत्मीय भाव से सहयोग दिया –

1. इण्डियन काउंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स, सप्रू हाउस, नई दिल्ली
2. इण्डियन काउंसिल ऑफ सोशल सांइस रिसर्च, नई दिल्ली
3. इण्डियन डिफेंस स्टडीज एण्ड एनालिसिस, नई दिल्ली
4. तीन मूर्ति भवन, नेहरू स्मृति पुस्तकालय, नई दिल्ली
5. संसद पुस्तकालय, संसद भवन, नई दिल्ली
6. जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
7. मेरठ विश्वविद्यालय पुस्तकालय, नई दिल्ली
8. मौलाना आजाद पुस्तकालय, अलीगढ़
9. इलाहाबाद विश्वविद्यालय पुस्तकालय, इलाहाबाद
10. डिफेन्स स्टडीज डिपार्टमेन्ट पुस्तकालय, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
11. ग्वालियर विश्वविद्यालय पुस्तकालय, ग्वालियर
12. दयानन्द वैदिक स्नातकोत्तर महाविद्यालय पुस्तकालय, उरई
13. जानकी बाई पुस्तकालय, उरई

मैं आभारी हूँ अपने मित्रवत भान्जे रितु, ऋषि, अभिराम, मनु एवं नैना नायक का जिन्होंने लगातार कुछ न कुछ सहयोग प्रदान कर कार्य सम्पादन में सहयोग प्रदान किया।

मैं अपनी भतीजी कु. किरन दुबे का भी आभारी हूँ जिन्होंने अपने अति व्यस्त समय के बावजूद सहयोग प्रदान किया।

आशुतोष द्विवेदी

दिनांक 22-12-02

(आशुतोष द्विवेदी)

एम. ए. (राजनीति विज्ञान)

अनुक्रमणिका

मानचित्र

तालिकायें

हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ

परम पूज्य सन्त श्री आशाराम जी बापू एवं परम पूज्य संत श्री रविशंकर जी महाराज रावतपुरा सरकार के चरणों में शत्–शत् नमन सन्तद्वय के आशीर्वाद एवं प्रेरणा से इस कार्य में बहुत आत्मविश्वास एवं शोध कार्य को पूरा करने में सफलता मिली है। वास्तव में मेरा यह प्रयास पूज्यनीय सन्तों का आशीर्वाद मात्र है। पूज्यनीय सन्तों की कृपा से ही जीवन के हर क्षेत्र में सफलता प्राप्त होती है। सन्तद्वय के चरणों में कोटि–कोटि नमन !

भूमिका

भूमिका

भारत–पाक सम्बन्धों में कश्मीर समस्या

भारत–पाक सम्बन्धों में प्रारम्भ से ही कश्मीर की समस्या सबसे अधिक गम्भीर तथा कटुतापूर्ण समस्या रही हे। विभाजन होने तथा ब्रिटेन की प्रभुसत्ता के समाप्त होने के बाद कश्मीर के महाराजा हरिसिंह ने भारत या पाकिस्तान के साथ मिलने के निर्णय को टालने का निर्णय लिया। इसलिये पाकिस्तान ने कबायलियों की सहायता से कश्मीर पर आक्रमण करवा दिया ताकि कश्मीर में उथल–पुथल हो जाये। आक्रमणकारियों को पाकिस्तानी सेना की पूर्ण सहायता तथा समर्थन प्राप्त था। परन्तु पाकिस्तान की यह चाल कामयाब नहीं हुई। 26 अक्टूबर, 1947 को कश्मीर के राजा ने आक्रमणकारियों को खदेड़ने के लिये भारत सरकार की सहायता लेने के लिये भारत में शामिल हो जाने का निर्णय किया। राजा के इस निर्णय का, कश्मीरी लोगों की पार्टी–नेशनल कांफ्रेंस ने पूर्ण समर्थन किया। भारत की सरकार ने कश्मीर के लोगों को यह आश्वासन दिया कि कश्मीर में कानून व्यवस्था पूरी तरह बहाल हो जाने तथा आक्रमणकारियों के बाहर निकल जाने के बाद कश्मीर के भाग्य का निर्णय करने के लिये मत संग्रह करवाया जायेगा। पाकिस्तान की सरकार ने कश्मीर का भारत में शामिल होना अस्वीकार कर दिया। इससे पाकिस्तान से भारत का कश्मीर का झगड़ा खड़ा हो गया।

नवम्बर 1947 में लार्ड माउंट बेटन ने कश्मीर पर भारत–पाक विवाद का हल करने का प्रयत्न किया तथा इस उद्देश्य के लिये उसने पाकिस्तानी नेताओं के साथ बातचीत भी की। परन्तु इन प्रयत्नों का कोई परिणाम न निकला तथा दिसम्बर 1947 में यह स्पष्ट हो गया कि बातचीत द्वारा इस समस्या का हल नहीं किया जा सकता। परिणामस्वरूप 1 जनवरी, 1948 को भारत ने यह समस्या संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद के सामने रखी। उसी समय से कश्मीर का मामला सुरक्षा परिषद में लटक गया।

पहले पहल सुरक्षा परिषद ने भारत तथा पाकिस्तान में कश्मीर समस्या को हल करने के लिये एक 5 सदस्यीय आयोग की नियुक्ति की। इस आयोग ने दिसम्बर 1948 को कश्मीर में युद्ध विराम की घोषणा कर दी, जिसे 1 जनवरी, 1948 को लागू होना था, बाद में इसने तीन अन्तिम रिपोर्टें भी प्रस्तुत कीं। इसकी सिफारिशों पर सुरक्षा परिषद ने कश्मीर पर मध्यस्थ के रूप में एम. सी. नोटन की नियुक्ति की। वे इस समस्या को सुलझा न सके। 1 अप्रैल, 1950 को सुरक्षा
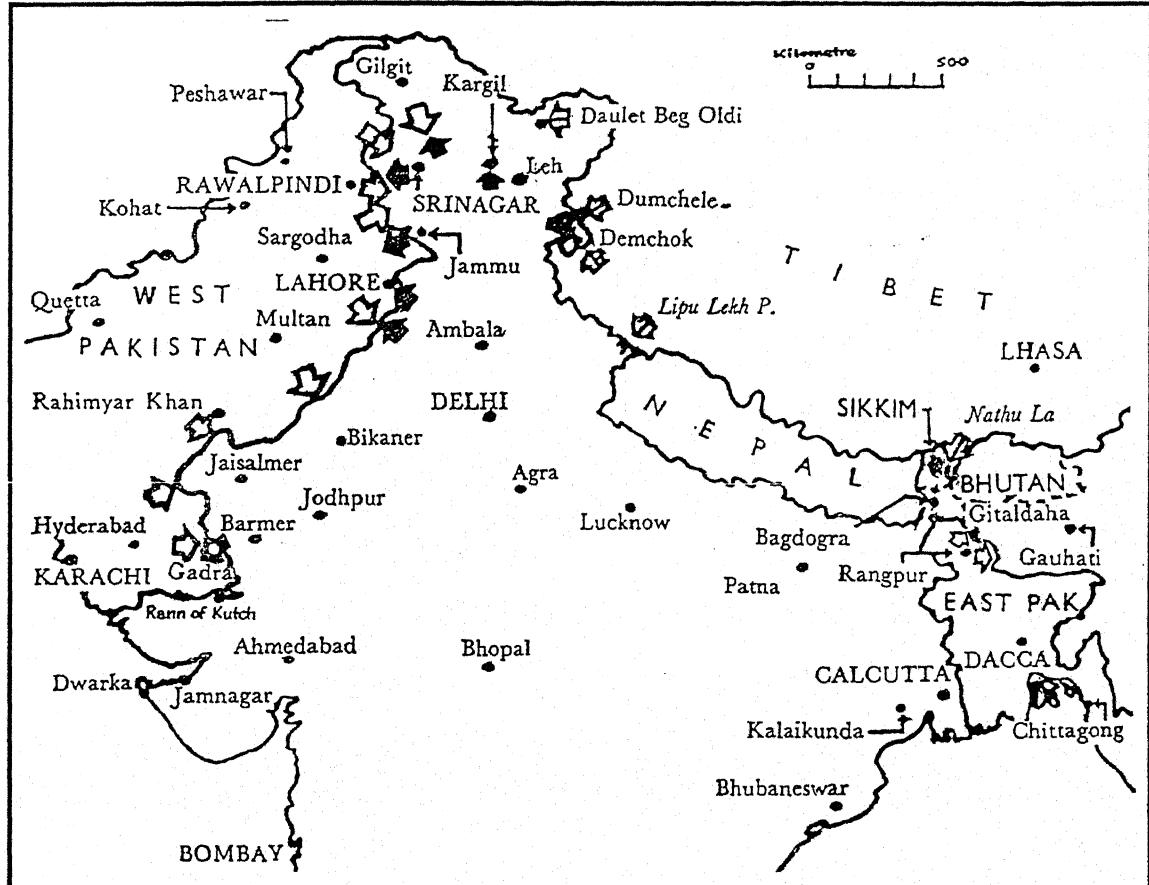
भारत तथा पाकिस्तान के मध्य कश्मीर की स्थिति

परिषद ने ओवन डिक्सन को नियुक्त किया, जिसे एम. सी. नोटन की रिपोर्टों को लागू कराना था। वे भी सफल न हो सके। उसने अपनी रिपोर्ट में भारत तथा पाकिस्तान के बीच कश्मीर के बंटवारे का सुझाव दिया। दोनों ही देशों ने इस सुझाव को रद्द कर दिया। इसके बाद सुरक्षा परिषद द्वारा एफ. पी. ग्राहम को संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रतिनिधि के रूप में भारत तथा पाकिस्तान के लिये नियुक्त किया गया तथा उसने यह सुझाव दिया कि दोनों ही देशों के बीच कश्मीर समस्या को हल करने के लिये सीधी बातचीत होनी चाहिये। 1953–56 तक भारत तथा पाकिस्तान दोनों देशों ने ही कश्मीर पर कई बार आपसी बातचीत की परन्तु किसी भी परिणाम तक नहीं पहुँच सके।

इसी बीच स्थिति काफी परिवर्तित हो गई। कश्मीर के लोगों ने अपनी नैशनल कान्फ्रैंस, अपनी संविधान सभा, चुनावों के परिणामों तथा जम्मू–कश्मीर की विधानसभा के प्रस्तावों द्वारा कश्मीर के भारत में विलय को पूर्ण स्वीकृति दे दी। इसलिये भारत ने पाकिस्तान की इस मांग को रद्द कर दिया कि कश्मीर में मत संग्रह करवाया जाये। 1954 में पाकिस्तान अमरीका के नेतृत्व में बनी सुरक्षा संधि सीटो व्यवस्था का सदस्य बन गया तथा उसने अपनी गुट की स्थिति के द्वारा भारत को पश्चिमी दबावों द्वारा कश्मीर की समस्या का समाधान करने के लिये प्रयोग करना शुरू कर दिया। पाकिस्तान के इस कार्य के प्रति भारत ने कड़ा रवैया अपनाया तथा संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद में सोवियत संघ का समर्थन प्राप्त किया। परिणामस्वरूप, सुरक्षा परिषद झगड़े का निपटारा न कर सकी। 1955 तक सुरक्षा परिषद की कश्मीर समस्या को हल कर पाने की असफलता स्पष्ट हो गई तब पाकिस्तान ने अमरीका तथा ब्रिटिश दबावों को कश्मीर समस्या पर बातचीत करने के लिये भारत को बाध्य करने के लिये प्रयोग करने का निर्णय किया। विशेषतया 1962 में चीनी आक्रमण के बाद पाकिस्तान कश्मीर समस्या सुलझाने के लिये काफी उत्सुक हो गया। इस समय तक भारत ने यह बात दृढ़ता से कहनी शुरू कर दी थी कि कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है तथा यह भारत की धर्म निरपेक्षता का प्रतीक है, किन्तु 1962 के बाद भारत ने कश्मीर पर बातचीत करने की पाकिस्तानी मांग को मान लिया। दोनों देशों के बीच कश्मीर पर छः बार बातचीत हुई। इस बातचीत से कोई परिणाम नहीं निकला। 1965 में पाकिस्तान ने सेना की सहायता से कश्मीर समस्या को सुलझाने का प्रयत्न किया। प्रशिक्षित घुसपैठियों की सहायता से इसने कश्मीर में गड़बड़ फैलाने के प्रयत्न किये ताकि कुछ समय बाद कश्मीर को जीता जा सके। सितम्बर 1965 को इसने अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिये भारत पर

आक्रमण कर दिया। भारत ने इसका उचित उत्तर दिया तथा कश्मीर देने की अपेक्षा कश्मीर के कई हिस्सों को अपने अधिकार में कर लिया जो अवैध रूप से पाकिस्तान ने अपने अधिकार में रखे हुये थे।

1966 में दोनों देशों ने ताशकन्द समझौता किया तथा यह बात स्वीकार की कि वे सभी आपसी मामलों का हल द्विपक्षीय बातचीत से ढूंढेंगे परन्तु समझौते से भी दोनों देशों के बीच अच्छे पड़ोसियों जैसे मधुर सम्बन्ध नहीं बन सके। कश्मीर की समस्या भी सुलझ न सकी। सातवें दशक के अन्तिम वर्षों में भी भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्ध बंग्लादेश समस्या के कारण एक बार फिर तनावपूर्ण हो गये। दिसम्बर 1971 में बंग्लादेश युद्ध शुरू हो गया तथा इस बार भारत ने पाकिस्तान पर निर्णायक विजय हासिल की। पाकिस्तान, पूर्वी पाकिस्तान (अब बंग्लादेश) में बुरी तरह पराजित हुआ। भारत पाकिस्तान के कुछ अत्यधिक महत्व तथा सामरिक महत्व के स्थान जीतने तथा बड़ी संख्या में युद्ध कैदी पकड़े जाने की स्थिति में आ गया। तथापि भारत–पाक सम्बन्धों में सामान्यता लाने के लिये भारत ने पाकिस्तान के साथ शिमला शिखर सम्मेलन करने का तथा 1972 का शिमला समझौता करने का निर्णय किया। यह समझौता भारत–पाक सम्बन्धों को सामान्य बनाने के लिये द्विपक्षीय बातचीत का उदार प्रयत्न था। 1972 के बाद यह समझौता भारत तथा पाकिस्तान के बीच बातचीत का मार्ग निर्देशन करने लगा।

1972 के उत्तर काल में दोनों ही देश अपने सम्बन्धों को सामान्य बनाने तथा दोनों देशों के बीच व्यापारिक तथा सामाजिक सम्पर्क कायम करने का प्रयत्न करते रहे। 1980 के दशक के आरम्भिक वर्षों में पाकिस्तान ने भारत के साथ अनाक्रमण समझौता करने की पेशकश की। भारत ने दोनों देशों के बीच सम्बन्धों को सामान्य बनाने की पाकिस्तान की इस इच्छा पर प्रसन्नता व्यक्त की परन्तु पाकिस्तान के साथ अनाक्रमण समझौते के स्थान पर शांति, मित्रता तथा सहयोग की एक विस्तृत सन्धि करने का अधिमान दिया, यह पाकिस्तान को स्वीकार्य नहीं था। इसलिये भारत–पाकिस्तानी मतभेद विशेषकर कश्मीर समस्या पर 1980 के दशक में विद्यमान रहे। दिसम्बर 1989 में पाकिस्तान कश्मीर में अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिये बड़े गम्भीर प्रयत्न करने में लग गया। इसके लिये वह भारत विरोधी तत्वों जैसे कि उग्रवादियों और आतंकवादियों को शस्त्र, प्रशिक्षण, सहायता और सक्रिय समर्थन देने लगा तथा जम्मू तथा कश्मीर में आतंकवाद को बढ़ावा देने की नीति पर चलने लगा। पार–सीमा आतंकवाद ने जम्मू तथा कश्मीर में कानून व्यवस्था तथा भारतीय सुरक्षा के सामने एक चुनौती पैदा की जिसका सामना

करने के लिये भारत ने अपनी सुरक्षा सेना तथा अर्ध सैनिक बलों तथा अन्य सुरक्षा बलों के प्रयोग द्वारा अपनी सुरक्षा के हितों की व्यापक स्तर पर सुरक्षा करने की नीति अपनाई। तब से लेकर अब तक कश्मीर में वातावरण काफी चिंता का विषय बना हुआ है।

भारत में विद्यमान सांझा सरकार को एक कमजोर सरकार समझते हुये आतंकवाद तथा परोक्ष युद्ध के द्वारा पाकिस्तान ने कश्मीर को प्राप्त करने के प्रयास आरम्भ कर दिये परन्तु भारत ने सफलतापूर्वक उसके प्रयासों को असफल कर दिया। पाकिस्तान द्वारा कश्मीर मुद्दे के अन्तर्राष्ट्रीयकरण किये जाने की नीति को भी भारत ने सफल न होने दिया।

1989–99 के दस वर्षों तक अपने प्रयत्नों में नाकाम रहने के बाद भी पाकिस्तान ने आतंकवाद को बढ़ावा देकर, भारत विरोधी तत्वों की सहायता करके, भारत के अन्य भागों में उग्रवादी तथा हिंसक गतिविधियों को फैलाकर तथा परोक्ष युद्ध का सहारा लेकर बलपूर्वक कश्मीर को अपने साथ मिलाने की नीति पर चलते रहने का निर्णय लिया। शिमला समझौते के आधार पर द्विपक्षीय वार्तालाप द्वारा कश्मीर मुद्दे का समाधान करने की नीति को भी उसने ठण्डे बस्ते में डाले रखा। भारत ने सदैव यह प्रयास किया कि भारत–पाकिस्तान सम्बन्धों में सुधार करके वातावरण को सुखद बनाकर कश्मीर मुद्दे को आपसी वार्तालाप में सुलझा लिया जाये। फरवरी 1999 में प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेयी ने बस कूटनीति के अधीन पाकिस्तान की यात्रा की तथा दोनों देशों ने लाहौर घोषणा पर हस्ताक्षर किये जिसमें कश्मीर सहित सभी मुद्दों के समाधान तथा आपसी सम्बन्धों में सुधार के लिये एक अच्छी कार्य योजना की रूपरेखा पर सहमति बनाई गई। संस्थागत सम्बन्धों तथा संस्थाओं/समूहों के द्वारा आपसी सहयोग को बढ़ावा देकर वातावरण को सुखद बनाकर सभी समस्याओं के समाधान का निर्णय लिया गया।

परन्तु इस समझौते की आड़ में पाकिस्तान के नेताओं ने कारगिल, बटालिक तथा द्रास क्षेत्रों में सैनिक एवं घुसपैठिये भेजकर नियंत्रण रेखा के भारतीय भाग के एक बड़े क्षेत्र पर अधिकार प्राप्त करने की योजना के अन्तर्गत, फरवरी–मार्च में इस क्षेत्र पर गैर–कानूनी कब्जा भी कर लिया। भारत ने मई–जून 1999 को सशक्त तथा संगठित सैनिक कार्यवाही की तथा इससे कारगिल युद्ध आरम्भ हो गया। इस युद्ध के दौरान विश्व भर में जहाँ पाकिस्तान द्वारा की गई घुसपैठ तथा नियंत्रण रेखा के उल्लंघन किये जाने की कड़ी निन्दा की गई वहीं भारत द्वारा की गई सम्पूर्ण कार्यवाही की प्रशंसा भी की गई। सभी देशों अमरीका तथा चीन सहित, ने पाकिस्तान को घुसपैठियों को वापस बुलाने तथा नियंत्रण रेखा का सम्मान करने को कहा।

अन्तर्राष्ट्रीय दबाव, विशेषकर अमरीकी दबाव के अधीन पाकिस्तान को कारगिल में घुसपैठ को समाप्त कर नियंत्रण रेखा का सम्मान करने का निर्णय लेना पड़ा। कारगिल युद्ध में अपने लक्ष्य को प्राप्त करने की असफलता तथा विश्व के लगभग सभी देशों द्वारा भारतीय नीति की प्रशंसा ने पाकिस्तान को हतोत्साहित कर दिया। भारत–पाक सम्बन्धों में एक प्रकार का ठण्डापन आ गया। लाहौर भावना, घोषणायें तथा कथनों को गहरा धक्का लगा तथा भारत ने यह कहा कि जब तक पाकिस्तान आतंकवाद को सहायता तथा समर्थन देना एवं पार–सीमा आतंकवादी गतिविधियों को बन्द नहीं करता, शिमला समझौता तथा लाहौर घोषणाओं के आधार पर वार्तालाप तथा कार्यवाही के लिये कोई विशेष गुंजाइश नहीं रह गयी है। कारगिल युद्ध करके पाकिस्तान ने लाहौर प्रक्रिया की पीठ में छुरा घोंपा था तथा इसे पुनः आरम्भ करने के लिये पाकिस्तान को आंतकवादियों को समर्थन तथा सहायता देनी बन्द करनी होगी।

कारगिल पराजय तथा प्रधानमंत्री नवाज शरीफ द्वारा घुसपैठियों को कारगिल से वापस बुलाने के निर्णय ने पाकिस्तान की सरकार की लोकप्रियता को काफी कम कर दिया तथा पाकिस्तान के अन्दर इस्लामिक कट्टरवादियों ने सरकार की जमकर आलोचना करनी आरम्भ कर दी। इस कार्य में उन्हें पाकिस्तानी सेना का भी समर्थन प्राप्त था। फिर प्रधानमंत्री श्री नवाज शरीफ तथा सेना के जनरल श्री परवेज मुशर्रफ के मध्य गहरे मतभेद पैदा हो गये। 12 अक्टूबर, 1999 को जनरल मुशर्रफ ने प्रधानमंत्री नवाज शरीफ की लोकतन्त्रीय सरकार को हटाकर स्वयं सत्ता पर अधिकार कर लिया तथा पाकिस्तान में एक बार फिर सैनिक अधिनायकवादी व्यवस्था स्थापित हो गई। इस सैनिक सरकार के गैर–कानूनी आधार के कारण भारत ने पाकिस्तान के सैनिक शासकों से वार्तालाप आरम्भ न करने का निर्णय लिया। परन्तु भारत ने पाकिस्तान में लोकतंत्र की पुनर्स्थापना की कामना करते हुये इसे पाकिस्तान का एक आन्तरिक मामला माना। भारत ने उदारता का परिचय देते हुये समस्या हल करने हेतु आगरा शिखर सम्मेलन आयोजित किया। परन्तु मुशर्रफ की हठवादी प्रवृत्ति के कारण वह भी असफल हो गया। मुशर्रफ ने नैतिक समर्थन के नाम पर आतंकवादियों की घुसपैठ एवं सहायता जारी रखी जिससे स्थिति दिन प्रतिदिन बिगड़ती गई। भारत ने दोनों देशों के मध्य सम्बन्धों को सामान्य बनाने के लिये कहा कि जब तक पाकिस्तान के शासक आतंकवाद तथा पार–सीमा आतंकवाद को समर्थन एवं सहायता करने की नीति को समाप्त नहीं करते तब तक सम्बन्धों को सामान्य बनाने के लिये लाहौर प्रक्रिया को पुनः आरम्भ करने की कोई तुक नहीं है साथ ही द्विपक्षीय वार्तालाप किये जाने से इन्कार कर

दिया।

आज तक न तो भारत–पाक सम्बन्ध सामान्य हो सके हैं और न ही इसके लिये कोई वार्तालाप आरम्भ हो सका है। कश्मीर का मुद्दा ज्यों का त्यों विद्यमान है। पाकिस्तान द्वारा समर्थित तथा सहायता प्राप्त आतंकवाद जम्मू तथा कश्मीर में गड़बड़ी फैलाने का यत्न कर रहा है और भारत इस यत्न को असफल बना रहा है। जम्मू तथा कश्मीर में एक पूर्ण रूप से निर्वाचित लोकतंत्रीय सरकार सत्ता में है तथा कश्मीर के लोग धीरे–धीरे पाकिस्तान के गन्दे खेल को समझकर आतंकवाद से दूर हो रहे हैं। लेकिन अभी भी जम्मू तथा कश्मीर में आतंकवाद पर पूरी तरह से काबू पाना एक लक्ष्य बना हुआ है तथा कश्मीर के मुद्दे सहित भारत पाकिस्तान सम्बन्धों में शिथिलता तथा गतिहीनता विद्यमान है।

पाकिस्तान कश्मीर के सम्बन्ध में कश्मीरियों के आत्म–निर्णय के अधिकार के नाम पर कश्मीर को हथियाना चाहता है तथा इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये आतंकवाद का सहारा ले रहा है। ऐसी परिस्थिति में न तो कश्मीर के मुद्दे का कोई समाधान हो सकता है और न ही भारत–पाकिस्तान सम्बन्धों को सामान्य बनाया जा सकता है।

प्रथम अध्याय

अध्याय प्रथम

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

राजनैतिक, सांस्कृतिक एवं भौगोलिक पृष्ठभूमि

दक्षिण एशिया विश्व भौगोलिक एवं राजनैतिक दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान, मालद्वीव मिलकर दक्षिण एशिया की एक पृथक भौगोलिक इकाई का निर्माण करते हैं।(1)

यद्यपि दक्षिण एशिया में भारत तथा पाकिस्तान के अतिरिक्त अन्य देश भी हैं परन्तु सभी देश भारत–पाक राजनीति से प्रभावित रहते हैं। भारत एवं पाकिस्तान दोनों ही देश अपने जन्म के साथ ही एक दूसरे के पड़ोसी होने के नाते सीमावर्ती समस्याओं जैसे – शरणार्थी समस्या, जल विवाद, सीमा की अस्पष्टता आदि से ग्रस्त हैं। जिनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं मुख्य समस्या है – कश्मीर समस्या, जो लगातार एक अनबूझ पहेली की तरह सम्पूर्ण दक्षिण एशिया में अशान्ति का कारण ही नहीं बनी हुयी है, बल्कि सम्पूर्ण जगत को तृतीय विश्व युद्ध की ओर ढकेलती प्रतीत होती है। कश्मीर समस्या समकालीन विश्व के लिये भी एक चुनौती बनी हुयी है। अपने जन्म से कारगिल युद्ध तक भारत तथा पाकिस्तान के मध्य कश्मीर के लिये चार–चार युद्ध हुये और अभी भी Proxy war जारी है।(2)

भारत के धुर उत्तर में स्थित अद्‌भुत सुन्दर प्रदेश कश्मीर रियासत की जनसंख्या बहुसंख्यक मुसलमान है, परन्तु वहाँ शासन करने वाले राजवंश सदियों से हिन्दू रहे हैं। इसके अतिरिक्त वहाँ अनेक आदिवासी जनजातियाँ बौद्ध धर्मानुयायी हैं।(3)

सम्पूर्ण राज्य को बहुत ही आसानी से तीन स्पष्ट क्षेत्रों में बाँटा जा सकता है –

(1) जम्मू का हिन्दू बहुल मैदानी प्रदेश

(2) इस्लामी प्रभाव वाली कश्मीर घाटी

(3) लद्‌दाख का बौद्ध प्रदेश।

---

1. चतुर्भुज मैमोरिया : विश्व भूगोल एवं प्रयाग सामान्य ज्ञान दिग्दर्शन, प्रयाग पुस्तक सदन, इलाहाबाद
2. Bhashyam Kasturi : Indo-Pakistan conflicts : A spoite of Proxy wars - World Focus Monthly Disscussion Journal, Oct. Nov. Dec. 2001, P. 38
3. डॉ. पुष्पेश पन्त एवं श्रीपाल जैन : अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध (1919 से अद्यतन), मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ, बेगम ब्रिज 1994–95

India, Pakistan & Bangladesh Today
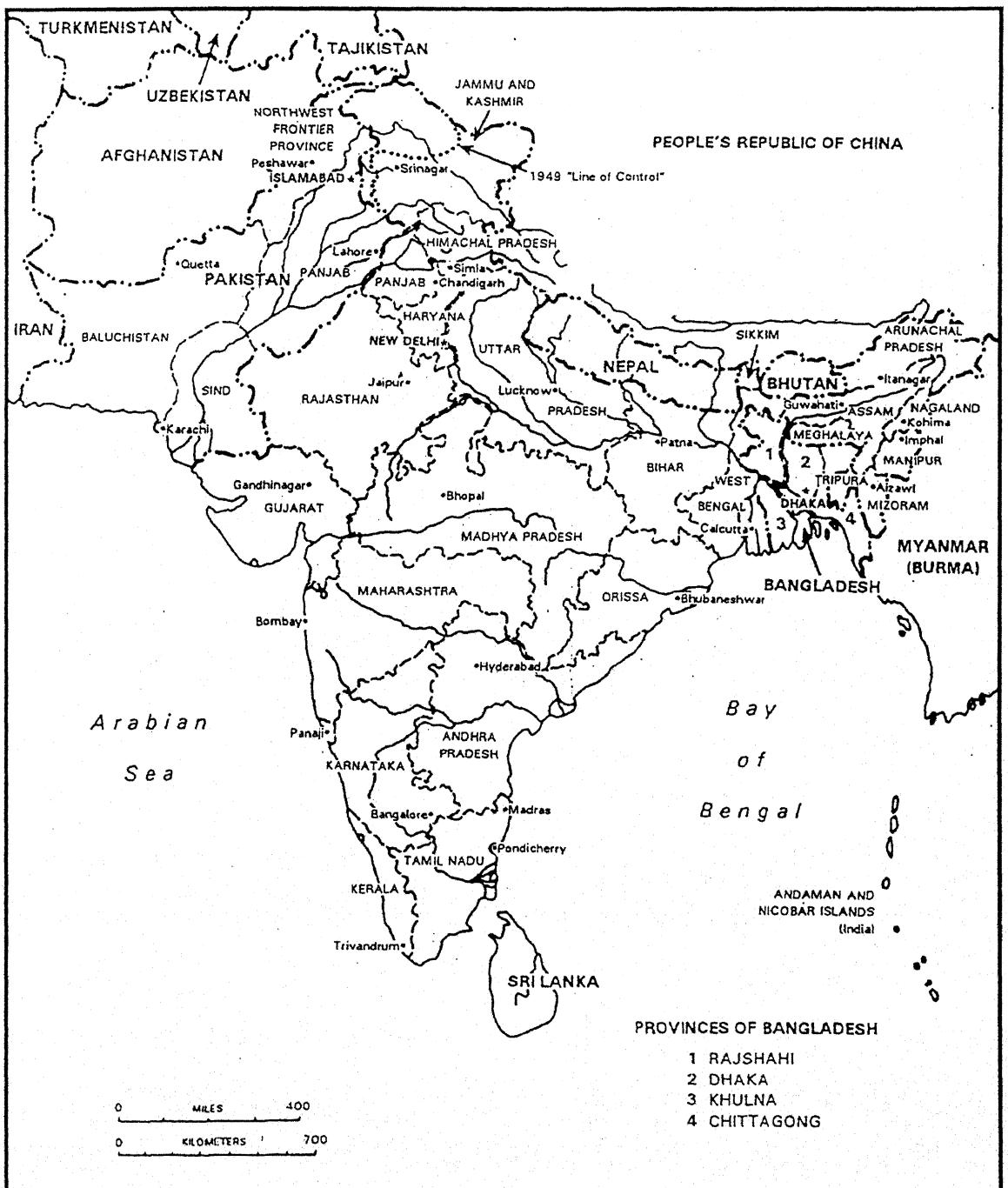
एक ओर सामरिक कठिनाई यह थी कि कश्मीर का संचार और यातायात साधनों द्वारा सीधा सम्बन्ध देश के उस हिस्से से था जो पाकिस्तान बना। परन्तु ऐसा सोचना गलत था कि मुस्लिम बहुसंख्यक जनता पाकिस्तान में शामिल होना चाहती थी। स्वाधीनता संग्राम के दौरान राजवंश के उत्पीड़न के विरुद्ध शेख अब्दुल्ला ने व्यापक जन आन्दोलन का नेतृत्व किया था। शेख अब्दुल्ला निर्विवाद रूप से धर्म निरपेक्ष व्यक्ति थे तथा नेहरू जी के व्यक्तिगत मित्र भी।

कश्मीरी लोग इण्डो–इस्लामिक ग्रुप की डारडिक शाखा से उत्पन्न हुये हैं। अतः इनकी भाषा भी इण्डो–इस्लामिक है इसे कश्मीरी भाषा का नाम दिया जाता है।[4] इन इण्डो इस्लामिक लोगों की डारडिक शाखा के अन्तर्गत आये लोगों ने एक विशेष स्थान पर रहना आरम्भ कर दिया। उस क्षेत्र को कश्मीर कहते हैं एवं इस नयी विकसित हुयी संस्कृति को कश्मीरियत नाम प्रदान किया गया जिसमें हिन्दू, मुस्लिम एवं बौद्ध धर्मानुयायी जनजाति वर्षों से निवास करती आयी है। इनका पहनावा अन्य लोगों की तरह नहीं वरन् हिमालय की घाटी में रहने के कारण अपने सम्पूर्ण शरीर को ढकने का प्रयास किया जाता है। अतः इस प्रदेश के लोग अपनी भाषा, अपना पहनावा, अपने खान–पान के साथ एक नये तरह की संस्कृति को जन्म देते हैं जिसे कश्मीरियत नाम प्रदान किया गया।

वस्तुतः कश्मीर की भौगोलिक स्थिति उसकी त्रासदी का कारण बनी। कुछ धूर्त ब्रिटिश औपनिवेशिक शासकों के भड़काने से राजा हरि सिंह के मन में यह भ्रान्ति घर कर गयी थी कि जो काम जूनागढ़ और हैदराबाद के शासक नहीं कर पाये उसे वह साध लेंगे। चीन, पाकिस्तान और भारत के साथ अन्तर्राष्ट्रीय सीमायें स्पष्ट रखकर वह कश्मीर को एशिया का स्विट्जरलैण्ड बनाना चाहते थे। बाद के वर्षों में इसी तरह की भ्रान्ति के शिकार शेख अब्दुल्ला भी हुये। परन्तु भारत और पाकिस्तान के लिये इस महत्वाकांक्षा को पूरा होने देना सम्भव नहीं था। दोनों के ही लिये कश्मीर की भू–राजनीतिक स्थिति सामरिक महत्व की है। 1948, 1965, 1971 तथा कारगिल संघर्ष से यह बात अच्छी तरह उजागर हो चुकी है।[5]

जम्मू एवं कश्मीर भारत संघ का एक राज्य है। जिसका क्षेत्रफल 86023 वर्ग किलोमीटर है तथा इसमें कश्मीर की घाटी, जम्मू तथा लद्दाख का क्षेत्र, पहाड़ी जिले तथा कबायली क्षेत्र शामिल हैं। जैसे – बलतिस्तान, गिलगिट, हुजाँ तथा नागर आदि।

---

4. Birbal Nath : Kashmir - The nuclear flash point, Manas Publication, p.p. 11
5. डॉ. पुष्पेश पन्त एवं श्रीपाल जैन : अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ, पृ. 446

राज्य की वर्तमान वास्तविक स्थिति के अन्तर्गत जम्मू घाटी तथा लद्दाख भारत में है। कबायली क्षेत्र पाकिस्तान में है तथा पहाड़ी जिले मुख्यतः (पुंछ) भारत तथा पाकिस्तान दोनों में विभाजित है। कश्मीर की सामरिक तथा भौगोलिक स्थिति के कारण यह भारत की सुरक्षा के साथ गहरे रूप से जुड़ा है।[6]

भारत के गवर्नर जनरल लार्ड माउन्टबेटन ने 25 जुलाई 1947 को देशी रियासतों से कहा कि यद्यपि सर्वोच्च सत्ता के समाप्त हो जाने के साथ वे पूर्णरूपेण मुक्त हो जायेंगे। लेकिन यह उनके हित में होगा कि 15 अगस्त 1947 के पहले वे निर्णय कर लें कि भारत या पाकिस्तान किस देश के साथ रहना चाहेंगे ? धीरे–धीरे सारी रियासतें अपनी भौगोलिक परिस्थितियों और अपनी जनता की इच्छा अनुकूल भारत और पाकिस्तान में शामिल होती गयीं लेकिन हैदराबाद, जम्मू–कश्मीर एवं जूनागढ़ 15 अगस्त 1947 में भारत में शामिल नहीं हुये। हैदराबाद तथा जूनागढ़ के मामले डेढ़ वर्ष में निपट गये और उनका अन्ततः भारत के संघ में विलय हो गया।[7]

इस समय जम्मू कश्मीर रियासत तीन विकल्पों पर विचार कर रही थी –

(1) भारत में सम्मिलित होना।

(2) पाकिस्तान में सम्मिलित होना।

(3) स्वतंत्र रहना।

महाराजा हरी सिंह भारत तथा पाकिस्तान दोनों में सम्मिलित नहीं होना चाहते थे लेकिन उनका स्वतंत्र रहना भी मुमकिन नहीं जान पड़ता था। पाकिस्तान के गवर्नर जनरल जिन्ना एवं मुस्लिम लीग इस मत से सहमत थे कि रियासतें चाहे तो स्वतंत्र रह सकती हैं लेकिन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का मत था कि रियासतों को स्वतंत्र रहने का अधिकार नहीं। उन्हें जनता की इच्छा के अनुसार भारत या पाकिस्तान में शामिल होना चाहिये।[8]

अक्टूबर 1947 में मेहरचन्द्र महाजन जम्मू कश्मीर रियासत के दीवान बने। महाजन कांग्रेस को पसन्द नहीं करते थे। उन्होंने कहा था कि कांग्रेस के लोकप्रिय मंत्रिमण्डलों से मुझे घृणा है और जम्मू कश्मीर में वे ऐसा नहीं होने देंगे।[9]

---

6. डॉ. गौरीनाथ रस्तोगी : हमारा कश्मीर, पृष्ठ 9 Year ?
7. महीपाल सिंह : कश्मीर समस्या का इतिहास, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार, 23 दिसम्बर 2000, पृ. 3
8. महीपाल सिंह : कश्मीर समस्या का इतिहास, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार, 23 दिसम्बर 2000, पृ. 3
9. महीपाल सिंह : कश्मीर समस्या का इतिहास, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार, 23 दिसम्बर 2000, पृ. 3

5 अक्टूबर 1947 को शेख अब्दुल्ला ने कहा कि यदि कश्मीर का हित पाकिस्तान में मिलने से है तो हम मिलने से नहीं हिचकेंगे। पंडित नेहरू तथा कांग्रेस से दोस्ती इसमें आड़े नहीं आयेगी।[10] इन कथनों से स्पष्ट है कि कश्मीर रियासत भारत तथा पाकिस्तान के साथ विलय के सम्बन्ध में कोई भी स्थिर मत नहीं बना पायी थी। जिसका परिणाम आज आपके समक्ष स्पष्ट रूप से विद्यमान है।

विभाजन के तीन दिन पहले 12 अगस्त 1947 को महाराजा ने भारत तथा पाकिस्तान के साथ एक यथास्थिति समझौता किया ताकि आर्थिक तथा संचार सेवाओं के मामले में यथापूर्व स्थिति को बनाये रखा जाये। पाकिस्तान ने इस समझौते को स्वीकार कर लिया परन्तु भारत ने ऐसा नहीं किया तथा महाराजा को बातचीत के लिये आमंत्रित किया।

यथा स्थिति समझौते को पाकिस्तान द्वारा मान्यता देना केवल दिखावा मात्र था क्योंकि एक महीने के अन्दर ही पाकिस्तान ने कश्मीर में लोगों की आर्थिक गतिविधियाँ बन्द करके तथा अपनी तरफ से खाद्य पदार्थों, ईंधन की आपूर्ति न करके तंग करना आरम्भ कर दिया था। आर्थिक रूप से बहिष्कार का निर्णय करने से ऐसा लगता था कि पाकिस्तान कश्मीर को अपने में मिलाने के लिये ऐसा कर रहा था। तथापि महाराजा ने पाकिस्तान में मिलने में ऐसी कोई इच्छा नहीं दिखाई तथा उसकी इसी हिचकिचाहट के कारण पाकिस्तान के लिये ऐसा सोचना कल्पना से परे था कि कश्मीर एक मुस्लिम देश का हिस्सा न बने। परिणामस्वरूप इसने कश्मीर पर कबायली आक्रमण करवा दिया। अक्टूबर 1947 में सशस्त्र कबायलियों ने कश्मीर पर आक्रमण करना आरम्भ कर दिया। 15 अक्टूबर 1947 को लगभग 5000 आक्रमणकारियों ने कश्मीर के अन्दर ओवन के किले को घेरना आरम्भ कर दिया तथा 22 अक्टूबर को घुसपैठ तथा छापों ने कश्मीर पर एक पूर्ण आक्रमण का रूप धारण कर लिया।[11] इन छापामारों को पाकिस्तान स्पष्ट रूप से समर्थन दे रहा था तथा वास्तव में ये कबायली कपड़ों में पाकिस्तानी सैनिक ही थे। जिससे कश्मीर पर आक्रमणकारियों का अधिकार हो जाने का खतरा पैदा हो गया। कश्मीर के महाराजा ने भारत से सहायता के लिये प्रार्थना की। परन्तु भारत ने तब तक सहायता न देने का निर्णय लिया जब तक कि कश्मीर को भारत में शामिल करने का निर्णय नहीं हो जाता।[12]

---

10. महीपाल सिंह : कश्मीर समस्या का इतिहास, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार, 23 दिसम्बर 2000, पृ. 3
11. महीपाल सिंह : कश्मीर समस्या का इतिहास, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार, 23 दिसम्बर 2000, पृ. 3
12. Uma Singh : India, Pakistan relation is a historical perspective, World focus monthly discussion journal, Oct. Nov. Dec. 2001, p.p. 33

23 अक्टूबर को महाराजा हरि सिंह ने यह निर्णय लिया कि कश्मीर भारत में शामिल हो जायेगा। 26 अक्टूबर 1947 को उसने राज्य प्राप्ति के उपकरण पर हस्ताक्षर किये तथा कश्मीर को भारत का हिस्सा बना दिया। कश्मीर की विधिवत रूप से चुनी गई सरकार, जिसका मुखिया राजा था जिसके साथ पाकिस्तान भी यथास्थिति समझौता पहले ही कर चुका था, के इस कार्य से कश्मीर भारत का एक भाग बन गया। तत्काल ही भारत ने अपनी सेनायें कश्मीर भेज दी तथा भारत की सेना आक्रमणकारियों के विरुद्ध युद्ध में जुट गयी। प्रभावशाली तथा कुशल सैनिक संचालन के कारण ही भारत श्रीनगर को बचाने तथा आक्रमणकारियों को उरी की तरफ भगाने में सफल हो गया। इसी समय नेशनल कान्फ्रेंस के नेता शेख अब्दुल्ला तथा उनकी पार्टी ने इस हमले का विरोध किया तथा गली, मोहल्लों में घूम–घूम कर इस पाकिस्तानी हमले के विरोध में जनमत तैयार किया तथा कहा "हर कश्मीरी का पहला कर्त्तव्य आक्रमणकारियों से अपनी मातृभूमि की रक्षा करना है।[13]

भारत में शामिल होने सम्बन्धी दस्तावेज स्वीकार करते हुये भारत ने स्वेच्छा से यह माना कि जब कश्मीर में कानून व्यवस्था ठीक हो जायेगी तथा उसकी धरती से सभी आक्रमणकारी खदेड़ दिये जायेंगे तब भारत में मिलने का प्रश्न लोगों की स्वीकृति के लिये पेश किया जायेगा। तथापि पाकिस्तान ने भारत में कश्मीर के विलय की बात को स्वीकार नहीं किया तथा उसे "कायर शासकों द्वारा भारत सरकार की सहायता से कश्मीर के लोगों को धोखा" कहा।[14]

27 अक्टूबर 1947 को पाकिस्तान के गवर्नर जनरल एम. ए. जिन्ना ने पाकिस्तानी सेनाओं को कश्मीर में दाखिल हो जाने के लिये कहा। लेकिन बाद में जब पाकिस्तानी सेना के सेनापति ने यह पत्र लिखकर दिया कि इस प्रकार सीधा हमला करने से पाकिस्तानी सेना में कार्य कर रहे ब्रिटिश अफसर चले जायेंगे तो यह आदेश वापस ले लिया गया परन्तु पाकिस्तान ने आक्रमणकारियों को गुप्त सहायता देना जारी रखा। भारतीय गवर्नर जनरल माउन्ट बेटन की सहायता से भारत की सरकार ने पाकिस्तान द्वारा आक्रमणकारियों को दी जाने वाली सहायता को समाप्त करने के लिये बातचीत आरम्भ की। पहले पाकिस्तान ने कश्मीर के युद्ध में अपनी भूमिका से इन्कार कर दिया तथा फिर कश्मीर के भारत में शामिल होने को चुनौती दी। नवम्बर तथा दिसम्बर 1947 में दो बार बातचीत के बाद लार्ड माऊंट बेटन को विश्वास हो गया कि

---

13. महीपाल सिंह : कश्मीर समस्या का इतिहास, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार, 23 दिसम्बर 2000, पृ. 3
14. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर

कश्मीर समस्या को बातचीत के द्वारा सुलझाया नहीं जा सकता। इस बात को महसूस करते हुये भारत ने यह निर्णय लिया कि कश्मीर की समस्या को संयुक्त राष्ट्र संघ के सामने प्रस्तुत किया जाये।[15]

पहली जनवरी 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के अनुच्छेद 35 के अन्तर्गत भारत ने संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद के सामने कश्मीर के प्रश्न को प्रस्तुत कर प्रार्थना की कि वह पाकिस्तान की सरकार को निम्न बातें कहे –

(1) वह जम्मू तथा कश्मीर राज्य में पाकिस्तान की सरकार के कर्मचारियों, सैनिकों तथा असैनिकों द्वारा आक्रमणकारियों को किसी प्रकार की दी जाने वाली सहायता बन्द करे।

(2) पाकिस्तान के नागरिकों को जम्मू तथा कश्मीर की लड़ाई में भाग लेने से रोके।

(3) यह यकीनी बनाया जाये कि आक्रमणकारियों को

 (क) पाकिस्तान की भूमि को कश्मीर के विरुद्ध प्रयुक्त करने न दिया जाये तथा उन्हें वहाँ न रहने दिया जाये।

 (ख) सैनिक तथा दूसरी वस्तुओं की आपूर्ति न की जाये।

 (ग) किसी भी प्रकार की सहायता न दी जाये जिससे वर्तमान युद्ध लम्बा खिंच सके।

कश्मीर के प्रश्न पर पहले कुछ वाद विवाद में भारत ने कश्मीर के भारत में शामिल होने के औचित्य को सिद्ध किया परन्तु यह बात स्वीकार की कि अन्तिम हल के लिये पाकिस्तान को चाहिये कि वह सारे आक्रमणकारियों को वहाँ से निकाले। भारत ने यह बात स्वीकार की कि पाकिस्तान के निकल जाने पर वह कश्मीर में अपनी सेनाओं की संख्या कम से कम कर देगा जितनी सारे राज्य की सुरक्षा तथा प्रशासन के लिये पर्याप्त होगी तथा परिस्थितियों के सामान्य हो जाने के बाद वह वहाँ की लोकप्रिय सरकार तथा संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रतिनिधियों की देखरेख में मत संग्रह करवायेगा ताकि कश्मीर के विलय का प्रश्न हल किया जा सके। संयुक्त राष्ट्र संघ में पाकिस्तान के प्रतिनिधि मि. जफर उल्ला खान ने यह तर्क दिया कि कश्मीर का झगड़ा केवल उपमहाद्वीप के हिन्दुओं तथा मुसलमानों के बीच की गहरी कलह का दर्दनाक पहलू है तथा जिसे केवल मात्र दोनों ही समुदायों के शान्तिपूर्ण पृथक्करण द्वारा तथा कश्मीर पाकिस्तान को देकर हल किया जा सकता है। उसने कहा कि भारत ने कश्मीर को धोखे से अपने में शामिल

---

15. जाफी : कारगिल से कारगिल तक, दैनिक जागरण कानपुर, 11 जुलाई 1999

किया है। उसने कश्मीर समस्या को भारत तथा पाकिस्तान का झगड़ा कहा और कबायली आक्रमण में पाकिस्तान का हाथ होने से इन्कार किया।[16]

सुरक्षा परिषद के वाद–विवाद में भारत के दृष्टिकोण को अधिक समर्थन नहीं मिला। भारत के विचार में केन्द्रीय समस्या कश्मीर के आक्रमण में पाकिस्तान की संलिप्तता थी। इसके विपरीत सुरक्षा परिषद ने कश्मीर के लोगों के आत्मनिर्णय के अधिकार पर बल दिया तथा इस प्रकार कश्मीर के भारत में शामिल होने पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया, जिसने पाकिस्तान को इस विषय में आधिकारिता प्रदान की। अपने तरफ से भारत ने कश्मीर के लोगों से किया वायदा निभाना स्वीकार किया, परन्तु केवल तभी जब पाकिस्तान कश्मीर में से अपनी सेना, कबायली आक्रमणकारियों तथा दूसरे पाकिस्तानियों को हटा ले।[17]

सुरक्षा परिषद ने एक प्रस्ताव पास किया तथा कश्मीर के झगड़े की छानबीन करने के लिये एक आयोग की नियुक्ति कर दी। भारत तथा पाकिस्तान पर संयुक्त राष्ट्र आयोग नामक एक आयोग ने जून 1948 को अपना काम आरम्भ कर दिया। जब जुलाई में यह आयोग उपमहाद्वीप पहुँचा तो पाकिस्तान की सरकार ने इसे सूचना दी कि अभी दो महीने पहले पाकिस्तान की नियमित सेना को कश्मीर में भारत की सैनिक कार्यवाहियों के विरुद्ध भेजा गया है। आयोग ने मामले की छानबीन करने के बाद तथा भारत पाकिस्तान की सरकारों से बातचीत के बाद 3 अगस्त 1948 को अपना पहला प्रस्ताव पेश किया। इस प्रस्ताव को भारत ने स्वीकार किया, परन्तु पाकिस्तान ने अस्वीकार कर दिया। इसके बाद आयोग ने फिर बातचीत का सिलसिला आरम्भ किया तथा 11 दिसम्बर 1948 को नये प्रस्ताव जारी किये। इन प्रस्तावों को भारत तथा पाकिस्तान दोनों ने ही स्वीकार कर लिया तथा इसके अन्तर्गत दोनों देशों ने 1 जनवरी 1949 से युद्ध विराम स्वीकार किया।[18]

प्रस्तावित समझौते की योजना इस प्रकार थी –

(1) पाकिस्तान कश्मीर से अपनी सभी सेनाओं को हटा लेगा तथा कबायली लोगों तथा पाकिस्तानियों को हटाने के लिये प्रयत्न करेगा जो वहाँ के सामान्य नागरिक नहीं थे।

(2) एक अन्तिम हल से पूर्व पाकिस्तानी सेनाओं द्वारा खाली किये गये क्षेत्र के प्रशासन

---

16. K. P. Mishra : The Role of the United Nations in the Indo-Pakistan conflict, 1971
17. Uma Singh : India-Pakistan relation in a historical perspective, World focus monthly discussion journal, Oct. Nov. Dec. 2001, p.p. 33
18. Major General Akbar Khan : Raiders in Kashmir, Army Publishers, Delhi, 1970, p.p. 10

स्थानीय अधिकारियों द्वारा संयुक्त राष्ट्र आयोग के तत्वावधान में चलाया जायेगा।

(3) पहले चरण के पूर्ण हो जाने के बाद आयोग भारत की सरकार को एक सूचना द्वारा कश्मीर से अपनी भारी सेनाओं को धीरे–धीरे हटाने के लिये कहेगा।

(4) भारत सरकार, कश्मीर के उन क्षेत्रों में जो युद्ध विराम के समय उसके नियंत्रण में हैं केवल उतनी ही सेनायें रखेगा जो वहाँ की कानून व्यवस्था को बनाये रखने के लिये आवश्यक होंगी।

(5) जम्मू तथा कश्मीर की भावी स्थिति लोगों की इच्छाओं के अनुसार ही निश्चित की जायेगी।

सुरक्षा परिषद ने 5 जनवरी 1949 को एक प्रस्ताव पास किया जिसके द्वारा यह निर्धारित किया कि

(क) जम्मू तथा कश्मीर की सरकार की देखरेख के अन्तर्गत मत संग्रह करवाया जायेगा।

(ख) राज्य की सुरक्षा करने के लिये भारत की सेना को अधिकार की सुनिश्चितता प्रदान की जायेगी।

(ग) कश्मीर से पाकिस्तानी सेनाओं तथा इसके तत्वों को निकाला जायेगा।

भारत तथा पाकिस्तान दोनों ही इन सुझावों को लागू नहीं कर सके। पाकिस्तान ने स्पष्ट रूप से अपनी सेनाओं को हटाने से इन्कार कर दिया तथा इस प्रकार भारत के अनुसार प्रस्ताव अक्रियाशील तथा प्रभावहीन बना दिया। पाकिस्तान चाहता था कि दोनों ही देशों की सेनायें एक ही समय में हटा लीं जाये परन्तु भारत इस बात पर अड़ा था कि पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर (POK) में सेना का हटाया जाना मत संग्रह की पहली शर्त है। राष्ट्र संघ आयोग, भारत तथा पाकिस्तान की इस समस्या को नहीं सुलझा सका। अगस्त 1949 को इसने एक प्रस्ताव दिया कि मतभेदों को मध्यस्थता के लिये सौंपा जाये। पाकिस्तान ने इस सुझाव को मान लिया, परन्तु भारत ने अस्वीकार कर दिया। 1949 के अन्त तक भारत तथा पाकिस्तान के मध्य समन्वय के अभाव में आयोग ने अपनी हार स्वीकार कर ली तथा 9 दिसम्बर 1949 को इसकी अन्तिम रिपोर्ट में यह सुझाव दिया गया कि इस आयोग के स्थान पर एक मध्यस्थ की नियुक्ति की जाये।[19]

---

19. Major General Akbar Khan : Raiders in Kashmir, Army Publishers, Delhi, 1970, p.p. 10

आयोग की सिफारिश पर संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद ने अपने अध्यक्ष जनरल एम. सी. नाहटन को मध्यस्थ नियुक्त किया। उसने भारत तथा पाकिस्तान के सामने कुछ प्रस्ताव रखे, परन्तु उनकी स्वीकृति हासिल न कर सका। 12 अप्रैल 1950 को सुरक्षा परिषद ने आस्ट्रेलिया के ओवन डिक्सन को कश्मीर को सेना विहीन करने के लिये नियुक्त किया, परन्तु वह भी सफल नहीं हुये। 15 अगस्त 1950 को डिक्सन ने अपनी रिपोर्ट पेश की तथा यह सुझाव दिया कि क्षेत्र के आधार पर मत संग्रह करवाया जाये। इसके विकल्प में उसने यह सुझाव दिया कि मत संग्रह करवाये बिना ही कश्मीर का विभाजन कर दिया जाये। भारत तथा पाकिस्तान दोनों ने ही इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। भारत ने इस प्रस्ताव को इसलिये अस्वीकार कर दिया क्योंकि इसमें पाकिस्तान को आक्रमणकारी नहीं कहा गया था तथा भारत व पाकिस्तान को एक समान ही माना गया था। पाकिस्तान ने इसे इसलिये अस्वीकार कर दिया क्योंकि इसने कश्मीर में पूर्ण मत संग्रह का समर्थन नहीं किया था। डिक्सन के तथ्यपरक विचारों से यद्यपि पश्चिमी दृष्टिकोण मेल खाता था परन्तु इस बात को स्वीकार नहीं किया गया कि राजनीतिक आधार पर मत संग्रह न करवाया जाये। इसलिये डिक्सन ने यह सुझाव दिया कि इस झगड़े को बातचीत करने वाले दलों को ही वापिस कर दिया जाये। परन्तु सुरक्षा परिषद के विचार कुछ और ही थे इसलिये इसने एक अन्य अमरीकी फ्रैंक पी. ग्राहम को मध्यस्थ नियुक्त किया।

ग्राहम मिशन दो वर्ष तक चला तथा इसका उस उपमहाद्वीप में कितने ही अन्य महत्वपूर्ण घटनाओं के साथ संयोग हुआ। जैसे – जुलाई 1951 में भारत की सेनाओं की पाकिस्तानी सीमाओं की ओर हलचल, पाकिस्तान के प्रधानमंत्री लियाकत अली खान की हत्या तथा कश्मीर की संवैधानिक सभा का आयोजन। तथापि बड़ी ही सहनशीलता के साथ काम करके ग्राहम भारत तथा पाकिस्तान के मध्य मतभेद के क्षेत्रों में कमी करने में सफल हो गये। परन्तु इस काल में ग्राहम द्वारा प्रस्तुत की गयी पाँच रिपोर्टें तथा दो सुरक्षा परिषद के प्रस्ताव, दोनों ही देशों की महत्वपूर्ण माँगों की पूर्ति नहीं करते थे, इसलिये भारत तथा पाकिस्तान दोनों ही देशों ने इन्हें अस्वीकार कर दिया। इस प्रकार विद्यमान परिस्थितियों के अन्तर्गत ग्राहम मिशन भी कश्मीर की समस्या को नहीं सुलझा सका। ग्राहम ने यह सुझाव दिया कि झगड़े के निपटारे के लिये भारत तथा पाकिस्तान की द्विपक्षीय बातचीत होनी चाहिये।[20]

---

20. Jasjit Singh : War clouds over India-Pakistan, World focus monthly discussion jounal, Oct. Nov. Dec. 2001, p.p. 6

1953 की गर्मियों में भारत तथा पाक ने कश्मीर समस्या को सुलझाने के लिये द्विपक्षीय बातचीत आरम्भ की। जून 1953 को "क्वीन कॉरोनेशन" के समय पर जो पहली द्विपक्षीय बातचीत आरम्भ हुयी वह जुलाई में कराची तथा अगस्त में दिल्ली में जारी रही। बातचीत सद्भावना के वातावरण में आरम्भ हुयी परन्तु शीघ्र ही नकारात्मक बातों के उभरने से इसमें कटुता आ गई। 9 अगस्त 1953 को शेख अब्दुल्ला को पदच्युत कर दिया गया तथा उन्हें राष्ट्र विरोधी गतिविधियों के कारण भारत की सरकार के द्वारा नजरबन्द कर दिया गयाा। फरवरी 1954 में कश्मीर की संवैधानिक सभा ने राज्य के भारत में विलय की एकमत होकर पुष्टि कर दी। इन दोनों बातों ने वातावरण सन्देहास्पद बना दिया। बातचीत को अधिक क्षति तब पहुँची जब 1954 में अमरीका द्वारा पाकिस्तान को भारी मात्रा में सैनिक साजो सामान देने तथा पाकिस्तान द्वारा अमरीका की दक्षिण पूर्वी एशिया के लिये बनाई गयी सैनिक सन्धि में शामिल होने की घोषणा की गयी। पाकिस्तानी गनर्वर जनरल गुलाम मुहम्मद द्वारा किये गये प्रयत्नों द्वारा तथा भारत द्वारा सद्भावना का उत्तर सद्भावना से देने के बावजूद कश्मीर समस्या के हल की दिशा में कोई प्रगति नहीं की जा सकी। अमरीका द्वारा प्रायोजित सैनिक गुट में शामिल होने का पाकिस्तान के निर्णय को भारत ने अपने ऊपर दबाव डालने का उपकरण माना। परिणामस्वरूप कश्मीर पर भारत की स्थिति को तथा कश्मीर के भारत में विलय को अलंघनीयता कहा जाने लगा। सन् 1956 में पाकिस्तान में सरकार बदलने से तथा प्रधानमंत्री चौधरी मोहम्मद अली द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ में कश्मीर समस्या फिर भड़काने के प्रयत्न, स्पष्ट तथा पाकिस्तान के नये गुट मित्रों की सहायता से दोबारा आरम्भ करने के निर्णय में द्विपक्षीय बातचीत के युग को समाप्त कर दिया भारत ने कश्मीर में अब मत संग्रह की माँग को इस आधार पर अस्वीकार कर दिया कि कश्मीर की संवैधानिक सभा ने कश्मीर के भारत में विलय की पुष्टि कर दी है। कश्मीर के संविधान के अनुच्छेद 111 में कहा गया है कि "जम्मू तथा कश्मीर का राज्य भारतीय संघ का अटूट अंग है तथा रहेगा।"[21] इससे पाकिस्तान का रवैया और भी कठोर हो गया। परिणामस्वरूप भारत तथा पाकिस्तान, कश्मीर के प्रश्न पर सुरक्षा परिषद में एक बार फिर तू–तू, मैं–मैं पर उतर आये।

1957 के आरम्भ में ही सुरक्षा परिषद में भारत तथा पाकिस्तान के बीच कश्मीर के

---

21. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 366

विलय के प्रश्न पर तीव्र झड़पें हुयी। पाकिस्तान ने अपने विदेशमंत्री फिरोज खान द्वारा जम्मू कश्मीर की विधानसभा की पुष्टि तथा जम्मू कश्मीर के संविधान को अवैध कार्यवाही कहा। मि. नून ने तर्क प्रस्तुत किया "क्योंकि कश्मीर के भविष्य का अभी फैसला होना है तथा मत संग्रह होना अभी शेष है इसलिये इस प्रकार के कार्यों का कोई वैधानिक औचित्य नहीं है।"(22) उन्होंने कश्मीर में भारत की भूमिका पर भी प्रश्न उठाया तथा सुरक्षा परिषद को कहा कि वह भारत को 1948 तथा 1949 के सुरक्षा परिषद के प्रस्तावों को लागू करने के लिये कहे।

पाकिस्तान के दबाव के अधीन सितम्बर 1957 में पश्चिमी शक्तियों ने सुरक्षा परिषद से यह प्रार्थना की कि वह फ्रैंक पी. ग्राहम को पुनः अपना प्रतिनिधि नियुक्त करें जो कश्मीर समस्या पर संयुक्त राष्ट्र के प्रस्तावों को लागू करवाने के लिये उचित कदम उठाने के लिये दोनों देशों को सिफारिश करें। भारत तथा पाकिस्तांन की सरकारों के साथ बातचीत कर लेने के बाद ग्राहम ने मार्च 1958 में अपनी रिपोर्ट पेश की। उसने कश्मीर की सीमा के पाकिस्तानी ओर संयुक्त राष्ट्र संघ की सेनाओं को ठहराने तथा भारत तथा पाकिस्तान को प्रधानमंत्री के स्तर की बैठक करने का सुझाव दिया। पाकिस्तान ने इस सुझाव को स्वीकार कर लिया परन्तु भारत ने अस्वीकार कर दिया। संयुक्त राष्ट्र ने इस प्रकार कोई कार्यवाही नहीं की तथा 1962 तक फिर कश्मीर की समस्या को सुरक्षा परिषद में नहीं उठाया गया।

1962 ई. में चीन तथा भारत में सीमा युद्ध ने भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्धों को और भी तनावपूर्ण कर दिया। पाक द्वारा चीन को खुला समर्थन, चीन तथा पाकिस्तान में आपसी सम्बन्ध तथा अमरीका और भारत के बीच आपसी सद्भाव समझबूझ के पैदा हो जाने के कारण जिसमें अमेरिका द्वारा अस्त्र–शस्त्र दिया जाना भी शामिल था, ने भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्धों को ओर भी अधिक जटिल तथा संकटपूर्ण बना दिया। तथापि अमेरिका तथा ब्रिटेन ने दक्षिण एशिया की इस परिवर्तित स्थिति को, जो कि हिमालय की सीमा पर चीन का लोकतांत्रिक भारत पर आक्रमण के कारण पैदा हुयी थी, कश्मीर की समस्या पर भारत तथा पाकिस्तान के बीच झगड़े को कुछ समय के लिये टाल देने के लिये प्रयुक्त करने का निर्णय किया। वह अपने प्रतिनिधियों डंकन सैडी तथा एवरआल हैरीमैन द्वारा नवम्बर 1962 में भारत तथा पाकिस्तान के बीच कश्मीर की समस्या पर द्विस्तरीय बातचीत करने का समझौता करवा सकने में सफल हो गया।(23)

22. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 367
23. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 366

1964 ई. में पाकिस्तान ने एक बार फिर कश्मीर के प्रश्न पर बहस करने के लिये सुरक्षा परिषद से प्रार्थना की। दो असफल विवादों के बाद सुरक्षा परिषद ने 18 मई 1964 को एक प्रस्ताव पास किया जिसके द्वारा उसने यह सुझाव दिया कि कश्मीर की समस्या को भारत और पाकिस्तान परस्पर बातचीत के द्वारा हल कर लें। इसे हम कश्मीर के प्रश्न पर सुरक्षा परिषद का अन्तिम प्रस्ताव कह सकते हैं। सुरक्षा परिषद की कश्मीर के मामले में हुये विवाद पर टिप्पणी करते हुये चार्ल्स होमस्थ ने ठीक ही लिखा है कि "इन वाद विवादों ने भारत तथा पाकिस्तान दोनों ही सरकारों को ये अवसर प्रदान किये कि वे अपनी–अपनी परस्पर विरोधी स्थितियों के प्रचार पर बड़ी शक्तियों की प्रतिक्रियाओं का परीक्षण करें तथा अपने लोगों के सामने अपने राष्ट्रीय हितों की प्राप्ति के लिये अपने कौशल तथा दृढ़ता का प्रदर्शन करें। इससे अधिक की आशा भी नहीं की गई थी तथा न ही प्राप्त किया जा सका।[24]

1964 ई. के मध्य तक पाकिस्तान को यह अहसास हो गया कि सुरक्षा परिषद में कश्मीर का मामला उठाना व्यर्थ है। कश्मीर की प्राप्ति के लिये पश्चिम के साथ की गई सन्धियों को करने पर भी कश्मीर का हाथ में न आ पाना, सुरक्षा परिषद में अपने प्रयत्नों की असफलता, भारत में शेख अब्दुल्ला की नई भूमिका पर असन्तोष, यह विचार कि नेहरू की मृत्यु के पश्चात् भारत का नेतृत्व कमजोर हो गया है, अक्टूबर 1962 के चीन आक्रमण के बाद भारत में बढ़ती हुई सैनिक शक्ति, भारत के शत्रु के साथ मित्रता, पाकिस्तान की श्रेष्ठ सैनिक शक्ति में विश्वास तथा भारत के विरुद्ध सहायता का चीन द्वारा आश्वासन, इन सभी बातों ने पाकिस्तान को कश्मीर को बलपूर्वक हथियाने के लिये उकसाया। उसने भारतीय सीमाओं पर तनाव पैदा करना आरम्भ कर दिया, विशेषतया कश्मीर की युद्ध विराम रेखा के आस–पास। मार्च–अप्रैल 1965 को रण कच्छ में टोह लेने का एक सैनिक अभियान आरम्भ किया गया तथा कश्मीर में सशस्त्र घुसपैठिये भेजकर वहाँ अशान्ति फैलाने का कार्यक्रम तैयार किया। उन्हें ये निर्देश दिये गये कि वे भारत के हिस्से वाले कश्मीर में षड़यंत्रों के द्वारा अशान्ति फैला दें। पाकिस्तान की तरफ से इस योजना को कार्यान्वित करने के प्रयत्न के कारण ही अगस्त सितम्बर 1965 में भारत तथा पाकिस्तान के मध्य युद्ध आरम्भ हो गया।

अगस्त 1965 में पाकिस्तान ने बड़ी संख्या में भारतीय कश्मीर में लोगों को भारत के

---

24. Dinesh Chandra Jha : Indo-Pak Relations (Patna 1972) and G.W. Chaudhary : Pakistan with India (Meerut 1971)
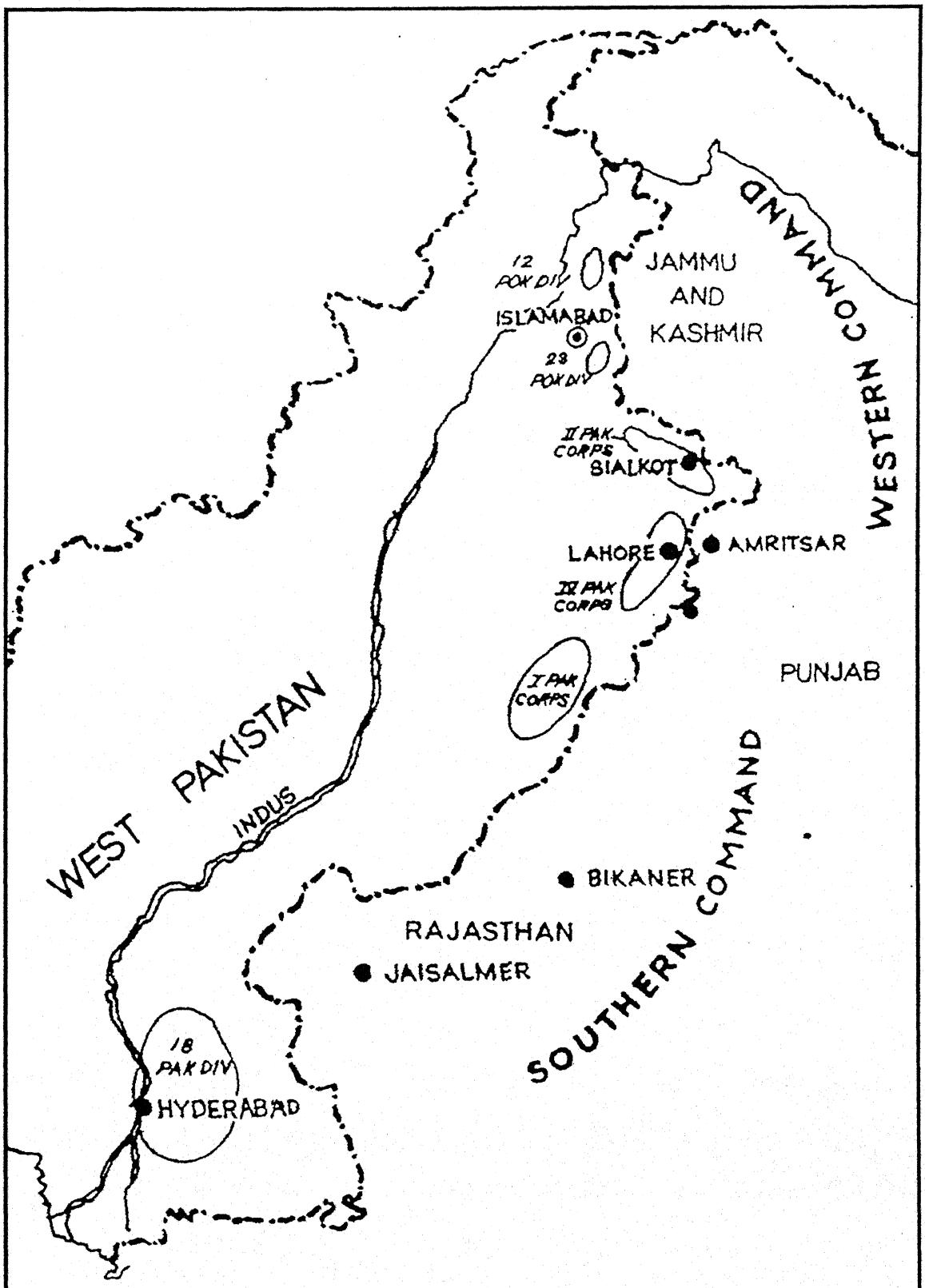
भारत एवं पाकिस्तान के मध्य नियंत्रण रेखा

विरुद्ध भड़काने के लिये तथा षड़यंत्रों द्वारा जम्मू कंश्मीर में गड़बड़ी फैलाने के लिये सशस्त्र घुसपैठिये भेजे। उनके द्वारा पाकिस्तान कुछ गड़बड़ फैलाने में सफल भी हो गया, परन्तु भारत द्वारा उठाये गये सामयिक कुशल कदमों तथा कश्मीर की सीमा को बन्द कर देने के कारण बहुत से घुसपैठियों को पकड़ लिया गया। इस प्रतिक्रिया से परेशान होकर पाकिस्तान की सेनाओं ने छम्ब सैक्टर में भारतीय चौकियों पर आक्रमण कर दिया। भारत ने सुरक्षा परिषद में पाकिस्तान को अपनी सेनाओं को हटा लेने के लिये निर्देश दिये जाने के लिये अपील की, परन्तु भारत सुरक्षा परिषद के पक्षपातपूर्ण व्यवहार के कारण निराश हो गया जिसने पश्चिमी दबावों के अधीन पाकिस्तान को आक्रामक घोषित करने से इन्कार कर दिया।[25]

इस पक्षपातपूर्ण व्यवहार से चिढ़कर भारत ने आक्रमणकारी के विरुद्ध सैनिक कार्यवाही का निर्णय लिया। 15 अगस्त 1965 को कश्मीर में युद्ध विराम रेखा को पार करने के बाद भारतीय सेना मैदान में आ गयी तथा उन्होंने सामरिक महत्व के स्थान कारगिल, टिथवाल, हाजीपीर, उड़ी, पुंछ आदि स्थानों पर कब्जा कर लिया जहाँ से पाकिस्तानी घुसपैठिये कश्मीर भेजे जा रहे थे। 1 सितम्बर 1965 को पाकिस्तान ने अखनूर की तरफ से जम्मू तथा कश्मीर की पश्चिमी सीमा के छम्ब सैक्टर की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा को पार कर भारत पर आक्रमण कर दिया। भारत की सेनाओं ने इस आक्रमण का मुकाबला किया किन्तु उन्होंने महसूस किया कि छम्ब के क्षेत्र पर से पाकिस्तानी फौजों का दबाव कम करने के लिये यह आवश्यक है कि पाकिस्तान के विरुद्ध पश्चिमी मोर्चे को भी खोल दिया जाये। इसलिये 5 सितम्बर को भारत ने लाहौर सेक्टर में तीनों तरफ से आक्रमण कर दिया तथा एक दिन बाद सियालकोट सेक्टर पर हमला कर दिया। इससे इच्छित परिणाम ही निकले।[26]

इस प्रकार छम्ब क्षेत्र पर पाकिस्तान का दबाव तथा पाक अधिकृत कश्मीर में इसके मोर्चों में इसकी शक्ति में कमी हो गयी। तथापि इसका परिणाम यह निकला कि भारत तथा पाकिस्तान के बीच सम्पूर्ण परन्तु अघोषित युद्ध शुरू हो गया। यह युद्ध 23 सितम्बर 1965 तक चला जब संयुक्त राष्ट्र संघ महासचिव जनरल यू था, द्वारा शान्ति के लिये मध्यस्थता हेतु प्रयत्नों

---

25. Uma Singh : India-Pakistan relation in a historical perspective, World focus monthly discussion journal, Oct. Nov. Dec. 2001, p.p. 33
26. Russel Brians : The Indo-Pak Conflict (London 1968) and William J. Borns : India, Pakistan and the great powers (New York, 1972)

द्वारा सुरक्षा परिषद प्रस्ताव को पूरकता प्रदान हुयी तथा दोनों ही देश युद्ध विराम के लिये मान गये। भारत ने सुरक्षा परिषद के युद्ध विराम के प्रस्ताव को तो मान लिया, परन्तु कश्मीर से सम्बन्धित प्रस्ताव को स्पष्ट रूप से अस्वीकार कर दिया। चीन को शामिल कर पाने में असफलता, भारत तथा पाकिस्तान दोनों ही को अमरीका तथा ब्रिटिश हथियारों की आपूर्ति का बन्द होना तथा भारी हानि ने पाकिस्तान को युद्ध विराम स्वीकार करने के लिये बाध्य कर दिया। भारत ने युद्ध विराम इसलिये भी स्वीकार कर लिया क्योंकि युद्ध के कारण इसके आर्थिक संसाधनों पर गम्भीर बोझ पड़ गया था तथा चीन के सन्दर्भ में भारत के भावी सुरक्षा हितों को अत्याधिक हानि पहुँचने का भय था। इस प्रकार 23 सितम्बर 1965 को युद्ध विराम के समझौते द्वारा 18 दिनों का भारत पाक युद्ध समाप्त हो गया।

युद्ध विराम ने युद्ध तो 22–23 सितम्बर की आधी रात को समाप्त कर दिया परन्तु भारत तथा पाकिस्तान सम्बन्धों को संचालित करने वाला वातावरण उग्र भावनाओं तथा तनाव से ग्रस्त रहा। सोवियत संघ ने ताशकन्द में भारत तथा पाकिस्तान की एक बैठक का सुझाव दिया ताकि वे अपने मतभेदों को आराम से शान्तिपूर्वक सुलझा सके। सोवियत संघ ने यह कार्यवाही भारत तथा पाकिस्तान के बीच मेल मिलाप करवाने के लिये की थी। सोवियत संघ के नेताओं ने यह महसूस किया कि भारत तथा पाकिस्तान के मतभेद एक तरफ तो चीन को शक्तिशाली बना रहे हैं तथा दूसरी तरफ दक्षिण एशिया में अपना प्रभाव बढ़ाने तथा उसे बनाये रखने के लिये, पश्चिमी शक्तियों की सहायता कर रहे हैं। इसको नियंत्रित करने के लिये सोवियत संघ ने भारत तथा पाकिस्तान को अपनी आपसी समस्यायें सुलझाने के लिये ताशकन्द में आमंत्रित किया।

25 नवम्बर 1965 को पाकिस्तान के विदेशमंत्री जुल्फिकार अली भुट्टो ने मास्को में एक प्रेस कान्फ्रेन्स में यह घोषणा की कि पाकिस्तान के राष्ट्रपति मि. अयूब खान भारत के प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री के साथ भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्धों पर आमूल–चूल बातचीत करने के इच्छुक हैं। 4 से 10 जनवरी 1966 तक ताशकन्द सम्मेलन हुआ इसमें सम्पन्न कुछ नियम निर्धारित किये गये जिन्हें ताशकन्द समझौते के नाम से जाना जाता है।[27]

ताशकन्द घोषणाओं के बाद कश्मीर तथा दूसरी समस्याओं पर भारत तथा पाकिस्तान के मध्य द्विपक्षीय बातचीत की सम्भावनायें पैदा हो गई। 15 अगस्त 1968 को श्रीमती गाँधी ने एक अनाक्रमण संधि का प्रस्ताव पेश किया तथा 1 जनवरी 1969 को इस समझौते के पूरक के रूप

27. General Ayub Khan : Friends Not Masters (London, 1967)

में प्रस्ताव पेश किया कि पाकिस्तान के साथ समस्त झगड़ों की जाँच पड़ताल करने के लिये एक संयुक्त मशीनरी की स्थापना की जाये। किन्तु इससे पूर्व कि इन प्रस्तावों को लागू किया जा सके, सातवें दशक के अन्त तथा आठवें दशक के आरम्भ में कुछ ऐसी घटनायें घट गयी जिससे भारत तथा पाकिस्तान के लिये इस दिशा में कोई काम करना कठिन हो गया। पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) में संकट पैदा हो जाने तथा परिणामस्वरूप बांग्लादेश की मुक्ति के मुद्दे ने स्थिति को और बिगाड़ दिया तथा दिसम्बर 1971 को दोनों ही देश एक अन्य युद्ध में संलिप्त हो गये। तथापि इस युद्ध में कश्मीर की समस्या नहीं उभरी। पाकिस्तान की प्रेस तथा नेताओं ने इसे समाचार पत्रों में जीवित रखा ताकि जनता का समर्थन प्राप्त हो सके तथा उनकी तर्क शक्ति को बढ़ाया जा सके। परन्तु वास्तविक व्यवहार में संयुक्त राष्ट्र में इस समस्या को उठाने का कोई गम्भीर प्रयत्न नहीं किया गया। बांग्लादेश के संकट ने पाकिस्तान के शासकों को कश्मीर के साथ–साथ इस समस्या से ही उलझाये रखा तथा 1971 के युद्ध में उनकी हार ने उन्हें पूर्णतया हतोत्साहित कर दिया।

1972 में प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी तथा मि. जुल्फिकार अली भुट्टो ने शिमला सम्मेलन में उपस्थित होकर बहुत ही दबी जवान में कश्मीर समस्या का जिक्र किया परन्तु मूल रूप से शिमला सम्मेलन अन्य सम्बन्धों तथा सीमा विवाद पर मूल रूप से केन्द्रित था। परन्तु शिमला समझौते की धारा IX में एक उपधारा सम्मिलित कर इसमें कहा गया था कि जम्मू एवं कश्मीर में 17 दिसम्बर 1971 के युद्ध विराम के परिणामस्वरूप नियंत्रण रेखा का दोनों देश सम्मान करेंगे इसमें किसी भी तरह की पूर्व मान्य स्थिति का ध्यान नहीं रखा जायेगा।[28]

इसके पश्चात् लगातार शीत एवं उग्र रूप में कश्मीर समस्या हमारे मध्य उपस्थित है जो कारगिल संघर्ष, पोखरन परीक्षण या सीमा पर गोलीबारी के रूप में उग्र रूप धारण करती है तो लाहौर बस यात्रा आगरा शिखर वार्ता के मध्य शीत कालीन या मैत्री के युग के आरम्भ करती है परन्तु रात्रि के पश्चात् दिन के अटल नियम की तरह भारत पाक सम्बन्धों में कश्मीर समस्या भी उग्र तथा मैत्री के द्वैध के मध्य लगातार लगभग 55 वर्षों से हमारे मध्य उपस्थित है।

---

28. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 373

कश्मीर का सामरिक महत्व

कश्मीर पर केवल पाकिस्तान की निगाह नहीं है पाकिस्तान के माध्यम से दुनिया की तमाम ताकतें कश्मीर को अपने–अपने स्वार्थ के नजरिये से देखती हैं और यही कारण है कि पिछले 55 वर्षों से भारत का अभिन्न अंग होने के बावजूद पाकिस्तान और दुनिया के तमाम देश इसे एक विवादित क्षेत्र कहने से बाज नहीं आते और हर मौके पर मध्यस्थ के बहाने अपनी दखलंदाजी के लिये उतावले नजर आते हैं। पाकिस्तान पिछले पाँच दशकों से गैरकानूनी ढंग से कश्मीर का आधा हिस्सा दबाये हुये है और चार बार लड़ाई में मुँह की खाने के बावजूद इसी प्रयास में रहता है कि किस तरह कश्मीर पर प्रभुत्व स्थापित किया जाये। परदे के पीछे से उसकी सहायता के लिये चीन तथा अमरीका जैसी महाशक्तियाँ है जो पाकिस्तानी भड़काऊ क्रियाओं की ओर ध्यान नहीं देती है और जब भारत अपने क्षेत्र को बचाने का प्रयास करता है तो एकाएक चिंता का विषय, शांति बनाये रखने और आपसी बातचीत के माध्यम से हल ढूढ़ने का राग अलापने लगती है। इनका असली मकसद यही है कि मध्य एशिया में अशान्ति रहे एवं महाशक्तियाँ अपना खेल खेलती रहें।(29) सोवियत संघ के विखंडन और अफगानिस्तान के बर्बाद हो जाने के बाद अब इन ताकतों की दृष्टि में मोहरे के रूप में उपयोग करने के लिये भारत एवं पाकिस्तान ही हैं और इसके लिये कश्मीर से बेहतर मुद्दा और अवसर कहाँ मिलेगा।

जो लोग मात्र ये सोचते हैं कि कश्मीर को मात्र पाकिस्तान ही मुद्दा बनाये हुये है वह भूल करते हैं और इसके सामरिक महत्व को भी नजरंदाज करते हैं। भारत के आजाद होते ही इन ताकतों ने अपना खेल आरम्भ कर दिया था।

सोवियत संघ के विघटन से पूर्व तो अमरीका और चीन इस क्षेत्र में अपने सैनिक अड्डे तक बनाने की सोच रहे थे। शीत युद्ध के दौरान अमरीका को ऐसा स्थान चाहिये था जहाँ से वह चीन एवं सोवियत संघ की गतिविधियों पर नजर रख सके। यही कारण है कि 1965 एवं 1971 के युद्धों में पाकिस्तान की अमरीका ने भरपूर मदद की थी एवं हथियार, टैंक एवं वायुयान दिये थे। अमरीका जैसे लोकतांत्रिक देश ने एक सैन्य तानाशाही की खुलकर सहायता की थी और वह भी भारत जैसे संसार के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश के खिलाफ। उस वक्त अमरीका ने अपने स्वार्थों के चलते वह सब किया जिसकी उससे उम्मीद नहीं थी। यही नहीं कश्मीर को

---

29. महादेव चौहान : कश्मीर का सामरिक महत्व, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार, 5 जून 1999

भारत–पाकिस्तान के बीच विवाद का विषय बनाने, संयुक्त राष्ट्र संघ का हस्तक्षेप करने तथा पहली जनवरी 1949 को लागू हुये युद्ध विराम से लेकर अब तक संयुक्त राष्ट्र के सैन्य पर्यवेक्षकों की कारगुजारियों से भी साफ हो जाता है कि संयुक्त राष्ट्र संघ सहित संसार की तमाम ताकतें पाकिस्तान की सहायता के लिये सक्रिय है। कारगिल, द्रास बटालिक में सैकड़ों पाकिस्तानी प्रशिक्षित आतंकवादी अफगानी, तालिबानी एवं पाक सेना के सिपाही घुस आये, लेकिन संयुक्त राष्ट्र अमरीका, चीन, ब्रिटेन या यूरोपीय देशों में से किसी ने भी पाकिस्तान से यह नहीं कहा कि ऐसा मत करो। अब रूस एवं अमरीका भारत के पक्ष में बयान दे रहे हैं।[30]

वास्तव में ये सारे कूटनीतिक संघर्ष पिछले पचास वर्षों से पाकिस्तान के द्वारा तमाम देश भारत के खिलाफ लड़ रहे हैं और कश्मीर इसमें एक मोहरा है। चीन कश्मीर एवं अरुणाचल प्रदेश में भारत के बड़े भू भाग को दबाये हुये है। जब तक भारत पाकिस्तान में टकराव बना रहेगा तब तक चीन निश्चिन्त है। इतना ही नहीं कश्मीर का एक बड़ा हिस्सा पाकिस्तान ने अपने कब्जे से चीन को दे दिया है, जिसमें कराकोरम मार्ग है। मजबूत भारत चीन के लिये चिन्ता का विषय बन सकता है। हालांकि भारत कभी हमलावर देश नहीं रहा है इसने हमले झेले है किये नहीं।

अमरीका चीन के खिलाफ है। यह बात अलग है कि बाजार और आर्थिक हितों के मद्देनजर वह चीन से दोस्ती का दिखावा कर रहा है। अमरीका को आज सर्वाधिक खतरा चीन एवं भारत से ही नजर आता है। चीन के खिलाफ अमरीका ने पाकिस्तान के द्वारा अफगानिस्तान में तालिबानों से रूस समर्थक शासन को उखाड़ फेका। लेकिन तालिबान भरोसे लायक नहीं निकले और अमरीका के लिये खतरा बन गये। उधर सोवियत संघ से टूटे नये राष्ट्रों में अमरीका की दखल नहीं हो पायी है। इसलिये अमरीका चाहता है कि पाकिस्तान या फिर कश्मीर उसके अड्डे बन जायें जहाँ से चीन पर नजर रख सके लेकिन इन कूटनीतिक चालों को पाकिस्तान समझता है और वह अमरीका तथा चीन दोनों से एक दूसरे के खिलाफ सहायता लेने में सफल है। इसका सबसे बड़ा कारण कश्मीर ही है। चीन कश्मीर का भू भाग दबाये बैठा है जिसे वह किसी भी प्रकार से छोड़ना नहीं चाहता। इसलिये सामरिक दृष्टि से कश्मीर का महत्त्व और बढ़ गया है। अतः कश्मीर समस्या भारत एवं पाकिस्तान सम्बन्धों को ही प्रभावित नहीं कर रही है, वरन् प्रत्यक्ष रूप से सम्पूर्ण दक्षिण एशिया को एवं अप्रत्यक्ष रूप से एशिया एवं महाशक्तियों को भी प्रभावित कर रही है।

✦✦✦

---

30. महादेव चौहान : कश्मीर का सामरिक महत्व, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार, 5 जून 1999

द्वितीय अध्याय

अध्याय द्वितीय

भारतीय विदेश नीति एवं कश्मीर समस्या

भारतीय विदेश नीति को मूल रूप से दो भागों में बाँटकर देखा जा सकता है –

(1) सैद्धान्तिक

(2) व्यवहारिक

सैद्धान्तिक क्षेत्र में प्रत्येक विदेश नीति के अपने कुछ मूल्य होते हैं जिनके आधार पर प्रत्येक राष्ट्र अपने वैदेशिक सम्बन्धों को संचालित करता है। भारतीय विदेश नीति का सैद्धान्तिक पक्ष निम्न आधारों पर स्थापित किया गया है।

(1) भारत की अखण्डता व सम्प्रभुता की रक्षा

(2) भारतीयों के हितों का सम्वर्द्धन

(3) विश्व शान्ति

(4) गुट निरपेक्षता

(5) निःशस्त्रीकरण का समर्थन

(6) साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद व नस्लवाद का विरोध

(7) अफ्रो–एशियाई एकता का आवाहन करना

(8) संयुक्त राष्ट्र संघ के सिद्धान्तों में आस्था रखना

उपरोक्त तथ्य भारतीय विदेश नीति की नींव के पत्थर समझे जा सकते हैं।(1) ऐसा नहीं था कि ये सब बातें नेहरू जी के व्यक्तिगत आदर्शवादी रुझान से प्रेरित थी और उनका कोई सम्बन्ध भारत के राष्ट्रीय हित से नहीं था। जैसा कि नेहरू जी अक्सर कहा करते थे कि वर्तमान का आदर्शवाद भविष्य का यथार्थवाद होता है। ये सभी सिद्धान्त आपस में गुंथे हुये थे और अद्भुत ढंग से दूरदर्शी थे।

उपरोक्त सिद्धान्तों को आधार मानकर ही भारतीय विदेश नीति का संचालन होता है परन्तु पाकिस्तान जो लगातार अपने व्यवहार से हमें इन सिद्धान्तों के अतिरिक्त कार्य करने के लिये बाध्य करता है जिससे लगातार भारतीय विदेश नीति में सैद्धान्तिक एवं व्यवहार में अन्तर स्पष्ट होता है। भारत की विदेश नीति का सबसे कठिन भाग पाकिस्तान के साथ सम्बन्धों को

---

1. World Focus, Monthly Discussion Journal Oct., Nov., Dec. 2001 Page - 28

संचालित करना रहा है। जैसा कि के. आर. पिलाई का कहना है "निश्चित ही भारत के पाकिस्तान के साथ सम्बन्ध हमारी विदेश नीति का सबसे अधिक दृष्टव्य भाग है।" नार्मन डी. पामर ने भी कहा है "भारत के पाकिस्तान के साथ सम्बन्धों ने भारत की सारी विदेश नीति के प्रायः सभी पक्षों तथा इसके सारे अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण को प्रभावित कर रखा है। पाकिस्तान को यह डर था कि भारत ने बँटवारे को स्वीकार नहीं किया था अतः भारत पाकिस्तान को नष्ट करने का प्रयास करेगा।"[2] अतः पाकिस्तान ने भारत विरोधी विदेश नीति को अपनाया। कीर्थ कार्लड ने कहा "यह सुझाव देना नितान्त गलत होगा कि भारत के प्रति पाकिस्तान की भावना मात्र की भावना है। उनका रवैया गहरी प्रतिद्वन्द्विता के लिये अत्यन्त विद्वेषपूर्ण है।" इन आधारों के अनुसार भारतीय विदेश नीति ने पाकिस्तान सम्बन्ध एवं विशेष रूप में कश्मीर समस्या के लिये विशेष सावधानी के साथ अपने सम्बन्धों को स्थापित करने का प्रयास किया है जो क्रमशः निम्नांकित है –

नेहरू युगीन विदेश नीति एवं कश्मीर समस्या

नेहरू की विदेश नीति के प्रमुख सिद्धान्त स्वाधीनता संग्राम के दिनों में ही सुनिश्चित हो गये थे। व्यवहारिक रूप में इनको औपचारिक ढंग से पंचशील के नाम से परिभाषित किया। भले ही भारत व चीन के मध्य पंचशील के हस्ताक्षर अप्रैल 1954 में किये गये, परन्तु 1947 से लेकर 1954 तक भारत के अन्तर्राष्ट्रीय क्रियाकलाप इसी आधार पर संचालित व समायोजित होते रहे हैं।

पंचशील के पाँच सिद्धान्त निम्नलिखित हैं –

(1) सभी राष्ट्र एक दूसरे की प्रादेशिक अखण्डता व सम्प्रभुता का सम्मान करें।

(2) कोई राज्य दूसरे राज्य पर आक्रमण न करे और दूसरे की राष्ट्रीय सीमाओं पर अतिक्रमण न करे।

(3) कोई राज्य किसी दूसरे राज्य के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करे।

(4) प्रत्येक राज्य एक दूसरे के साथ समानता का व्यवहार करे तथा पारस्परिक हित में

---

2. Appadorai and M. S. Rajan : India's Foreign Policy and Relations (Delhi 1985) and Appadorai : Desnestic roots of Indian Foreign Policy. 1947-1972 (Delhi 1981)

Write full name

सहयोग प्रदान करे (अर्थात् न कोई देश बड़ा है और न ही छोटा)।

(5) सभी राष्ट्र शान्तिपूर्ण सह–अस्तित्व के सिद्धान्त में विश्वास करें तथा इसी सिद्धान्त के आधार पर एक दूसरे के साथ शान्तिपूर्ण रहे और अपनी पृथक सत्ता एवं स्वतंत्रता बनाये रखें।[3]

कुछ विद्वानों का मानना है कि पंचशील योजना नेहरू जी की आदर्शवादी रूमानियत का उदाहरण भर थी और कुछ नहीं। परन्तु यह बात अनदेखी नहीं की जानी चाहिये कि पंचशील की राजनयिक रणनीति भारतीय राष्ट्रीय हितों की यथार्थवादी कसौटी पर खरी उतरती है। भारत का विभाजन आजादी के साथ हो गया और पाकिस्तान के रजाकारों ने कश्मीर को हथियाने के लालच में भारतीय सीमा का अतिक्रमण किया। यह अघोषित युद्ध लगभग दो वर्ष तक चलता रहा। 1947 में सारा भारतीय भू भाग एक साथ स्वतंत्र नहीं हुआ था। रजवाड़ों की स्थिति संदिग्ध थी और गोवा, दीव, दमन, चन्द्रनगर व पाण्डिचेरी जैसे इलाके अंग्रेजों से इतर दूसरी औपनिवेशिक शक्तियों के अधिपत्य में थे।

स्वातन्त्रोत्तर काल में पाकिस्तान का यथास्थिति समझौता को मान्यता देना केवल दिखावा मात्र था क्योंकि एक माह के अन्दर ही इसने कश्मीर के लोगों की आर्थिक गतिविधियाँ बन्द करके तथा अपनी तरफ से खाद्य पदार्थों, ईंधन की आपूर्ति न करके तंग करना आरम्भ कर दिया। आर्थिक रूप से बहिष्कार का निर्णय करने से ऐसा लगता है कि पाकिस्तान कश्मीर को अपने में मिलाने के लिये ही ऐसा कर रहा था। तथापि महाराजा ने पाकिस्तान में मिलने की कोई इच्छा नहीं दिखाई तथा उसकी इसी हिचकिचाहट के कारण पाकिस्तान अपनी इच्छा की पूर्ति करने के लिये सैनिक दबाव डालने के लिये उत्सुक दिखाई देने लगा। पाकिस्तान के लिये ऐसा सोचना कल्पना से परे था कि कश्मीर एक मुस्लिम देश का हिस्सा न बने। परिणामस्वरूप इसने कश्मीर पर कबायली आक्रमण करवा दिया। अक्टूबर 1947 को यह प्रारम्भ हुआ।

23 अक्टूबर को महाराजा ने निर्णय लिया कि कश्मीर भारत में शामिल हो जायेगा। 26 अक्टूबर 1947 को उसने राज्य प्राप्ति के उपकरण पर हस्ताक्षर किये तथा कश्मीर को भारत का हिस्सा बना दिया। तथापि पाकिस्तान ने भारत में कश्मीर विलय को स्वीकार नहीं किया तथा इसे कायर शासकों द्वारा भारत सरकार की सहायता से कश्मीर के लोगों को धोखा कहा।'' 27

---

3. पुष्पेश पंत एवं श्रीपाल जैन : भारतीय विदेश नीति, मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ, पृ. 392
4. World Focus Monthly Discussion Journal Oct., Nov., Dec. 2001 Page - 28

अक्टूबर 1947 को पाकिस्तान के गवर्नर जनरल एम. ए. जिन्ना ने पाकिस्तान की सेनाओं को कश्मीर में दाखिल हो जाने के लिये कहा। लेकिन बाद में जब पाकिस्तानी सेना के सेनापति ने यह पत्र दिया कि इस प्रकार सीधा हमला करने से पाकिस्तानी सेना में काम कर रहे ब्रिटिश अफसर चले जायेंगे तो यह आदेश वापस ले लिया गया। परन्तु पाकिस्तान ने आक्रमणकारियों को गुप्त सहायता देना जारी रखा। चूँकि इस समय सत्ता तो भारतीयों के पक्ष में आ गयी थी परन्तु गवर्नर जनरल के रूप में कार्य कर रहे माउन्ट बेटन का ही अधिक प्रभाव दिखाई पड़ता था।[5]

कश्मीर समस्या को जनवरी 1948 में संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के अनुच्छेद 35 के अन्तर्गत भारत ने संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद के समक्ष प्रस्तुत किया। शायद वे यह सोचते थे कि संयुक्त राष्ट्र पाकिस्तान की इस कार्यवाही की निन्दा करेगा। इससे कश्मीर विलय के सम्बन्ध में भारत की राजनीतिक तथा कानूनी स्थिति मजबूत होगी। नेहरू जी यह भी मानते थे कि इस मुद्दे के स्वरूप को देखते हुये इस विवाद पर संयुक्त राष्ट्र की घोषणाओं से भारत की एकता और अखंडता के प्रति पाकिस्तान की कार्यवाहियों पर अंकुश लगेगा। संयुक्त राष्ट्र में संयुक्त राज्य और ब्रिटेन का दबदबा था, इसलिये संयुक्त राष्ट्र ने ब्रिटिश आंकलनों के आधार पर भारत की इस शिकायत पर नकारात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त की थी। ब्रिटिश रवैया स्पष्ट रूप से पाकिस्तान का समर्थक था। सन् 1947 और 1958 में कश्मीर मुद्दे पर सुरक्षा परिषद में की गई बातचीत से यह प्रवृत्ति स्पष्ट रूप से जाहिर होती है कि संयुक्त राष्ट्र भारत और पाकिस्तान के इस क्षेत्र से सम्बन्धित दावों को बराबर विवादास्पद समझ रहा था और स्वयं ब्रिटिश द्वारा पारित नियमों के संदर्भ में भारत में जम्मू और कश्मीर के संवैधानिक तथा कानूनी विलय की उपेक्षा कर रहा था। तब नेहरू जी को फरवरी 1948 में यह समझ में आया कि संयुक्त राष्ट्र कश्मीर मुद्दे पर भारत के प्रतिकूल भूमिका निभा रहा है। अपनी बहन विजयलक्ष्मी पंडित को 16 फरवरी 1948 को लिखे पत्र में यह टिप्पणी की कि "मैं यह कहना चाहूँगा कि हमें ऐसी अनपेक्षित घटनाओं के लिये तैयार रहना चाहिये। मैं यह सोच भी नहीं सकता था कि सुरक्षा परिषद इस प्रकार से पक्षपातपूर्ण तथा तुच्छ रवैया अपनायेगी। यह आशा की जाती है कि यह संगठन विश्व में व्यवस्था बनाये रखेगा। हमें इस बात की भी हैरानी नहीं होनी चाहिये कि समूचा विश्व टुकड़ों

---

5. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 363

में बँट रहा है। संयुक्त राज्य और ब्रिटेन ने ऐसी घृणित भूमिका निभाई। मैंने इस बारे में एटली (क्लिमेंट एटली, ब्रिटेन के प्रधानमंत्री) के सामने अपनी आपत्ति जाहिर की है। मैं ब्रिटिश सरकार के सामने यह साफ करना चाहूँगा कि हम क्या सोचते हैं ? अब मीठी–मीठी तथा बेकार की बातें करने का समय गुजर गया है।"[6]

भारत और पाकिस्तान के इस मुद्दे में भारत असंतुष्ट पार्टी थी। परन्तु सुरक्षा परिषद ने इन दोनों को बराबर मानते हुये कश्मीर पर भारत की संप्रभुता को मान्यता नहीं दी। ऐसे प्रस्ताव और सुझाव भी आये कि भारत शेख अब्दुल्ला की सरकार को हटाकर मिली–जुली सरकार बनाये, जिसमें पाकिस्तान भी भाग ले जबकि कश्मीर से अपनी सेनायें हटाने के लिये पाकिस्तान पर कोई दबाव नहीं डाला गया, न ही उपद्रवी जनजातियों के सम्बन्ध में कुछ कहा गया था। जनमत संग्रह का सुझाव दिया गया था, परन्तु इस सम्बन्ध में अधिकार शक्ति जिसे सौंपी जायेगी, उसकी नियुक्ति संयुक्त राष्ट्र करेगा।[7] ऐसे सुझाव भी दिये गये थे कि नेहरू जी जम्मू और कश्मीर के विभाजन पर अपनी सहमति दें। इसके अलावा सुरक्षा परिषद जूनागढ़ रियासत तथा कश्मीर के सम्बन्ध में संयुक्त राष्ट्र आयोग बनाने के सम्बन्ध में प्रस्तुत प्रस्ताव के विषय में कश्मीर पर छिड़े वाद–विवाद के दौरान पाकिस्तान द्वारा उठाये गये जाति–संहार जैसे मुद्दे पर भी विचार करना चाहती थी। यह स्पष्ट था कि भारत इन सुझावों का खंडन करेगा, फिर भी नेहरू जी ने कश्मीर मुद्दे पर संयुक्त राष्ट्र के इस पहले आायोग को भारत में आने की अनुमति दे दी, जिसका कार्य वस्तु–स्थिति के आधार पर वास्तविक रूप से तथ्यात्मक आंकलन करना था।

जब संयुक्त राष्ट्र संघ का आयोग जुलाई 1948 में भारत पहुँचा तो पाकिस्तान सरकार ने यह स्वीकार किया कि जनजातियों के समर्थन के लिये कश्मीर में पाकिस्तानी सेनाओं की तीन नियमित ब्रिगेड लड़ाई में भेजी गई थीं। इस कार्यवाही का स्पष्टीकरण करते हुये यह आधार दिया गया कि जम्मू और कश्मीर में अनेक मुस्लिम लोगों की समस्याओं तथा अन्य बाह्य (Specious) कारणों से यह सहायता दी गई थी। भारत ने संयुक्त राष्ट्र में पाकिस्तान की इस घुसपैठ का सख्ती से विरोध किया। इस कार्यवाही का लक्ष्य भारत की भौगोलिक अखंडता को नुकसान पहुँचाना था। अंततः संयुक्त राष्ट्र को सुरक्षा परिषद ने 13 अगस्त, 1948 को प्रस्ताव

---

6. जे. एन. दीक्षित : भारतीय विदेश नीति, प्रभात प्रकाशन, 4/19, आसफ अली रोड, नई दिल्ली, पृ. 47
7. जे. एन. दीक्षित : भारतीय विदेश नीति, प्रभात प्रकाशन, 4/19, आसफ अली रोड, नई दिल्ली, पृ. 47

पारित किया। इसमें यह निर्धारित किया गया था कि तुरन्त युद्ध–विराम लागू किया जाये तथा पाकिस्तानी सेनायें तथा जनजातियाँ पूरी तरह से कश्मीर छोड़ दें। इस प्रस्ताव में यह भी विनिर्धारित किया गया कि जम्मू और कश्मीर से पाकिस्तानी सेनायें हट जाने के बाद भारत भी अपनी सेनायें कश्मीर से हटा ले तथा केवल कानून और व्यवस्था बरकरार रखने के लिये ही पर्याप्त सेनायें तैनात की जायें। इस राज्य की भावी स्थिति जनमत संग्रह के आधार पर तय की जायेगी।

इस अवस्था पर प्रश्न यह उठता है कि नेहरू जी ने इस प्रस्ताव पर अपनी सहमति क्यों दी ? इसके पीछे अनेक कारण थे। पहला इस प्रस्ताव में यह तथ्य स्वीकार किया गया था कि जम्मू और कश्मीर में पाकिस्तान ने घुसपैठ की है। दूसरे, अन्य प्रस्तावों के मासौदों की तुलना में प्रस्ताव बेहतर था। इस पर सुरक्षा परिषद ने विचार किया था। इसमें केवल पाकिस्तान का ही समर्थन नहीं किया गया था बल्कि इसका लक्ष्य जम्मू और कश्मीर की तात्कालिक वैधता सम्बन्धी इसके दावे के सम्बन्ध में फैसला देना भी था। तीसरें, यदि नेहरू जी यह रवैया नहीं अपनाते तो इसका परिणाम पाकिस्तान के साथ युद्ध होता है। इस सम्बन्ध में इस राष्ट्र को संयुक्त राज्य तथा ब्रिटेन से बड़े स्तर पर सहयोग मिलता। इस सम्बन्ध में यह संकेत भी मिला कि ब्रिटेन ने कश्मीर में पहुँची पाकिस्तानी सेनाओं पर सैन्य कमांड की योजना बनाने वाले तथा इसे व्यवहार में लाने वाले अधिकारियों के प्रति कोई आपत्ति नहीं उठाई। चौथे, भारत अभी भी ब्रिटेन से होने वाली अस्त्रों और तेल की आपूर्ति पर निर्भर था। इसलिये इस निष्कर्ष पर पहुँचा गया कि जम्मू और कश्मीर में संघर्ष के तुरन्त बाद, ब्रिटिश सरकार भारत को दी जा रही सहायता में कटौती कर देती। जबकि भारत अभी भी विभाजन तथा अपर्याप्त रक्षा क्षमताओं से उबरने का प्रयास कर रहा था, उस स्थिति में पाकिस्तान के साथ युद्ध करना अव्यावहारिक था।[8]

इन कारणों से भी ऊपर, नेहरू इससे सहमत थे कि यदि एक बार पाकिस्तानी घुसपैठिये जम्मू–कश्मीर से पूरी तरह से हट जाते हैं, तो जम्मू और कश्मीर के विलय के सम्बन्ध में जनमत संग्रह भारत के पक्ष में जायेगा; क्योंकि शेख अब्दुल्ला और नेशनल कांफ्रेस की कश्मीर में बढ़ती लोकप्रियता से इस दिशा में काफी योगदान मिलेगा।

---

8. Lt. General Sir James Wilson : Jammu and Kashmir problem - The truth, Part-I (With introduction by Lt. general M.L. Chibber) in journal of the United Services Institution of India, Vol. CXXVII No. 528, April to June, p.p. 253

तथापि परवर्ती वर्षों से ऊपर वर्णित अनेक भविष्यवाणियाँ/अनुमान गलत साबित हुये। जब पाकिस्तान समर्थक जनजातियों का विद्रोह शांत हो गया तथा पाकिस्तानी सेनायें वापस चली गईं और भारत संयुक्त राष्ट्र में चला गया तब कश्मीर की स्थिति, भारत के सम्बन्ध और स्वयं इसकी भूमिका से सम्बन्धित शेख अब्दुल्ला के विचारों में परिवर्तन आने लगे। सन् 1950–51 में अब्दुल्ला उन समझौतों से पीछे हटने लगे जिन पर उन्होंने अपनी सहमति दी थी। वे घाटी में मुस्लिम आबादी के बहुमत के आधार पर कश्मीर की इस्लामिक पहचान को मजबूत बनाना चाहते थे। दूसरे, वे स्वतंत्र कश्मीर की कल्पना करते थे, और स्वयं को उसके अध्यक्ष के रूप में देखते थे। उन्होंने विशेष रूप से इन भावनाओं को व्यक्त नहीं किया था, परन्तु सन् 1951 तथा 1953 के बीच, पंडित जी तथा सरदार पटेल के बीच बातचीत के दौरान उनकी यह मंशा परिलक्षित होने लगी। संक्षेप में, वे महाराजा हरिसिंह पर सारा आरोप लगाना चाहते थे। उन्होंने दिल्ली में आने से मना कर दिया था तथा विलय सम्बन्धी दस्तावेज तथा भारतीय संविधान की रूपरेखा के भीतर जम्मू–कश्मीर की स्थायी संवैधानिक व्यवस्था को अंतिम रूप देने के सम्बन्ध में चर्चा करने से भी इन्कार कर दिया बजाय इसके वे ब्रिटिश और अमेरिकी अधिकारी वर्ग तथा राजनीतिक हस्तियों से मिले और यह आशय रखा कि वे सैन्य प्रयोजनों से भारत में शामिल होना चाहते हैं ताकि पाकिस्तान कश्मीर पर कब्जा न कर सके। उन्होंने विचारार्थ विषय के आधार पर अपनी राजनीतिक श्रेष्ठता का दावा भी किया।[9]

शेख अब्दुल्ला के राजनीतिक दृष्टिकोण में आने वाले इस परिवर्तन के चार परिणाम सामने आये –

(1) इस राज्य में साम्प्रदायिक फूट पड़ गई। हिन्दू महासभा नेता श्यामा प्रसाद मुखर्जी की हत्या से इस फूट को और अधिक बढ़ावा मिला।

(2) इस दौरान, सन् 1953 में मुखर्जी कश्मीर के बंदीगृह में थे। दूसरे, इस संदेह और आशंका से भरे माहौल में संयुक्त राष्ट्र में कश्मीर पर बातचीत करने के लिये भारत का पक्ष कमजोर पड़ गया।

(3) इन गतिविधियों से संयुक्त राज्य और ब्रिटेन ने हस्तक्षेप करना शुरू कर दिया। यह हस्तक्षेप भारत की भौगोलिक अखंडता तथा सामरिक दृष्टि से धर्मनिरपेक्ष छवि के अनुकूल था।

(4) पाकिस्तान के रुख को राजनीतिक रूप से वैधता मिलने लगी, क्योंकि इस विवाद के एक

---

9. Charles H. Heimsath : Diplomatic History of Modern India (Bombay - 1971)

पक्ष के रूप में भारतीय सशस्त्र सेनाओं की अनुमति दी गई थी कि जम्मू और कश्मीर में पाकिस्तानी सेना पर काबू पाने के लिये ही उनकी तैनाती की जाये।[10]

शेख अब्दुल्ला इस मुद्दे को चरम बिन्दु तक ले गये। इसलिये उन्हें बंदी बनाकर कश्मीर से बाहर रखा गया। नेहरू ने अंततः इस राज्य की जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली; यद्यपि वे इस प्रक्रिया में शामिल होना चाहते थे। कश्मीर में बख्शी गुलाम मुहम्मद तथा दिल्ली में रफी अहमद किदवई जैसे नेताओं ने पंडित नेहरू को समझाया कि वे दृढ़तापूर्वक इस निर्णय को अपना समर्थन दें जिसके अन्तर्गत शेख अब्दुल्ला को एक दशक से भी ज्यादा अवधि तक के लिये राजनीतिक मंच से हटा दिया गया। इस प्रकार से गृह नीति तथा विदेश नीति–दोनों दृष्टियों से कश्मीर एक समस्यापूर्ण मुद्दा बन गया।

1958 ई. में फील्ड मार्शल अयूब खान तानाशाह बन गया तथा बाद में पाकिस्तान का राष्ट्रपति। वह सन् 1960 में नेहरू जी से दो बार मिला तथा उसने कश्मीर समस्या पर बातचीत की। 1960 ई. में भारत तथा पाकिस्तान के मध्य नहरी पानी सन्धि से सम्बन्धित सन्धि होने से इस बात की आशा हो गयी कि कश्मीर को हल करने के लिये भी दोनों ही देश कुछ न कुछ प्रयत्न अवश्य करेंगे। तथापि सितम्बर 1961 के बाद के समय में इस दिशा में कोई प्रगति नहीं हुई।[11]

जनवरी 1962 में पाकिस्तान ने एक बार फिर सुरक्षा परिषद से प्रार्थना की कि कश्मीर में एक गम्भीर समस्या उत्पन्न हो रही है इसलिये वह कश्मीर का मामला अपने हाथ में ले। सुरक्षा परिषद में पाकिस्तान की इस प्रार्थना पर ध्यान नहीं दिया गया क्योंकि तब भारत ने आने वाले चुनावों को दृष्टि में रखते हुये इसे स्थगित करने की प्रार्थना की थी। भारत में चुनावों के बाद पाकिस्तान ने दोबारा फिर प्रार्थना पेश कर दी। जिसके आधार पर सुरक्षा परिषद ने एक बार फिर कश्मीर समस्या को हाथ में ले लिया तथा 27 अप्रैल से 4 मई तक तथा फिर 15 जून से 22 जून 1962 तक इस पर बहस हुयी। आखिरी दिन आयरलैण्ड द्वारा प्रायोजित प्रस्ताव प्रस्तुत किया। इसमें भारत तथा पाकिस्तान के बीच द्विपक्षीय बातचीत को पुनः शुरू करने की बात कही गयी थी। परन्तु सोवियत संघ ने इस प्रस्ताव पर वीटो कर दिया।[12]

---

10. J. Surjit Man Singh : India's search for power : Indira Gandhi's Foreign Policy, 1966-82 (Delhi-1984)
11. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 364
12. Maj. Gen. Akbar Khan : Raiders in Kashmir, Army Publishers, Delhi 1970, p.p. 10

1962 ई. चीन तथा भारत में सीमा युद्ध ने भारत पाक़िस्तान के सम्बन्धों को और भी तनावपूर्ण बना दिया। पाक द्वारा चीन को खुला समर्थन दिया गया।

1961 ई. में पाकिस्तान ने एक बार फिर कश्मीर प्रश्न पर बहस करने के लिये सुरक्षा परिषद से प्रार्थना की। दो असफल प्रयासों के बाद सुरक्षा परिषद ने 18 मई 1964 को एक प्रस्ताव पास किया जिसके द्वारा उसने यह सुझाव दिया कि कश्मीर की समस्या को भारत तथा पाकिस्तान परस्पर बातचीत के द्वारा हल कर लें।

प्रथम प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू के काल में लगातार प्रयास के बावजूद भी कश्मीर समस्या का यथार्थ के धरातल पर कोई समाधान सम्भव नहीं हो सका। नेहरू जी की एक कमजोरी थी। वह अपनी पसन्द नापसन्द को छिपाकर नहीं रख सकते थे। उनकी आस्था समाजवादी जनतंत्र में थी। वह राजशाही, सामन्तशाही तथा सैनिक शासन को प्रतिक्रियावादी समझते थे। नेपाल तथा पाकिस्तान के साथ उनका व्यवहार इसी कारण सहज नहीं हो सका। श्रीलंका के प्रधानमंत्री जान कोटलेवाला ने एक बार यह सटीक टिप्पणी की थी कि भारत जैसा बड़ा राष्ट्र गुट निरपेक्षता का भोग कर सकता है परन्तु छोटे राज्यों के सामने यह सुविधापूर्ण मार्ग नहीं है।(13) नेहरू कालीन भारतीय विदेश नीति की सबसे बड़ी विशेषता यही पुराने और नये व परम्परा और परिवर्तन का अन्तर्द्वन्द्व थी। महाशक्तियों और पड़ोसियों के साथ 1947 से 1964 तक भारत के राजनयिक सम्बन्धों के उतार चढ़ाव में इसका तनाव स्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित होता है। कश्मीर समस्या के सन्दर्भ में निश्चित रूप से नेहरू जी को वह सफलता नहीं मिल पायी जिसकी नेहरू जी आशा कर रहे थे वरन् इसके विपरीत कश्मीर समस्या के सन्दर्भ में अन्तर्राष्ट्रीय जनमत, पाकिस्तान तथा कश्मीरी आवाम किसी को भी अपने पक्ष से संतुष्ट नहीं कर पाये अतः कश्मीर समस्या के सम्बन्ध में भारतीय विदेशनीति पूर्णतः असफल रही।(14)

श्री लाल बहादुर शास्त्री का शासन एवं कश्मीर समस्या

1964 में नेहरू जी मृत्यु के पश्चात् लाल बहादुर शास्त्री ने देश की बागडोर सम्हाली। शास्त्री जी का व्यक्तित्व अपने पूर्ववर्ती प्रधानमंत्री नेहरू से इतना भिन्न था कि कई लोगों के मन में यह शक पैदा होना स्वाभाविक था कि विदेश नीति नियोजन एवं निर्धारण के मामले में शास्त्री

---

13. World Focus - Oct., Nov., Dec. 2001
14. Brigadier S. K. Malik : Quranic concept of war wajidalis, Lahore, 1979
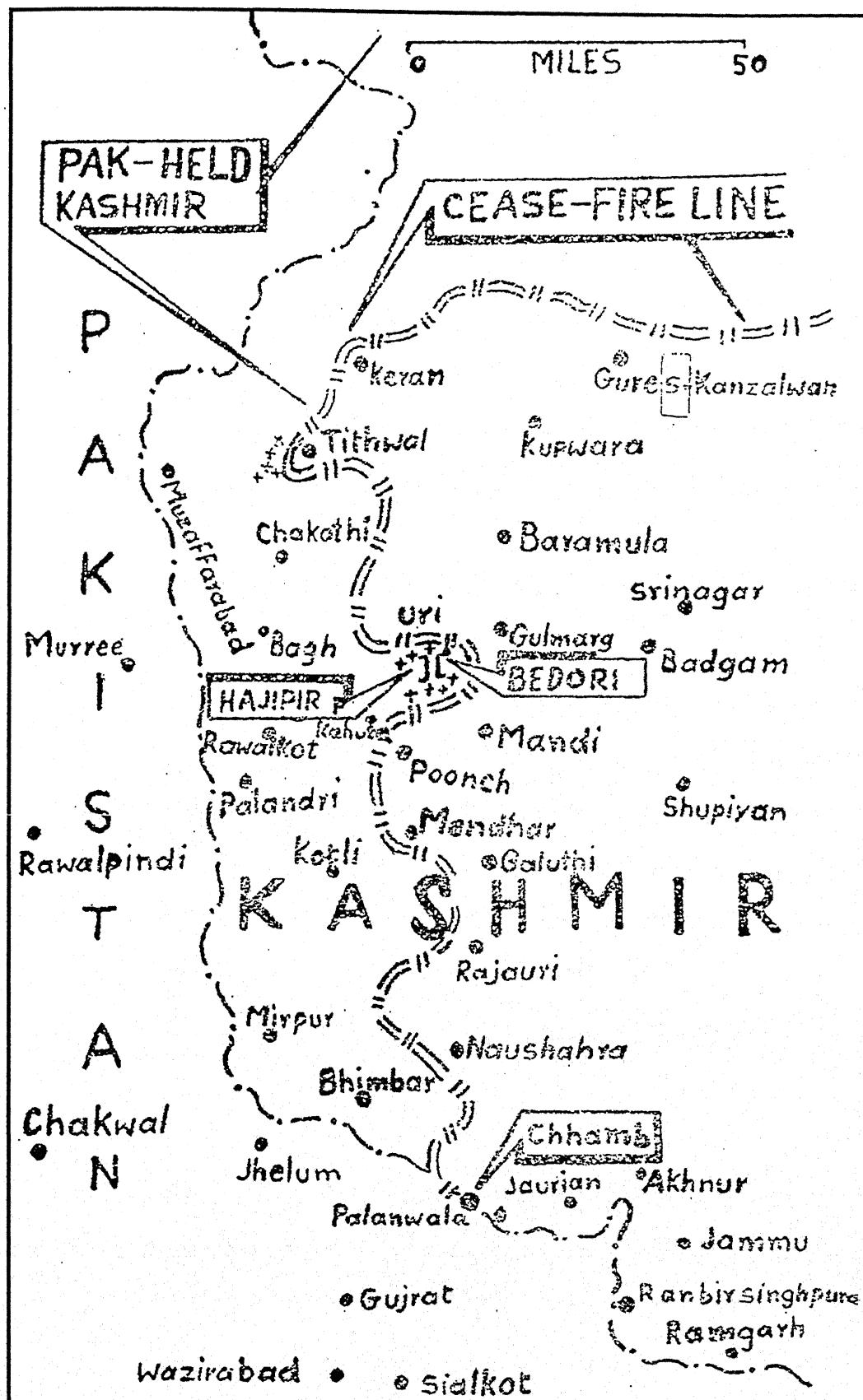
1965 युद्ध के बाद युद्ध विराम रेखा

जी असमर्थ रहेंगे। न तो उनकी शिक्षा–दीक्षा विदेश में हुयी थी और न ही प्रधानमंत्री बनने के पहले उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में कोई विशेष रुचि दर्शायी थी। इस कारण जब शास्त्री कालीन भारतीय विदेश नीति का विश्लेषण किया जाता है तो नेहरू युगीन विदेश नीति के साथ उसका फर्क दर्शाने का लोभ संवरण कम ही लोग कर पाते हैं। शास्त्रीकालीन विदेश नीति के सन्दर्भ में अक्सर यह कहा जाता है कि उन्होंने निरर्थक आदर्शवाद को सार्थक यथार्थवाद से विस्थापित किया और शान्ति प्रेमी होने के बावजूद राष्ट्र हित के संरक्षण संवर्धन के लिये सैनिक उपकरणों की उपयोगिता स्वीकार की। उनके कार्यकाल का विशेष अध्ययन करने वाले प्रोफेसर एल. पी. सिंह का मानना है कि भले ही उन्होंने भारतीय विदेश नीति के क्षितिज संकुचित किये, किन्तु उन्हें कुल मिलाकर मौलिक सूझ से वंचित नहीं समझा जा सकता और न ही उनके योगदान को नगण्य माना जा सकता है।

श्री लाल बहादुर शास्त्री ने 1964 से जनवरी 1966 तक शासन किया। उन्होंने नेहरू जी की गुटनिरपेक्षता एवं आदर्शवादी विदेश नीति का अनुसरण किया एवं पाकिस्तान के साथ मित्रवत सम्बन्ध बढ़ाने के प्रयत्नों को जारी रखा। शास्त्री द्वारा 15 अगस्त 1964 को पाकिस्तान को अनाक्रमण सन्धि पर हस्ताक्षर करने हेतु आमंत्रित किया किन्तु पाकिस्तानी प्रतिक्रिया नकारात्मक ही रही। 1965 में कच्छ एवं कश्मीर पर पाकिस्तान के आक्रमणों ने पाकिस्तान की यह मंशा जाहिर कर दी कि वह भारत के साथ भ्रातृत्व सम्बन्धों का इच्छुक नहीं है। अतः लन्दन में सम्पन्न राष्ट्रमंडलीय प्रधानमंत्रियों के सम्मेलन में ब्रिटिश प्रधानमंत्री हेराल्ड विल्सन के प्रयत्नों से कच्छ समस्या पर दोनों देशों के मध्य समझौता हो सका।(15)

1964 ई. के मध्य तक पाकिस्तान को यह अहसास हो गया कि सुरक्षा परिषद में कश्मीर के मामले को उठाना व्यर्थ है। कश्मीर की प्राप्ति के लिये पश्चिम के साथ की गयी सन्धियों को करने पर भी कश्मीर का हाथ न आ पाना, सुरक्षा परिषद में अपने प्रयत्नों की असफलता, भारत में शेख–अब्दुल्ला की नई भूमिका पर असन्तोष, यह विचार कि नेहरू की मृत्यु के पश्चात् भारत का नेतृत्व कमजोर हो गया है। अक्टूबर 1962 के चीन के आक्रमण के बाद भारत की बढ़ती हुयी सैन्य–शक्ति, भारत के शत्रु चीन के साथ मित्रता, पाकिस्तान की श्रेष्ठ सैनिक शक्ति में विश्वास तथा भारत के विरुद्ध सहायता का चीन का आश्वासन, इन सभी बातों

---

15. L. P. Singh : India's Foreign Policy - The Shastri Period, (Delhi 1980)

ने पाकिस्तान को कश्मीर को बलपूर्वक हथियाने के लिये उकसाया। उसने भारतीय सेनाओं पर, विशेषतया कश्मीर की युद्ध विराम रेखा के साथ–साथ, तनाव पैदा करना आरम्भ कर दिया। मार्च–अप्रैल 1965 को रणकच्छ में एक टोह लेने का सैनिक अभियान आरम्भ किया गया तथा कश्मीर में सशस्त्र घुसपैठिये भेजकर वहाँ अशान्ति फैलाने का कार्यक्रम तैयार किया गया। उन्हें ये निर्देश दिये गये कि वे भारत के हिस्से वाले कश्मीर में षड़यंत्रों के द्वारा अशान्ति फैला दें। पाकिस्तान की तरफ से इस योजना को कार्यान्वित करने के प्रयत्न के कारण ही अगस्त–सितम्बर 1965 में भारत तथा पाकिस्तान के मध्य युद्ध आरम्भ हो गया।[16]

15 अगस्त 1965 को कश्मीर में युद्ध विराम रेखा को पार करने के बाद भारतीय सेना मैदान में आ गयी तथा उन्होंने सामरिक महत्व के स्थान कारगिल, रिथवाल, हाजीपीर तथा उड़ी आदि स्थानों पर कब्जा कर लिया जहाँ से पाकिस्तानी घुसपैठिये कश्मीर भेजे जा रहे थे। 1 सितम्बर 1965 को पाकिस्तान ने अखनूर की तरफ से जम्मू तथा कश्मीर के पश्चिमी सीमा के छम्ब सेक्टर की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा को पार कर भारत पर आक्रमण कर दिया। भारत की सेनाओं ने इस आक्रमण का मुकाबला किया किन्तु उन्होंने यह महसूस किया कि छम्ब के क्षेत्र पर पाकिस्तानी फौजों पर दबाव कम करने के लिये यह आवश्यक है कि पाकिस्तान के विरुद्ध पश्चिमी मोर्चों को भी खोल दिया जाये। इसलिये 5 सितम्बर को भारत ने लाहौर सेक्टर में तीनों तरफ से आक्रमण कर दिया तथा एक दिन बाद सियालकोट सेक्टर पर हमला कर दिया। इससे इच्छित परिणाम ही निकले। यह प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री की यथार्थवादी सोच का परिणाम था।[17] इस प्रकार छम्ब क्षेत्र में पाकिस्तान का दबाव तथा पाक–अधिकृत कश्मीर में इसके मोर्चों में इसकी शक्ति में कमी हो गई। तथापि इसका परिणाम यह निकला कि भारत तथा पाकिस्तान के बीच सम्पूर्ण परन्तु अघोषित युद्ध आरम्भ हो गया। यह युद्ध 23 सितम्बर 1965 तक चला जब संयुक्त राष्ट्र संघ का महासचिव जनरल यू थां, द्वारा शान्ति के लिये मध्यस्थता हेतु प्रयत्नों द्वारा सुरक्षा परिषद प्रस्ताव को पूरकता प्रदान हुयी तथा दोनों ही देश युद्ध विराम के लिये मान गये। भारत ने सुरक्षा परिषद के युद्ध विराम के प्रस्ताव को तो मान लिया परन्तु कश्मीर से सम्बन्धित प्रस्ताव को स्पष्ट रूप से अस्वीकार कर दिया। सफलता प्राप्त करने में असफलता, चीन को शामिल कर पाने की असफलता भारत तथा पाकिस्तान दोनों को ही अमरीका तथा

---

16. World Focus : Oct., Nov., Dec. 2001
17. डॉ. पुष्पेश पन्त एवं श्रीपाल जैन : अर्न्तराष्ट्रीय सम्बन्ध, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ

ब्रिटेन के हथियारों की आपूर्ति बन्द होना तथा भारी हानि ने पाकिस्तान को युद्ध विराम स्वीकार करने के लिये बाध्य कर दिया। भारत ने युद्ध विराम इसलिये भी स्वीकार कर लिया क्योंकि युद्ध के कारण इसके आर्थिक संसाधनों पर गम्भीर बोझ पड़ गया था तथा चीन के सन्दर्भ में भावी सुरक्षा हितों को अत्यधिक हानि पहुँचने का भय था। इस प्रकार 23 सितम्बर 1965 को युद्ध विराम के समझौते द्वारा 18 दिनों का भारत पाक युद्ध समाप्त हो गया।[18]

युद्ध विराम के पश्चात 22–23 सितम्बर आधी रात को युद्ध समाप्त हो गया परन्तु भारत तथा पाकिस्तान सम्बन्धों को संचालित करने वाला वातावरण उग्र भावनाओं तथा तनावों से ग्रस्त रहा। सोवियत संघ ने ताशकन्द में भारत तथा पाकिस्तान की एक बैठक का सुझाव दिया ताकि वे अपने मतभेदों को आराम से बैठकर बातचीत द्वारा शान्तिपूर्वक सुलझा सके। सोवियत संघ ने भारत तथा पाकिस्तान के मध्य मेल–मिलाप करवाने के लिये ही कार्यवाही की थी। सोवियत संघ के नेताओं ने यह महसूस किया कि भारत तथा पाकिस्तान के मतभेद एक तरफ तो चीन को शक्तिशाली बना रहे थे तथा दूसरी तरफ दक्षिण एशिया में अपना प्रभाव बढ़ाने तथा उसे बनाये रखने के लिये, पश्चिमी शक्तियों की सहायता कर रहे हैं। इसको नियंत्रित करने के लिये सोवियत संघ ने भारत तथा पाकिस्तान को अपनी सारी समस्यायें सुलझाने के लिये ताशकन्द में आमंत्रित किया।

सोवियत संघ की इस पेशकश को भारत ने तुरन्त ही स्वीकार कर लिया परन्तु पाकिस्तान ने इस पेशकश को स्वीकार करने में दो महीने का समय लगा दिया। 25 नवम्बर 1965 को पाकिस्तान के विदेशमंत्री जुल्फिकार अली भुट्टो ने मास्को में एक प्रेस कान्फ्रेन्स में यह घोषणा की कि पाकिस्तान के राष्ट्रपति मि. अयूब खान भारत के प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री के साथ 'भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्धों पर आमूल वार्ता करने के इच्छुक हैं।'[19]

भारत तथा पाकिस्तान के मध्य 4 से 10 जनवरी 1966 तक ताशकन्द सम्मेलन हुआ। कई बैठकों की कठिन तथा दीर्घकालिक बातचीत के बाद दोनों देशों के नेता कुछ एक समस्याओं पर एकमत हुये इस समझौते को "ताशकन्द घोषणा" कहते हैं। टी. एन. कौल लिखते हैं "पाकिस्तान जानबूझ कर दबाव डालने के लिये किसी बात के लिये मान नहीं रहा था। परन्तु शास्त्री एक कठोर वार्ताकार थे।" इस सम्मेलन में दोनों ही देशों को अपने अधिकारों के किये गये

---

18. L. P. Singh : India's Foreign Policy - The Shastri Period (Delhi 1980)
19. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडिमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट जालन्धर, पृ. 370

क्षेत्रों के प्रश्न पर बातचीत करते समय बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा विशेषतया छम्ब के बदले पाकिस्तान को हाजीपीर वापस देने के प्रश्न पर। भारत छम्ब के बदले पाकिस्तान को हाजीपीर देने को तैयार था परन्तु साथ–साथ वह यह भी चाहता था कि पाकिस्तान भविष्य में शक्ति का प्रयोग त्याग दे। प्रधानमंत्री शास्त्री ने अनाक्रमण सन्धि पर तथा कश्मीर में हथियाये गये क्षेत्र की वापसी के प्रश्न पर समझौता कर लिया। इसका परिणाम यह निकला कि 10 जनवरी को बड़े सद्भावपूर्ण वातावरण तथा इस आशा के साथ कि आज से भारत तथा पाकिस्तान अपनी समस्याओं को सुलझाने के लिये परस्पर द्विपक्षीय बातचीत करना आरम्भ कर देंगे। ताशकन्द घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर किये गये। परन्तु 11 जनवरी की रात 1 बजे शास्त्री जी की मृत्यु से दुःखद व दुर्भाग्यपूर्ण वातावरण पैदा हो गया। शास्त्री जी जो नेहरू जी के बाद भारत के निर्माता माने जाते हैं, की मृत्यु से बड़ा धक्का लगा तथा भारत को अत्यन्त हानि हुयी तथा इससे ताशकन्द की भावना भी मन्द पड़ गयी। इसके अतिरिक्त ताशकन्द घोषणा पत्र का पाकिस्तानी प्रेस द्वारा तथा भारत के कुछ विशेष वर्गों द्वारा कड़ी आलोचना तथा इसके साथ–साथ दोनों ही देशों की सरकारों की, सैन्य धाराओं को छोड़कर दूसरी धाराओं को लागू करने में असफलता ने 1965 के बाद भारत–पाक सम्बन्धों का आधार क्षीण कर दिया। इसके अतिरिक्त इस समझौते द्वारा कश्मीर की समस्या पर भारत तथा पाकिस्तान के दृष्टिकोण पर कोई परिवर्तन नहीं लाया जा सका।[20]

इन्दिरा गाँधी का शासनकाल एवं कश्मीर समस्या

श्री लाल बहादुर शास्त्री के मरणोपरान्त प्रधानमंत्री बनी इन्दिरा गाँधी (जनवरी 1966 से मार्च 1977) के शासनकाल में भी भारत–पाक सम्बन्ध तनावग्रस्त बने रहे तथा पाकिस्तान यदा–कदा भारत विरोधी गतिविधियों में संलग्न रहा। अप्रैल 1966 में पाकिस्तान द्वारा कश्मीर मामले को सुरक्षा परिषद में उठाने, तदुपरान्त 22 सितम्बर 1969 को मोरक्को में आयोजित इस्लामी शिखर सम्मेलन में पाकिस्तान द्वारा भारत विरोधी दुष्प्रचार के कारण दोनों देशों के सम्बन्धों में और कटुता आ गई। जिस तरह की भ्रान्तियाँ शास्त्री जी के बारे में थी उसी तरह तर्कहीन अति सरलीकरण इन्दिरा गाँधी की विदेश नीति और राजनय के बारे में भी प्रचलित है। पत्रकारों और जीवनीकारों की कृपा से श्रीमती गाँधी की छवि लौह महिला और रणचण्डी वाली

---

20. L. P. Singh : India's Foreign Policy - The Shastri Period (Delhi 1980)

India, Pakistan & Bangladesh in 1972
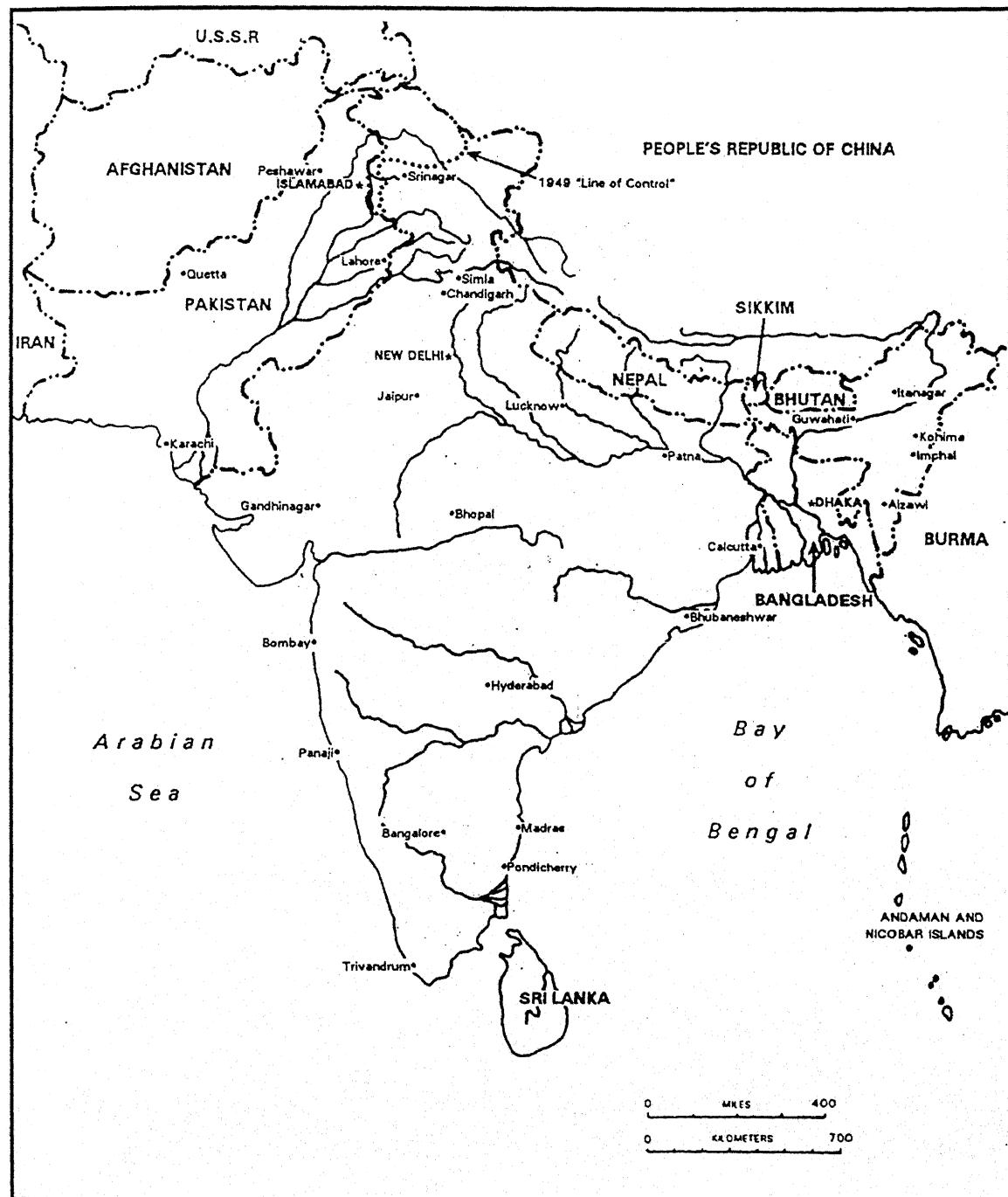
India, Pakistan & Bangladesh Today
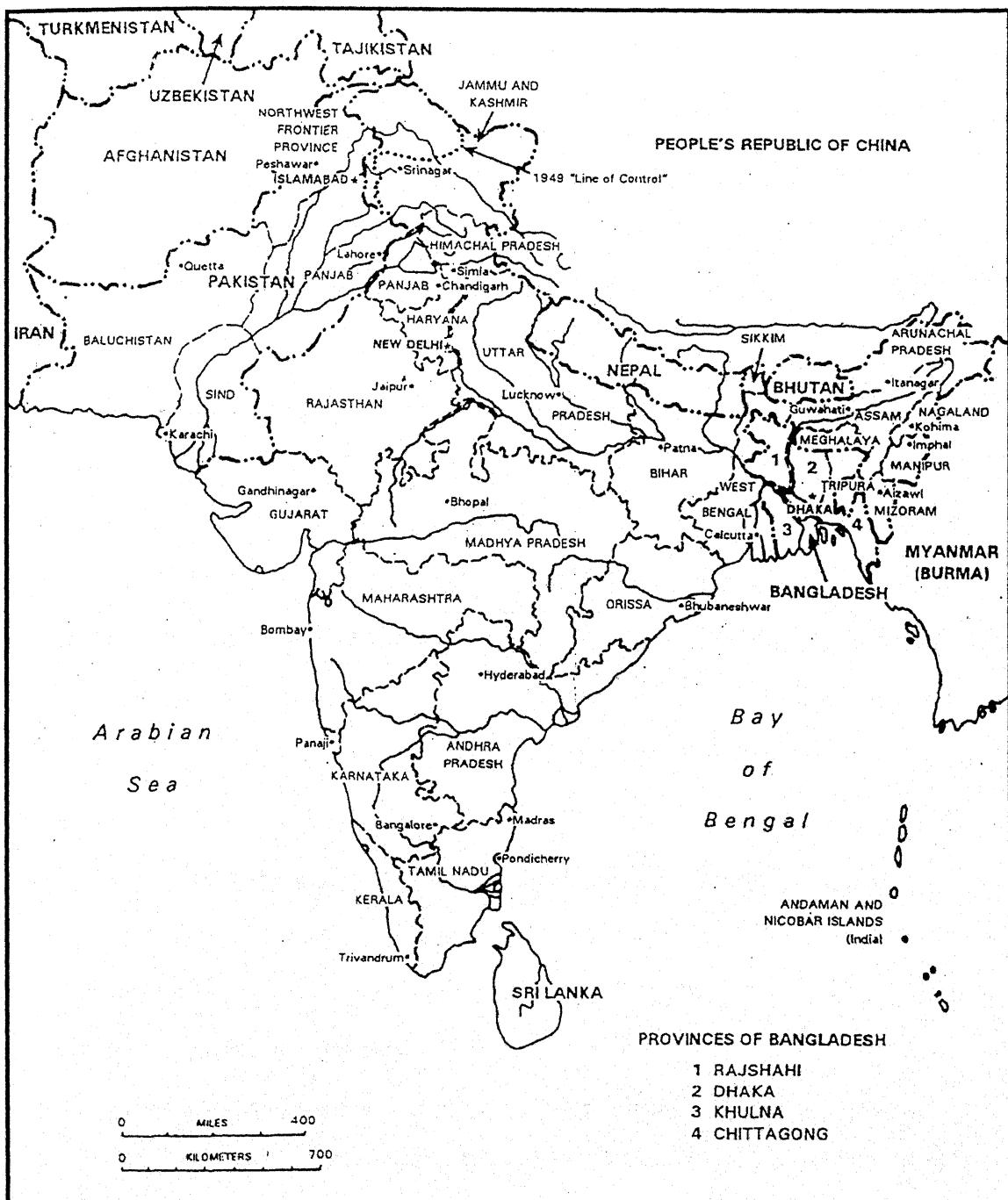
प्रसिद्ध हुयी है। लोगों के मन में आज भी या तो 1971 के बांग्लादेश मुक्ति अभियान की याद ताजा है या मई 1974 में पोखरन में परमाणु विस्फोट और जून में आपातकाल की घोषणा की। यदि चुन–चुन कर ऐसे उदाहरण पेश किये जाये तो श्रीमती गाँधी को अति यथार्थवादी प्रमाणित करना पड़ेगा। इसी तरह के प्रयत्न श्रीमती गाँधी के अन्तर्मुखी स्वभाव, उनके पारिवारिक एकाकीपन और मानसिक असुरक्षा के भाव को उनके अन्तर्राष्ट्रीय आचरण के साथ जोड़ने के लिये किये जाते हैं। ऐसा नहीं कि यह विश्लेषण सिर्फ श्रीमती गाँधी के आलोचक विरोध ही करते रहे हैं, बल्कि श्रीमती गाँधी के साथ सहानुभूति रखने वाले विद्वान भी इस भ्रान्ति के शिकार हुये। उदाहरणार्थ इन्दिरा गाँधी की विदेश नीति का विस्तार से विश्लेषण प्रस्तुत करने वाली लेखिका सुरजीत मान सिंह[(21)] की पुस्तक का शीर्षक ही 'India's Search for power' अर्थात् 'भारत शक्ति की तलाश में' है। यदि अध्येता सतर्कता न बरतें तो इस निष्कर्ष तक अनायास पहुँचा जा सकता है कि श्रीमती गाँधी ने सर्वप्रथम पारम्परिक शक्ति सन्तुलन के आधार पर राष्ट्रहित के हित सम्पादन का काम किया। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि कश्मीर पाकिस्तान, गोवा आदि के सन्दर्भ में नेहरू और शास्त्री का आचरण भी आदर्शवादी नहीं समझा जा सकता है।[(22)]

ताशकन्द घोषणा के बाद कश्मीर तथा दूसरी समस्याओं पर भारत तथा पाकिस्तान के बीच द्विपक्षीय बातचीत की संभावनायें पैदा हो गई। 15 अगस्त 1968 को श्रीमती गाँधी ने पाकिस्तान को एक अनाक्रमण सन्धि का प्रस्ताव प्रस्तुत किया तथा जनवरी 1969 को इस समझौते के पूरक के रूप में प्रस्ताव पेश किया कि पाकिस्तान के साथ सभी झगड़ों की जाँच पड़ताल करने के लिये एक संयुक्त मशीनरी की स्थापना की जाये। किन्तु इससे पूर्व कि इन प्रस्तावों को लागू किया जा सके, सातवें दशक के अन्त तथा आठवें दशक के आरम्भ में कुछ ऐसी घटनायें घट गईं जिसे भारत तथा पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) में संकट पैदा हो जाने से और भी बिगाड़ दिया तथा दिसम्बर 1971 को दोनों ही देश एक अन्य युद्ध में संलिप्त हो गये। तथापि इस युद्ध में कश्मीर की समस्या नहीं उभरी।

1972 ई. में शिमला सम्मेलन में प्रधानमंत्री मि. भुट्टो ने कश्मीर का प्रश्न उठाया तो था परन्तु नितान्त सतही तौर पर। शिमला समझौते में धारा IX में एक उपधारा भी शामिल थी जिसमें कहा गया है जम्मू तथा कश्मीर में 17 दिसम्बर 1971 के युद्ध विराम के परिणाम स्वरूप

---

21. सुरजीत मान सिंह : India's Search for power
22. Indira Gandhi : India and the world (Foreign Affairs, New york October (1972)

नियंत्रण रेखा का दोनों ही देश सम्मान करेंगे। इसमें किसी भी तरफ की पूर्व मान्य स्थिति का ध्यान नहीं रखा जायेगा। कोई भी देश इसे एकतरफा रूप में नहीं बदल सकेगा। शिमला सम्मेलन में श्रीमती गाँधी विजेता के रूप में पहुँची थी परन्तु शिमला समझौते का परिणाम बताता है कि श्रीमती गाँधी पाकिस्तानी शासक द्वारा ठग ली गयी थी। उन्हें विजेता के रूप में जो कुछ मिलना चाहिये था वह सब पाकिस्तान के हाथ लग गया।

शिमला समझौते के बाद 17 दिसम्बर 1971 वाली नियंत्रण रेखा नई युद्ध विराम रेखा बन गयी। भारत की स्थिति ताशकन्द समझौते के बाद की उसकी स्थिति से अधिक अच्छी थी। इसका अत्यधिक सामरिक महत्व वाले स्थानों जैसे – हाजीपीर, टिथवाल, उड़ी, पुंछ तथा कारगिल जैसे प्रदेशों पर नियंत्रण था। इस समय वे दोनों ही देशों के बीच यही नियंत्रण रेखा, भारत तथा पाकिस्तान की वास्तविक नियंत्रण रेखा है। परन्तु इसके बाद भी पाकिस्तान कश्मीर तथा वहाँ के लोगों के स्वनिर्धारण के अधिकार का राग अलापता रहा। इसके शासक कश्मीर समस्या को सुलझाने की आवश्यकता के बारे में बात करते रहे। यहाँ तक कि भारत के साथ "अनाक्रमण सन्धि" तथा शान्ति तथा मैत्री की सन्धि करते समय या किसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था को सम्बोधित करते समय पाकिस्तान के वक्ता सदैव ही कश्मीर की समस्या तथा इसे हल करने की आवश्यकता का हवाला देने से पीछे नहीं हटे। राष्ट्रपति जिया–उल–हक ने बार–बार यह कहा कि भारत के साथ "अनाक्रमण सन्धि" कश्मीर पर उनके देश की स्थिति को परिवर्तित नहीं करेगी।[23]

पाकिस्तान ने चीन के साथ कुछ समझौते कश्मीर के उस भू–क्षेत्र के विषय में कर लिये जिस पर उसका अधिकार था। पाकिस्तान ने कराकोरम महामार्ग को खोलने तथा खंजुरेब के सम्बन्ध में संलेख पर हस्ताक्षर किये जो भारत के अनुसार अवैध तथा गुप्त समझौते थे क्योंकि इसके अनुसार चीन पाकिस्तान की तरफ से कश्मीर में रुचि रखने वाला देश बन जाता था इसमें वे क्षेत्र भी आते थे जिन पर पाकिस्तान ने अवैध रूप से अधिकार कर रखा था। पाकिस्तान ने अब यह दावा करना आरम्भ कर दिया कि गिलगित, हुंजा, नगर, यैस्योन, पोनियल, चित्राल तथा सकारदा कभी भी जम्मू कश्मीर राज्य के भाग नहीं रहे थे। भारत ने पाकिस्तान के इस दावे की कड़ी आलोचना की है। 1988 में पाकिस्तान ने लद्दाख में सियाचिन ग्लेशियर पर नियंत्रण करने का प्रयास आरम्भ कर दिया। पाकिस्तान आज भी भारत की उन सेनाओं पर बार–बार आक्रमण

---

23. Indian Express - 10 August 1982

कर रहा है जो कि दृढ़ता से इस क्षेत्र में नियंत्रण किये हुये हैं। सियाचिन के सम्बन्ध में पाकिस्तान के दावे का भारत ने पूर्णतया खण्डन किया है। पाकिस्तान बलपूर्वक सियाचिन को अपने अधिकार में करके अपनी स्थिति सुदृढ़ करना चाहता है। तथापि भारत पाकिस्तान की इच्छा को अपूर्ण ही रखने के लिये कृत संकल्प है तथा यह ऐसा करने में भी सफल रहा है।

1972 के अन्त में दिल्ली सम्मेलन के बाद शिमला समझौते में तय कदम औपचारिक रूप में उठाये जा सके। ताशकन्द की तरह दोनों देशों में शिमला समझौते को लेकर बड़े पैमाने पर नई आशा जगी थी। यदि इसके प्रत्याशित परिणाम नहीं निकले तो यह बात पूछी जानी चाहिये कि ऐसा क्यों नहीं हुआ ? जहाँ तक भारत का प्रश्न श्रीमती गाँधी के इर्द गिर्द बांग्लादेश मुक्ति अभियान से जन्मा प्रभामण्डल ज्यादा दिन बचा नहीं रह सका। 1974 तक गुजरात और बिहार में उनके विरुद्ध व्यापक युवा जन आन्दोलन आरम्भ हो चुका था। इसका स्वरूप सिविल नाफरमानी संघर्ष बन चुका था। श्रीमती गाँधी को अंततः इस चुनौती का सामना करने के लिये अपना जनतांत्रिक मुखौटा उतार फेकना पड़ा और जून 1975 में आपातकाल की घोषणा करनी पड़ी। इस प्रकार शिमला समझौते में पाकिस्तान के साथ भारत के सम्बन्ध सुधारों के लिये व्यापार, वाणिज्य आदि में सायास वृद्धि की जो प्रस्तावना की गयी थी, उसका क्रियान्वयन लगभग असंभव बन गया। दूसरी ओर भुट्टो निक्सन के अमरीका को और माओ के चीन को करीब लाने के काम में मध्यस्थ बन चुका था और भारत के साथ सम्बन्ध सुधारने के लिये प्रेरणा दुर्बल पड़ने लगी थी। इतना ही नहीं क्षणिक संकट निवारण के बाद भुट्टो को ऐसा लगने लगा था कि पाकिस्तान का भविष्य भारत के साथ उस तरह नहीं जुड़ा है जिस तरह पश्चिम एशिया के देशों के साथ। 1975 के मध्य तक बांग्लादेश की बहुसंख्यक जनता का शेख मुजीब के साथ मोह भंग हो गया था। एक दुःस्वप्न की तरह 15 अगस्त 1975 को बंग बन्धु मुजीब की सपरिवार निर्मम हत्या कर दी गयी और बांग्लादेश में घड़ी की सुइयाँ बलपूर्वक पीछे खिसका दी गयीं। ऐसी परिस्थिति में शिमला भावना का क्षय स्वाभाविक था।[24]

अन्ततः कहा जा सकता है कि भारत को युद्ध में विजेता होने के पश्चात भी वह सम्मान प्राप्त न हो सका पाकिस्तान इस काल में भी हमारा दूरस्थ पड़ोसी या कहें पड़ोसी शत्रुतापूर्ण व्यवहार करने वाला पड़ोसी बना रहा। युद्धोपरान्त भारत में कई आन्तरिक समस्याओं

---

24. Z.A. Bhutto : Myth of independence (London) एवं Ministry of External Affairs, Bangladesh, Documents (Delhi 1971)

के उत्पन्न हो जाने से युद्धोपरान्त व्याप्त स्थितियों के लाभ लेने में असमर्थ रही। अतः श्रीमती इन्दिरा गाँधी की विदेश नीति में कश्मीर समस्या अपने पूर्ण यौवन में प्रतीत होती है। जिसके लिये भारतीय ही नहीं पकिस्तान तथा अन्य राष्ट्र भी विचारणीय मुद्रा में दिखे।

अपने दूसरे कार्यकाल में 1980 के आम चुनाव में श्रीमती इन्दिरा गाँधी की अत्यन्त ही नाटकीय ढंग से अभूतपूर्व विजय हुई। परन्तु जहाँ से व्यवधान पड़ा था वहीं से छूटा काम आगे बढ़ाने का प्रश्न ही नहीं उठता था। जनता सरकार के कार्यकाल में श्रीमती इन्दिरा गाँधी को अपने अनेक मित्रों को परखने का अवसर मिला। इसके अतिरिक्त अपनी वापसी के बाद उनके मन में निश्चय ही इस बात का अहसास गहरा हुआ कि नियति ने उन्हें कुछ ऐतिहासिक उपलब्धियों के लिये चुना है। इस दूसरे कार्यकाल के विषय में यह कहा जा सकता है कि एक बार मोह भंग के बाद श्रीमती गाँधी की विदेशनीति में अति यथार्थवाद और आदर्शवादी महत्वकाक्षाओं का सम्मिश्रण देखने को मिलता है। संयोगवश ही सही मार्च 1983 में गुट निरपेक्ष आन्दोलन का नेतृत्व ग्रहण करने के साथ श्रीमती इन्दिरा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय नेताओं की पहली वरिष्ठ श्रेणी में आ गयी। भारत की अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा और राजनायिक प्रभाव में उनके जीवन पर्यन्त कोई क्षय नहीं हुआ।

जनता पार्टी का शासन एवं कश्मीर समस्या

मार्च 1977 में मोरार जी देसाई के नेतृत्व में जनता पार्टी ने शासन की बागडोर सम्हाली। जिन परिस्थितियों में जनता सरकार का गठन हुआ, उसमें श्रीमती गाँधी ही नहीं बल्कि नेहरू वंश के प्रति रोष का स्वर तेज हुआ था। आपातकाल की तानाशाही की दुःस्वप्न जैसी स्मृति जनता के मन में थी। जनता सरकार के नेता श्रीमती इन्दिरा गाँधी की समस्त नीतियों को बदलने के लिये व्यग्र थे। फिर भी नये विदेश मंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने कार्यभार सम्हालने के बाद यह घोषणा की कि वह नेहरू की विदेश नीति के अनुसार ही आचरण करेंगे। कहने को भले ही ही उन्होने "खालिस गुट निरपेक्षता" की बात की परन्तु इसका प्रमुख अभिप्राय यह दर्शाना था कि इन्दिरा गाँधी ही अपने पिता के मार्ग से विचलित हुयी थी। पड़ोसी देशों के साथ सम्बन्धों के क्षेत्र में जरूरत से ज्यादा रियायती व नरम रुख अपनाना जनता सरकार के लिये शायद इसलिये जरूरी था कि उसके विदेश मंत्री बाजपेयी की अब तक की छवि "आक्रामक हिन्दू राष्ट्रवादी" की थी। जनता सरकार का गठन विभिन्न वैचारिक रुझानों वाले राजनीतिक दलों को मिलाकर हुआ

था। इसी कारण किसी स्पष्ट अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य या सैद्धान्तिक अभिगम की अपेक्षा उनसे नहीं की जा सकती थी यह स्वाभाविक था कि नौकरशाही का महत्व विदेश नीति नियोजन के क्षेत्र में बढ़ा। ऐसे में पाकिस्तान से सम्बन्धों में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हो सका और न ही कश्मीर समस्या के विषय में कोई स्पष्ट प्रगति हुयी।[25]

3 जुलाई 1977 को पाकिस्तान में रक्तहीन क्रान्ति हुयी जिसमें जुल्फिकार अली भुट्टो को अपदस्थ करके जनरल जिया उल हक मुख्य मार्शल लॉ प्रशासक बने। पाकिस्तान की नवीन सैनिक सरकार में भारतीय राजदूत ने श्री बाजपेयी को अवगत कराया कि भुट्टो सरकार ने कुछ समझौते पाकिस्तान के साथ किये हैं। पड़ोसी देशों से मैत्री एवं सहयोगात्मक सम्बन्घ बनाने की दृष्टि से फरवरी 1978 में भारत के विदेशमंत्री श्री बाजपेयी ने पाकिस्तान की यात्रा की। इस समय दोनों देशों ने पारस्परिक समस्याओं के समाधान पर बल दिया। श्री बाजपेयी ने पाकिस्तान की सरकार को आश्वासन दिया कि "भारत पाकिस्तान को स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में मानता है तथा भारत की ओर से उसके अस्तित्व को किसी प्रकार का खतरा नहीं है।"

10 अप्रैल 1978 को पाकिस्तान के प्रधानमंत्री भारत आये। 14 अप्रेल 1978 को सलाल जल विद्युत परियोजना के सन्दर्भ में दोनों देशों के मध्य एक सन्धि हुई।

1977 में आन्तरिक राजनीतिक वातावरण में कुछ दूरस्थ परिवर्तन हुये जो आरम्भ में ऐसे लगते थे कि अब भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्धों की गति को और धीमा कर देंगे या इनमें नकारात्मक प्रवृत्ति पैदा कर देंगे। 1 जनवरी 1977 में पाकिस्तान मे आम चुनावों की घोषणा हुई। चुनाव प्रचार के दौरान यह बात सामने आयी कि भुट्टो के शासन ने पाकिस्तान में अपना समर्थन खो दिया है। परन्तु चुनाव में पाकिस्तान ने भुट्टो की पीपुल्स पार्टी को शानदार विजय दिलाई। विरोधी दल ने यह आरोप लगाया कि चुनावों के दौरान बड़े पैमाने पर हेराफेरी हुई है। इसमे भुट्टो की विजय को गहरे वाद–विवाद का मुद्दा बना दिया तथा इसका परिणाम यह हुआ कि पाकिस्तान में राजनीतिक अस्थिरता आ गई। इस स्थिति को समाप्त करने के लिये 5 जुलाई 1977 को जनरल जिया ने सरकार का तख्ता पलट दिया तथा एक बार फिर पाकिस्तान में सैनिक तानाशाही पुनः सत्ता में आयी। भारत को यह बिना किसी टिप्पणी के स्वीकार करना पड़ा क्योंकि यह परिवर्तन पाकिस्तान के आन्तरिक मामलों से सम्बन्धित था।[26]

---

25. Uma Singh : India-Pakistan relation in a historical perspective, World focus monthly discussion journal, Oct. Nov. Dec. 2001, p.p. 32
26. Uma Singh : India-Pakistan relation in a historical perspective, World focus monthly discussion journal, Oct. Nov. Dec. 2001, p.p. 32

पाकिस्तान के प्रति जनता सरकार ने अधिक खुले दिल से कार्य करने का निश्चय किया ऐसा उन्होने अपने पड़ोसियों विशेषतया पाकिस्तान के साथ सम्बन्धों को सुधारने की नीति के अनुसार किया। जनरल जिया ने भी भारत तथा पाकिस्तान के बीच सम्बन्धों को तेजी से सुधारने की इच्छा प्रकट की। अगस्त 1977 के पहले कुछ एक जनता नेताओं विशेषतया अटल बिहारी बाजपेयी ने जो कि जनता शासन में विदेशमंत्री बने; कांग्रेस युग की विदेश नीति के कुछएक तत्वों को गम्भीर चुनौती दी तथा इसलिये अब यह आशा की गई कि राजनीतिक परिवर्तन के साथ-साथ इस बार भारत की विदेश नीति में विशेषतया पाकिस्तान के साथ सम्बन्धों में कुछ परिवर्तन आयेगा। तथापि इसके कुछ समय पश्चात् ही स्पष्ट हो गया कि जनता सरकार विदेश नीति के पूर्व स्थापित सिद्धान्तों एवं उद्देश्यों को ही अपनायेगी।

1977 को जनरल जिया ने करीब 200 भारतीय बन्दियों को छोड़ने की घोषणा की जो कि पाकिस्तान की जेलों में सड़ रहे थे। भारत ने प्रत्युतर में भारतीय जेलों में बन्द 200 पाकिस्तानी बन्दियों को छोड़ दिया।[27]

श्री बाजपेयी पाकिस्तानी नेताओं के साथ अच्छा नाता जोड़ने में सफल हो गये। भारत की परमाणु नीति पर जनता सरकार ने जो संयमित रुख अपनाया उसका भी पाकिस्तान पर प्रभाव पड़ा। अप्रैल 1978 में पाकिस्तान के विदेश सचिव मि. आगाशाही भारत आये। 12 अप्रैल 1978 को दिल्ली में हुयी बातचीत के फलस्वरूप सलाल बाँध परियोजना पर एक समझौता हुआ, इससे 30 वर्ष पुराना झगड़ा समाप्त हो गया। इस समझौते के द्वारा भारत को जम्मू कश्मीर में चुनार नदी पर सलाल बाँध बनाने तथा विद्युत परियोजना बनाने का अधिकार मिल गया तथा बदले में इसमें डिजायन तथा स्वरूप के बारे में पाकिस्तानी विचारों का सम्मान करना स्वीकार किया। दिल्ली बातचीत ने द्विपक्षीय सम्बन्धों को बढ़ावा देने के लिये पारस्परिक बातचीत की प्रक्रिया को और अधिक सुदृढ़ता प्रदान की। इससे दोनों देशों के बीच "लाभकारी द्विपक्षवाद" की अवधारणा को बल मिला।

13 अप्रैल 1978 को प्रधानमंत्री श्री देसाई ने एक पाकिस्तानी पत्रकार से साक्षात्कार में पाकिस्तान के साथ कश्मीर सहित सभी समस्याओं को उचित ढंग से सुलझाने के लिये भारत की तत्परता व्यक्त की। सितम्बर 1978 में नैरोबी में देसाई जिया की बैठक ने भारत तथा

---

27. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिकेशन्स, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 395

पाकिस्तान के सम्बन्धों के वातावरण को और सुधार दिया। अक्टूबर 1978 में भारत तथा पाकिस्तान ने पारस्परिक आधार पर बम्बई तथा कराची में अपने–अपने वाणिज्य दूतावास खोलने का प्रस्ताव स्वीकार किया।

जनवरी 1980 जनता सरकार के समय अफगानिस्तान संकट में पुनः एक बार मतभेद उभर कर सामने आये। अतः जनता शासन में विशेष प्रयास के बाद भी कश्मीर समस्या एवं भारत पाक सम्बन्धों पर विशेष प्रगति नहीं हुयी।

राजीव गाँधी का शासनकाल एवं कश्मीर समस्या

श्री राजीव गाँधी विदेश नीति (नवम्बर 1984 से नवम्बर 1989 तक) के मुख्य आधार थे। उन्होंने अपने पड़ोसी देशों विशेषकर पाकिस्तान के साथ मित्रतापूर्ण तथा सहयोगात्मक सम्बन्ध स्थापित करने के लिये अनेक सामयिक तथा साहसिक कदम उठाये। भारत–पाक सम्बन्धों का इतिहास सीमित सम्बन्ध तथा सन्देहजनक वातावरण के कारण दोनों द्वारा यह आवश्यक माना गया कि वे अपने बीच लाभदायक मैत्रीपूर्ण तथा सहयोगात्मक द्विपक्षीय सम्बन्ध स्थापित करने के लिये प्रयत्न करें। 1983 में अब तक भारत तथा पाकिस्तान के मध्य सन्देह तथा मतभेदों के कारण तथा पंजाब में उग्रवादियों को पाकिस्तान के समर्थन तथा उसके द्वारा अमरीकी हथियारों की बड़ी संख्या में असंगत प्राप्ति के कारण शिथिल पड़ गया था।

25 जनवरी 1985 के भारतीय वायुयान के दोनों अपहरणकर्त्ताओं पर मुकदमा चलाने के निर्णय ने दोनों देशों के सम्बन्धों में सुधार के लिये विशेषतयाः अनाक्रमण समझौता, शान्ति मैत्री तथा सहयोग के सन्धि के द्वारा भारत पाक वार्त्ता के लिये मार्ग प्रशस्त कर दिया। इसे शुभ पहल तथा भारत पाक वार्ता को पुनः आरम्भ करने के लिये सकारात्मक कदम जो कि जुलाई 1984 के मध्य से ही एक प्रकार से स्थगन की अवस्था में था, कहा गया।[28]

भारत के तत्कालीन विदेश सचिव ने 3 अप्रैल 1985 को इस्लामाबाद की यात्रा की तथा जनरल जिया से बातचीत की। इसका परिणाम यह निकला कि दोनों देशों के मध्य आपसी सूझबूझ तथा सहयोग की समीक्षा करने तथा इन्हें बढ़ावा देने के बारे में एक सामान्य समझौता किया। पाकिस्तान के लोग यह जान गये थे कि भारत के साथ मित्रता उनके देश की आवश्यकता थी। इसलिये इस बात के लिये प्रयत्न किये जाने चाहिये कि "लोगों के लिये एक

---

28. वी. पी. दत्त : इण्डियन फारेन पॉलिसी, पृ. 132

दूसरे के साथ सम्पर्क स्थापित हो तथा विभिन स्तरों का आदान प्रदान में उन्नति हो।"[29]

पाकिस्तानी दैनिक समाचार पत्र "दि मुस्लिम" के साथ एक साक्षात्कार में प्रधानमंत्री श्री राजीव गाँधी ने आश्वासन दिया कि हम कभी नहीं चाहेंगे कि हमारी सीमा के साथ लगता कोई देश कमजोर या खण्डित हो।

भारत–पाक संयुक्त आयोग की तीन दिवसीय दूसरी बैठक नई दिल्ली में 2, 3, 4 जुलाई 1984 को हुई। भारतीय पक्ष का नेतृत्व विदेश मामलों के राज्यमंत्री श्री खुर्शीद आलम खान ने तथा पाकिस्तान का नेतृत्व पाकिस्तान के तत्कालीन विदेश मंत्री याकूब खान ने किया। बातचीत के मध्य हुई प्रगति से पता चलता है कि व्यापार के क्षेत्र में कोई ठोस तथा महत्वपूर्ण उन्नति नहीं हुयी। बातचीत में सभी कूटनीतिक विशेषतायें थी परन्तु इनमें ठोस परिणामों की कमी थी। व्यापार तथा संस्कृति से सम्बन्धित कोई भी बड़ा समझौता नहीं किया गया। पाकिस्तान का भारत से गेहूँ खरीदने का निर्णय तथा अमरीका से हथियार प्राप्त करने की मुहिम को जारी रखना एक ऐसी पृष्ठभूमि का निर्माण करता है जिसमें संयुक्त आयोग के विचार विमर्श में कोई वास्तविक प्रगति नहीं हो सकी। सियाचिन ग्लेशियर में सशस्त्र झड़पें तथा पाकिस्तान द्वारा इस क्षेत्र पर दावा करना, इसने भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्धों के वातावरण को बिगाड़ दिया था तथा इस प्रकार बातचीत से इसमें कोई ठोस परिणाम नहीं निकले।

1986 में दोनों देशों के वित्त मंत्रियों में द्विपक्षीय निजी व्यापार को बढ़ावा देने के लिये एक आपसी मेल–मिलाप के ज्ञापन पत्र पर हस्ताक्षर किये गये। इस समझौते से पाकिस्तान के निजी क्षेत्र को यह आज्ञा मिल गयी कि वह भारत से 42 वस्तुओं का आयात कर सकता है। सार्वजनिक क्षेत्र में दोनों ही देशों ने यह तय किया कि वे 1986–87 के दौरान व्यापार की मात्रा को दोगुना कर देंगे।[30]

अपने द्विपक्षीय सम्बन्धों को मैत्रीपूर्ण बनाने में असफलता तथा इसके साथ–साथ दक्षिण एशिया में पाकिस्तान की भारत विरोधी नीतियों ने एक ऐसा वातावरण पैदा किया जिससे सम्बन्धों में वास्तविक रूप से संकट पैदा हो गया। पाकिस्तान ने अत्याधुनिक तथा तकनीकी रूप से विकसित शस्त्रों की बाढ़ आ जाने से सैनिकवाद और अधिक मजबूत हो गया। पाकिस्तान ने भारतीय सेनाओं द्वारा पैदा किये गये खतरे का सामना करने की आड़ में सीमाओं पर अपनी

---

29. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिकेशन्स, माई हीरा गेट, जालन्धर
30. वी. पी. दत्ता : इण्डियन फारेन पॉलिसी

सेनाओं को इकट्ठा करना आरम्भ कर दिया। वास्तव में तब भारत अपनी सुरक्षा क्षमता का परीक्षण करने के लिये सीमाओं पर बड़े पैमाने पर त्रिवार्षिक युद्धाभ्यास कर रहा था तथा इसकी पाकिस्तान को बराबर सूचना भी दी गयी थी। पाकिस्तान की सेनाओं को सभी सामरिक महत्व के स्थानों पर तैनात कर दिया इससे भारत की सुरक्षा को खतरा पैदा हो गया क्योंकि इस प्रकार युद्ध किसी भी समय अचानक ही छिड़ सकता था। भारत ने भी अपनी रक्षा के लिये प्रतिरोधी क्रिया आरम्भ की तथा अपनी सेनाओं को सीमा पर जाने का आदेश दिया। स्थिति गम्भीर हो गयी। भारत ने तनाव को बढ़ने से रोकने के लिये सामयिक कार्यवाही की। विदेश सचिव स्तरीय बातचीत का प्रस्ताव गया जो 1987 फरवरी के आरम्भ में ही नई दिल्ली में हुई। पाँच दिनों की उत्तेजक बातचीत (31 जनवरी से 4 फरवरी) के बाद मि. ए. एस. गोनस्लविस जो भारतीय विदेश सचिव थे तथा पाकिस्तान के विदेश सचिव मि. अब्दुल सत्तार के मध्य हस्ताक्षर किये गये। जिसमें भारत तथा पाकिस्तान की सीमाओं पर तनाव को कम करने के लिये एक रूपरेखा शामिल है।

(1) वे एक दूसरे पर आक्रमण नहीं करेंगे।

(2) दोनों देशों ने यह स्वीकार किया कि वे अधिक से अधिक नियंत्रण रखेंगे तथा सीमाओं के साथ सभी प्रकार की भड़काने वाली कार्यवाहियों पर नियंत्रण करेंगे।

(3) दोनों ही पक्ष इस बात पर सहमत हो गये कि क्षेत्र–क्षेत्र के आधार पर सेनाओं की वापसी की जायेगी तथा इस तरह पहला क्षेत्र रावी तथा चिनाव का क्षेत्र होगा।

2 मार्च 1987 को भारत पाक सीमाओं पर तैनात सेनाओं की वापिसी के लिये एक अन्य समझौता किया गया। इसके अतिरिक्त क्रिकेट कूटनीति (Cricket Diplomacy) के द्वारा भी तनाव कुछ कम हुआ जब पाकिस्तानी राष्ट्रपति जनरल मुहम्मद जिया भारत एवं पाकिस्तान के मध्य खेला गया तीसरा क्रिकेट टेस्ट मैच देखने नई दिल्ली आये।[31]

16 जुलाई 1989 को तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गाँधी ने पाकिस्तान की यात्रा की तथा प्रधानमंत्री बेनजीर भुट्टो के साथ बहुआयामी विषयों पर बातचीत की। यह यात्रा, भारत तथा पाकिस्तान के बीच प्रथम शिखर स्तरीय सम्मेलन था। राजीव गाँधी ने भारत पाक सम्बन्धों के संचालन हेतु सिद्धान्तों को मुख्य आधार प्रदान किया तथा इसमें पंचशील के पाँच सिद्धान्त भी

---

31. राजकिशोर : जब बल्ला बन्दूक बनने लगे, भारत पाक संघर्ष, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, पृ. 27

सम्मिलित थे। द्विपक्षीय सम्बन्धों के सुधार के लिये एक रूपरेखा का निर्धारण करने में भारत पाक शिखर सम्मेलन सफल रहा। प्रधानमंत्री राजीव गाँधी ने पाकिस्तान को स्पष्ट कर दिया कि भारत न तो एक क्षेत्रीय धौंसिया है न ही साम्राज्यी शक्ति। भारत सदैव सभी देशों के साथ विशेषकर अपने पड़ोसियों के साथ अच्छे सम्बन्धों के संचालन में विश्वास करता है जो सभी राज्यों की प्रभुसत्ता की समानता, क्षेत्रीय अखंडता, स्वतंत्रता तथा प्रभुसत्ता के लिये परस्पर आदर के सिद्धान्त पर आधारित है।

नवम्बर 1984 से जब भारत में राष्ट्रीय मोर्चा की सरकारें बनी, उसकी इस प्रतिबद्धता के बावजूद कि उसने अपने पड़ोसियों विशेषकर पाकिस्तान के साथ सहयोग तथा मित्रता का ताना बाना बुनने की दिशा में साहसिक तथा सृजनात्मक उपक्रम किये। जब वह 'कश्मीर मुक्ति' की अपनी नीति पर चल पड़ा। पाकिस्तान ने 1990 के चुनावों के बाद प्रधानमंत्री श्री नवाज शरीफ की सरकार बनने के बाद भी कश्मीर में अव्यवस्था फैलाने वाले आतंकवादियों की सहायता ने व्यवधान पैदा किया।

वास्तव में भारत पाक सम्बन्धों में तब तक कोई क्रियात्मक सुधार नहीं हो सकता जब तक पाकिस्तान की विदेश नीति तथा इसका राष्ट्रवाद भारत विरोधी संस्कृति पर आधारित रहते हैं। 1972 ई. में दोनों देश, शिमला में लाभदायक द्विपक्षवाद का अनुसरण करने तथा लड़ाई झगड़े और संघर्ष की नीति के त्याग पर सहमत हुये थे। इस समझौते द्वारा 1972—89 में भारत पाक सम्बन्धों को एक स्वस्थ आधार प्रदान किया गया जब तक कि दिसम्बर 1989 में कश्मीर समस्या को पुनः भड़का नहीं दिया गया तथा व्यवहारिक रूप में शिमला समझौते की भर्त्सना नही कर दी। शिमला सम्मेलन के प्रति घरेलू विवशताओं के फलस्वरूप पाक दृष्टिकोण में आये परिवर्तन ने भारत—पाक सम्बन्धों के उद्देश्य को करारी चोट पहुँचायी। एक बार पुनः उनमें मनमुटाव तथा तनाव पैदा हो गये। भारत अपनी ओर से शिमला समझौते को पाकिस्तान के साथ अपने द्विपक्षीय सम्बन्धों में मील का पत्थर समझता रहा। परन्तु पाकिस्तान को अब यह समझना उचित नहीं लगता। वह पुनः कश्मीर के प्रश्न पर युद्ध की बातें करने लगा। जुलाई 1991 में एक ओर तो दोनों देशों ने रेल यात्रा समझौते को आगामी तीन वर्षों के लिये बढ़ा दिया परन्तु इसके साथ ही इसी महीने पाकिस्तान ने भारतीय यात्रियों पर पारगमन से सम्बन्धित प्रक्रिया के विशेष प्रतिबन्ध लगाने की भी घोषणा कर दी। अतः भारत पाक सम्बन्ध और भी उलझावपूर्ण तथा संकटपूर्ण बन गये।(32)

---

32. नटवर सिंह : 'शिमला एग्रीमेन्ट एण्ड इण्डो पाक टेन्शन्ज (मेनस्ट्रीम जून 1990)

अन्ततः कहा जा सकता है कि राजीव गाँधी ने लगातार कश्मीर समस्या एवं भारत पाक सम्बन्धों को सुधारने के जो भी प्रयास किये उनका परिणाम उतना ही विपरीत निकला या कहे कि पाकिस्तानी शासक इसे भारत की कमजोरी समझकर उसका कोई उचित प्रत्युत्तर न देकर एक नकारात्मक रुख अपनाये रहे जिससे यह समस्या लगातार उलझती ही चली गई।

वी. पी. सिंह व चन्द्रशेखर का शासन एवं कश्मीर समस्या

दिसम्बर 1989 से जून 1991 तक भारत में दो सरकारों का गठन हुआ। वी. पी. सिंह मात्र 11 माह तथा चन्द्रशेखर 7 माह तक भारत के प्रधानमन्त्री रहे। दोनों ही सरकार अल्पमत की सरकारें थीं एवं अपने अस्तित्व के लिये अन्य दलों पर निर्भर थीं। अतः उनसे विदेशी नीति के क्षेत्र में कोई मूलभूत परिवर्तन की अपेक्षा करना भूल ही कही जायेगी।

नई राष्ट्रीय मोर्चा सरकार ने अपने दक्षिण एशियाई पड़ोसियों विशेषतया पाकिस्तान के साथ भारत के स्वस्थ्य सम्बन्धों को गतिशील बनाने की आवश्यकता पर बल देने से आरम्भ किया किन्तु दो महीने के समय में ही उसे कश्मीर घाटी में पाकिस्तान द्वारा प्रायोजित उग्रवाद का सामना करना पड़ा। इसके साथ पाकिस्तान की ओर से कश्मीर की वास्तविक सीमा नियंत्रण रेखा के साथ सैनिक गतिविधियाँ इस आशय से तेज कर दीं ताकि सशस्त्र तथा प्रशिक्षित आतंकवादियों की भारतीय कश्मीर में घुसपैठ करने में सहायता की जाये जिससे वे अपनी आतंकवादी गतिविधियों से कश्मीर में कानून व्यवस्था को नष्ट कर दें तथा भारत के विरुद्ध लोकप्रिय विद्रोह को भड़का सकें। इसने पंजाब के आतंकवादियों को सुरक्षित आश्रय तथा शस्त्र प्रदान करने की प्रक्रिया को भी गति प्रदान की। शिमला समझौते में जो प्रावधान था उसके अनुसार लाभदायक द्विपक्षवाद के सिद्धान्त पर आधारित मित्रता तथा सहयोग की प्रक्रिया का विकास किया जाना था, लेकिन इस पाकिस्तानी कार्य से उसे गहरा आघात पहुँचा। इसने भारत–पाक सम्बन्धों में गहरा धक्का पहुँचाया।(33)

दिसम्बर 1989 से पाकिस्तान एक बार फिर भारत कश्मीर तथा पंजाब में गड़बड़ी पैदा करने में लग गया। विशेष रूप से यह कश्मीर में खुले रूप से आतंकवादियों को समर्थन देने लगा। शिमला समझौते के प्रति लेशमात्र भी आदर की भावनायें दर्शाये बिना उसने कश्मीर पर

33. Aswini K. Ray : Indian Politics of Indo-Pakistan relations, World focus monthly discussion journal, p.p. 52

अपने परम्परागत दृष्टिकोण का पुनर्कथन किया। अब यह पुनः कश्मीर के लोगो के लिये आत्म–निर्णय के अधिकार की प्राप्ति के लिये जेहाद की बातें करने लगा। आन्तरिक घरेलू विवशताओं ने इसे कश्मीर पर कठोर तथा अतर्कसंगत स्थिति अपनाने के लिये बाध्य किया। प्रारम्भ में श्रीमती बेनजीर भुट्टो ने अपने शासन के लिये सहायता प्राप्त करने हेतु कश्मीर के मुसलमान बन्धुओं के हक में आवाज बुलन्द की, बिना इस बात पर ध्यान दिये कि उसे पाकिस्तान के सिन्ध प्रान्त के मुसलमान बन्धुओं के साथ भी शान्तिपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने के प्रयत्न करने चाहिये। बाद में जब राष्ट्रपति गुलाम इसहाक द्वारा उनकी सरकार को पद्च्युत कर दिया गया तथा एक कामचलाऊ सरकार सेना तथा धार्मिक कट्टरपंथियों के समर्थन से अस्तित्व में आई तो उसने भी जनता का विश्वास प्राप्त करने के लिये कश्मीर तथा भारत विरोधी चाल का सहारा लिया। पाकिस्तान में हुये चुनावों के बाद जब प्रधानमंत्री नवाज शरीफ की सरकार बनी तो उसने भी कश्मीर में उग्रवाद की सहायता तथा विश्व राजनीति में जमकर विरोध तथा आलोचना करने की नीति अपनाये रखी।

अन्ततः राष्ट्रीय मोर्चा सरकार का कार्यकाल इतना अल्प था कि अपनी स्थिरता के लिये ही उन्हें जूझना पड़ा तथा इस समय में विदेशनीति के सम्बन्ध में तथा विशेष रूप से पाकिस्तान सम्बन्ध एवं कश्मीर समस्या के समाधान के लिये कोई विशेष कार्य नहीं किया।

नरसिंह राव का शासनकाल एवं कश्मीर समस्या

जून 1991 में जब भारत में पुनः कांग्रेस (आई) की सरकार बनी तथा श्री पी. वी. नरसिंह राव प्रधानमंत्री बने तो एक बार फिर से भारत–पाकिस्तान सम्बन्धों को सामन्य बनाने पर बल दिया गया। इसके लिये दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों की छः बार अलग–अलग स्थानों पर तथा अलग–अलग अवसरों पर बैठकें हुयी परन्तु कोई विशेष सफलता प्राप्त न की जा सकी। 30 जून 1992 को अपने कार्यकाल के एक वर्ष पूरा हो जाने के बाद की गई प्रेस कान्फ्रेन्स में बोलते हुये प्रधानमंत्री श्री राव ने विशेष रूप से कहा कि "यद्यपि अपने पड़ोसियों के साथ मधुर सम्बन्ध स्थापित करने में हमारी गहरी दिलचस्पी रंग ला रही है तथा पाकिस्तान के साथ हमारा अनुभव निराशाजनक रहा है। हम यही कथन और भी बलपूर्वक 1991–1996 तक के वर्षों के लिये दोहरा सकते हैं। पाकिस्तान द्वारा कश्मीर के उग्रवादियों को समर्थन तथा उन्हें दी जा रही सहायता के साथ–साथ 6 दिसम्बर 1992 की अयोध्या की दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं के समय पाकिस्तानी शासकों

ने भारत विरोधी प्रचार, पाकिस्तान के अड़ियल तथा भारत विरोधी रुख ने उत्तरशील युद्ध काल में भारत–पाक के मध्य संभावित सहयोग तथा मित्रता की समस्त प्रक्रिया व्यर्थ कर दी। पाकिस्तान के भारत विरोधी स्वभाव एवं प्रचार में कोई कमी नहीं आई।[34]

कभी कभार भारतीय नेताओं के साथ अपनी बैठकों में पाकिस्तानी अधिकारी नम्रतापूर्वक तो कहते हैं परन्तु उनके कार्यों में उनके शांतिपूर्वक बात करने की धारणा गलत सिद्ध हो जाती है। भूतपूर्व प्रधानमंत्री शरीफ के भूतपूर्व प्रधानमंत्री नरसिंह राव से बातचीत के भी कई दौर इसी ढंग से बने रहे। हरारे में कामनवेल्थ शिखर सम्मेलन में दोनों प्रधानमंत्रियों ने भविष्य में परिपक्व राजनीतिक सम्बन्धों तथा सूझबूझ के साथ काम करना स्वीकार किया। परन्तु नवाज शरीफ को पाकिस्तान वापसी कर पाक सेना ने भारत के कारगिल सेक्टर की एक बाहरी चौकी पर आक्रमण कर दिया। उनकी सरकार ने कश्मीरियों द्वारा वास्तविक नियंत्रण रेखा पार करने का समर्थन किया तथा पाकिस्तान के क्रिकेट कन्ट्रोल बोर्ड ने भारत में होने वाली पाँच दिवसीय क्रिकेट मैचों की श्रृंखला को अनिश्चित काल के लिये रद्द कर दिया। 1991 में भारत–पाक सम्बन्ध ऐसे ही चलते रहे। 6 दिसम्बर 1992 की अयोध्या दुर्घटना के बाद पाकिस्तान विवादास्पद ढाँचे के गिराये जाने को लेकर मुस्लिम देशों को अपने पीछे लगाने में जुटा रहा। यह भारत को "हिन्दू भारत" के रूप में पेश करके उसे एक मुसलमान विरोधी, विशेषतया कश्मीरी मुसलमानों के दमनकर्त्ता देश के रूप में प्रस्तुत करता रहा। यह भारत को हमेशा से ही एक ऐसे देश की तरह पेश करता रहा जहाँ मुसलमानों के मानवीय अधिकारों का पूरी तरह से हनन हो रहा था।

पाकिस्तान की आन्तरिक कठिनाइयाँ, पाकिस्तान की राजनीति में उत्पन्न तीव्र विरोधात्मक संघर्ष तथा पाकिस्तान में विद्यमान राजनीतिक अस्थिरता, पाकिस्तान शासकों को इस बात के लिये भारत से घृणा या भारत को कुचलने की बात करते हुये भारत विरोधी प्रचार, घोषणाओं तथा नीतियों के द्वारा ही प्रत्येक नया शासक अपनी सत्ता के औचित्य स्थिरता और विश्वसनीयता को बढ़ाने का यत्न करता रहा है। जब नवाज शरीफ के बाद बेनजीर ने सत्ता की बागडोर संभाली तो उन्होंने भी कठोर से कठोर भारत विरोधी घोषणायें करके अपनी सरकार की सत्ता की विश्वसनीयता बढ़ाने का प्रयास किया।[35]

जनता में इसी कारण 1947 से आज तक भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्ध मुख्यतः

---

34. वी. पी. दत्ता : इण्डियन फारेन पॉलिसी
35. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 320

तनावपूर्ण ही रहे है। पाकिस्तानी आई. एस. आई. भारतीय राजदूतों तथा वाणिज्य दूतों के साथ दुवर्यवहार भारत का पाकिस्तानी राजदूतों को निष्कासित करने का निर्णय, पाकिस्तान द्वारा भारत को मुस्लिम विरोधी हिन्दू राष्ट्रवादी देश कहना, पाकिस्तान द्वारा कश्मीर तथा पंजाब में उग्रवादियों को नैतिक समर्थन तथा शस्त्रों से सहायता के रूप में निरन्तर हस्तक्षेप आदि के अनेक ऐसे वर्तमान उदाहरण हैं। जो भारत–पाकिस्तान के तनावपूर्ण सम्बन्धों को दर्शाते हैं। पाकिस्तान तथा भारत के प्रधानमंत्रियों के या विदेशमंत्रियों के बीच, लोगों को अपनी कान्फ्रेन्सों तथा अन्य अधिकारी तथा गैर अधिकारी स्तर की बातचीत के स्वरूप के बारे में विचार व्यर्थ ही दिखाई देता है।(36)

एच. डी. देवगौड़ा युग और कश्मीर समस्या

एच. डी. देवगौडा ने 11 माह शासन किया। इन्होंने प्रधानमंत्री बनने के बाद विदेश सचिव स्तर की वार्ता शुरू करने के लिये पाक के साथ पहल की। वर्ष 1997 में पाक में भी सत्ता परिवर्तन हुयी। नवाज शरीफ प्रधानमंत्री बने। एच. डी. देवगौड़ा कार्यकाल में मार्च 1997 में भारत पाक के बीच विदेश सचिव स्तर पर वार्ता हुई। इसी दौरान विदेशमंत्री इन्द्र कुमार गुजराल और पाक विदेशमंत्री की वार्ता 9 अप्रैल 1997 को सम्पन्न हुई। इस तरह भारत–पाक के बीच में पुनः 8 वर्षों बाद सम्बन्धों को स्थापित करने की प्रक्रिया शुरू हुई। इसके बाद में 29 अप्रैल 1997 को देवगौड़ा की सरकार गिर गई।

अतः यह दृष्टव्य है कि श्री एच. डी. देवगौड़ा ने अपने अल्प शासन में ही पाकिस्तान एवं कश्मीर समस्या से सम्बन्धित रिश्तों पर बातचीत आरम्भ की थी परन्तु बातचीत कुछ सार्थकता की ओर जाती उससे पहले ही देवगौड़ा जी की सरकार का पतन हो गया और इस दिशा में कुछ विशेष न कर सके।

इन्द्र कुमार गुजराल युग और कश्मीर समस्या

श्री देवगौड़ा की सरकार गिर जाने के बाद में श्री इन्द्र कुमार गुजराल 21 अप्रैल 1997 को प्रधानमंत्री भी बने। इनके कार्यकाल में माले नवम् सार्क सम्मेलन में (21 मई 1997) प्रधानमंत्री नवाज शरीफ और इन्द्र कुमार गुजराल के बीच भारत–पाक सम्बन्धों को लेकर वार्ता

---

36. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 320

हुई, जिसके आधार पर विदेश सचिव स्तर की वार्ता शुरू करने की सहमति हुई।

इनके कार्यकाल में 19–22 जून 1997 में विदेश सचिव स्तर की वार्ता सम्पन्न हुई। यद्यपि विदेश सचिव स्तर की वार्ता आयोजित होना भी अच्छी बात हो सकती है। इसी वर्ष 1997 में सम्पन्न हुये U.N.O. के सम्मेलन में पुनः दोनों प्रधानमंत्रियों की भेंट हुयी। जिसमें व्यापारिक सम्बन्धों की सुधारने की दिशा में सहमति हुई। यद्यपि इनके कार्यकाल में मुक्त व्यापार शुरू करने की भी पहल हुई है।[37]

इसी वर्ष जून 1997 में सार्क उपक्षेत्रीय संगठन के निर्माण पर भी बैंकाक में भारत पाक के बीच वार्ता हुई थी। इससे यह तो साबित हो जाता है कि भारत–पाक के बीच में वार्ताओ का दौर शुरू हुआ। श्री गुजराल ने 18 मार्च 1998 तक पद पर कार्य किया। अतः अपने अल्प कार्यकाल में गुजराल जी ने अपने पड़ोसियों (पाक, बांग्लादेश, नेपाल, भूटान आदि) से सम्बन्धों को सुधारने के लिये लागू गुजराल डॉक्ट्रेन पर पूरी तरह से अमल किया।

अटल बिहारी बाजपेयी युग और कश्मीर समस्या

19 मार्च 1998 को अटल बिहारी बाजपेयी पुनः प्रधानमंत्री बने। इनके कार्यकाल में भारत–पाक के बीच तनाव भी रहा और सम्बन्धों को सामान्य करने की दिशा में पहल भी की गई। अप्रैल 1998 में पाक ने गौरी प्रक्षेपास्त्र का परीक्षण किया जिसे लेकर भारतीय सुरक्षा को खतरा माना गया। इनके कार्यकाल में भारत ने 11 व 13 मई 1998 को पाँच परमाणु परीक्षण किये पाक ने भी 28 मई 1998 को परमाणु परीक्षण किये।

जुलाई 1998 में 10वें सार्क शिखर सम्मेलन में श्रीलंका के कोलम्बो में नवाज शरीफ और बाजपेयी के बीच वार्ता हुई जिसमें दोनों के बीच व्यापक विषयों पर चर्चा की गई। भारत–पाक के बीच संवाद की प्रक्रिया शुरू करने पर भी सहमति हुई कश्मीर समस्या को हल करने के लिये कारगर कदम उठाने पर सहमति हुई।

कोलम्बो में विदेश सचिव स्तर की बैठक भी भारत–पाक के बीच में आयोजित हुई थी। दोनों ने एक दूसरे के प्रस्ताव रखे। जिसमें मानवाधिकार, सीमा पर तनाव, कश्मीर सैनिक चौकियों, बंदियों आदि पर चर्चा हुई। भारत ने पाक प्रस्तावों को अस्वीकृत कर दिया। जिसका मुख्य कारण यह था पाक तीसरे पक्ष की सहायता से कश्मीर समस्या को हल करना चाहता था।

---

37. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 320

जिसे भारत ने अस्वीकृत करते हुये कहा कि कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है। अतः यह वार्ता भी विफल रही।[38]

पाक के परमाणु परीक्षण करने के बाद होने वाली नई वार्ताओं में नई समस्यायें आने लगी थीं। पाक की सैनिक क्षमता में भी असीमित वृद्धि हुई थी। इसका प्रभाव भारत–पाक सम्बन्धों पर भी पड़ा था। भारत तथा पाक के परमाणु परीक्षण की तीखी आलोचना हुई थी तथा दोनों ही राष्ट्रों को अनेक प्रतिबन्धों का सामना भी करना पड़ा था।

बाजपेयी कार्यकाल में पाक भी भारत की तरह N.P.T. व CT. BT. पर हस्ताक्षर करने से इन्कार करता रहा। इसका प्रभाव भारतीय विदेश नीति और आपसी सम्बन्धों पर भी पड़ा है। अमेरिका–पाक सम्बन्धों पर भी आणविक परीक्षण का प्रभाव रहा। अमेरिका ने भारत–पाक दोनों पर समान आर्थिक प्रतिबंध लगाये थे, इसका भी प्रभाव अधिक पड़ा। इसका परिणाम यह रहा कि पाक भारत की हर मामले में बराबरी करने लग गया।[39]

सितम्बर 1998 में डरबन (दक्षिणी अफ्रीका) में सम्पन्न हुये 32वें गुट निरपेक्ष आन्दोलन के शिखर सम्मेलन में कश्मीर का मुद्दा उठाये जाने से भी भारत–पाक सम्बन्धों पर प्रभाव पड़ा। इसके बाद में अक्टूबर 1998 में इस्लामाबाद में विदेश सचिव स्तर की वार्ता पुनः आयोजित की गई, जिसमें सम्बन्ध सुधारने, सीमा पर तनाव कम करने आदि पर चर्चा हुई। यह वार्ता 13 माह बाद में आयोजित हुई। इस वार्ता में छः मुद्दों पर चर्चा करते हुये वार्ताओं को निरन्तर आयोजित करने पर सहमति हुई।

इस वार्ता में एक दूसरे के विरुद्ध प्रचार रोकने, परमाणु खतरा कम करने, एक दूसरे के बीच विश्वास बढ़ाने पर सहमति हुई। इसी के साथ लाहौर दिल्ली बस सेवा शुरू करने पर भी सहमति प्रकट की गई थी। भारत–पाक के बीच सम्बन्धों को सुधारने की प्रक्रिया शुरू होने से दोनों के ही दृष्टिकोण में परिवर्तन आया।

भारत–पाक के बीच विदेश सचिव स्तर की वार्ता नई दिल्ली में नवम्बर 1998 में पुनः सम्पन्न हुई। यद्यपि पिछली वार्ता अक्टूबर 1998 में आयोजित हुई थी उसकी दिशा में आगे बढ़ने के लिये यह आयोजित हुई। यद्यपि नवम्बर 1998 की वार्ता भी अनिर्णीत ही रही थी। इस वार्ता

---

38. दैनिक जागरण, कानपुर, 1998
39. Aswini K. Ray : Indian Politics of Indo-Pakistan relations, World focus monthly discussion journal, p.p. 52

में यह देखने को मिला कि पाक की ओर से नये दावे पेश किये गये। इस कारण से यह वार्ता भी असफल रही। केवल इस वार्ता में लाहौर–दिल्ली बस सेवा शुरू करने की अंतिम प्रक्रिया पर बल दिया गया।

भारतीय प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेयी ने 20 फरवरी 1999 को बस द्वारा पाक की यात्रा की । भारतीय प्रधानमंत्री की इस यात्रा में एक दूसरे की कड़वाहट दूर की गई। इस यात्रा के दौरान लाहौर समझौता किया गया। प्रधानमंत्री नवाज शरीफ ने बाजपेई जी का गर्मजोशी के साथ पाक सीमा पर स्वागत किया। भारत–पाक सम्बन्धों में नया युग, नई समझ विकसित कर सहयोग, सद्‌भावना की शुरूआत की गई। अब भारत–पाक के बीच विदेश सचिव स्तर की वार्ता नियमित रूप से आयोजित होगी। एक दूसरे को प्रक्षेपास्त्रों के परीक्षण की पूर्व सूचना दिये जाने, एक दूसरे के आन्तरिक मामलों में दखल नहीं देने सम्बन्धी व्यापक सहमति हुई।

इस तरह 21वीं शताब्दी में दोनों ही राष्ट्रों ने मधुर सम्बन्धों की स्थापना करके सुलह का मार्ग प्रशस्त किया। यद्यपि अभी भी व्यापक पैमाने पर पहल करने की आवश्यकता है। आतंकवाद कश्मीर, सियाचिन जैसे मुद्दों को भविष्य में हल किये जाने के लिये पाक को भारत के साथ सहयोगात्मक रुख अपनाने में भी अपनी रुचि रखनी चाहिये तभी निश्चित रूप से भारत–पाक सम्बन्धों में सुधार होगा।[40]

परन्तु अप्रैल–मई 1999 में पाकिस्तान समर्थित कथित घुसपैठियों ने भारतीय सीमा के कारगिल क्षेत्र में घुसपैठ कर लाहौर समझौता एवं घोषणा के विपरीत भारतीय सीमा में अवैध कब्जा कर लिया जिसे भारतीय सेना ने "आपरेशन विजय" के माध्यम से पुनः प्राप्त कर लिया; परन्तु भारत एवं पाकिस्तान के सम्बन्धों में पुनः कड़वाहट आ गयी। जिसे आगरा शिखर सम्मेलन में भी नहीं भुलाया जा सका। अतः भारत का एक और शान्ति का प्रयास निष्फल साबित हुआ।

अन्ततः बाजपेयी काल ने भारत–पाक सम्बन्धों में कटुता तथा शान्ति दोनों ही क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान किया। कारगिल के घुसपैठियों को निकालकर आपरेशन विजय के माध्यम से अपनी विजय के साथ जहाँ भारत पाक रिश्तों में कटुता की चरम सीमा दिखाई दी तो वहीं दूसरी ओर जम्मू कश्मीर में एकतरफा युद्ध विराम घोषितकर तथा कश्मीरी कट्टर पंथियों के साथ वार्ता का न्योता दे शान्ति के लिये चरम प्रयास किये गये। कारगिल के लघु युद्ध को भूलकर

---

40. राजकिशोर : तो क्या कारगिल घोषणा झूठी थी, भारत पाक संघर्ष, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली

पाकिस्तानी शासक मुशर्रफ से आगरा में बातकर बाजपेयी सरकार ने कश्मीर में शान्ति एवं पाकिस्तान से एक अच्छे पड़ोसी की तरह व्यवहार करने का भरपूर प्रयास किया। वहीं दूसरी ओर कश्मीर में 2002 में शान्तिपूर्ण चुनाव में कई कट्टरपंथी पार्टियों के लोगों का निर्दलीय प्रत्याशी के रूप में चुनाव में भाग लेना इस बात का प्रमाण है कि कश्मीरी जनता भारतीय लोकतंत्र में विश्वास करती है। किसी भी पार्टी को स्पष्ट बहुमत न मिलना कश्मीरी जनता की जागरूकता का स्पष्ट प्रमाण है।

अन्ततः कहा जा सकता है कि बाजपेयी का शासन काल भारत पाक सम्बन्ध एवं कश्मीर समस्या के समाधान के लिये विगत समय में मील का पत्थर साबित हो सकता है। इस सन्दर्भ में कि भारतीय विदेश नीति में कुछ बदलाव की आवश्यकता है के उत्तर में पूर्व प्रधानमंत्री श्री इन्द्र कुमार गुजराल ने कहा कि मैं समझता हूँ कि भारतीय विदेशनीति समय की कसौटी पर खरी उतरी है। दुनिया के तकरीबन सारे देश हमारी नीति की सराहना करते हैं, हमारी नीति में सह अस्तित्व की भावना है। हम समतापूर्ण, न्यायप्रिय और सुखमय विश्व का सपना देखते हैं। इसलिये भारत की विदेश नीति में फिलहाल किसी बदलाव की आवश्यकता नहीं है।[41]

✦✦✦

41. कमलेश त्रिपाठी : पाकिस्तान से हमें खुद निपटना होगा, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार, 15 जनवरी, हस्तक्षेप पृ. 1

तृतीय अध्याय

अध्याय तृतीय

पाकिस्तानी विदेश नीति एवं कश्मीर समस्या

पाकिस्तान का अभ्युदय :

पाकिस्तान का निर्माण दक्षिण एशिया में स्थित भारतीय भू–भाग को विभाजित करते हुये 14 अगस्त 1947 को इस्लामिक राज्य के रूप में ब्रिटिश काल में रही औपनिवेशिक नीति के परिणामस्वरूप किया गया। इसी तिथि को अलग राष्ट्र के रूप में स्वतंत्रता भी प्रदान की गई।

तथापि अंग्रेजी शासन की फूट डालो और शासन करो तथा विभाजित करो की नीति के कारण भारतीय संस्कृति, भूगोल, जनसमुदाय, राष्ट्र को विभाजित किये जाने से इसका प्रभाव राजनीतिक रूप से अभी समाप्त नहीं हुआ है। वैसे अंग्रेजों ने 1906 में मुस्लिम लीग की स्थापना करने से लेकर 1947 तक पाक का निर्माण करने में मुस्लिम सम्प्रदाय को भरपूर लाभ पहुँचाने का प्रयास किया लेकिन पाकिस्तान निर्माण की माँग 1940 के बाद से भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में स्पष्ट रूप से उभरकर आयी थी। भारतीय विभाजन एक्ट 1947 के द्वारा एक राष्ट्र के ही दो राष्ट्र अस्तित्व में आये।[1]

(1) पाकिस्तान

(2) भारत

पाकिस्तान के संस्थापक के रूप में मोहम्मद अली जिन्ना की भूमिका सर्वाधिक रही थी। यही पाक के प्रथम गर्वनर जनरल बनाये गये थे।

14 अगस्त 1947 को पाक का निर्माण किया गया तब इसकी स्थिति इस प्रकार थी।

(1) पूर्वी पाकिस्तान

(2) पश्चिमी पाकिस्तान

इस आधार पर दिसम्बर 1971 तक पाक की राजधानी ढाका रही। दिसम्बर 71 में भारत पाक युद्ध उपरान्त पूर्वी पाकिस्तान बांग्लादेश के रूप में उदय होकर आया। इसके बाद पाकिस्तान की राजधानी इस्लामाबाद में स्थापित की गयी। इस घटना के कारण पाक की भौगोलिक स्थिति भी परिवर्तित हुयी। अब पाक का परिचय इस प्रकार है –

1. कुल क्षेत्रफल 79095 वर्ग किलोमीटर

---

1. सी. एम. कोली : प्रमुख देशों की विदेश नीतियाँ, साहित्यागार, 2000

2. पाक की सीमायें

(A) पाक के पूर्व और दक्षिण पूर्व में भारत

(B) पाक के पश्चिम में ईरान

(C) पाक के उत्तर में अफगानिस्तान

(D) पाक के दक्षिण में अरब सागर

इस तरह पाक दक्षिण से उत्तर तक 1600 किमी. और पश्चिम से पूर्व तक 880 किमी. तक फैला हुआ है। इसी के साथ हम पाक के महत्वपूर्ण भू भाग को इस प्रकार विभाजित कर सकते हैं(2) –

(A) बलूचिस्तान का पठार

(B) सिन्ध के मैदान और मरुक्षेत्र

(C) सिन्ध

(D) रेगिस्तान क्षेत्र

पाक विदेश नीति के निर्धारक तत्व

14 अगस्त 1947 से लेकर अपनी स्वतंत्रता की स्वर्ण जयन्ती समारोह मनाने एवं पाक द्वारा 28 मई 1998 को परमाणु परीक्षण करने तक पाक की विदेश नीति निर्धारक तत्व निम्न प्रकार है –

1. राष्ट्रीय हित :

पाक की विदेश नीति का राष्ट्रीय हित सर्वोपरि तत्व रहा। इस राष्ट्रीय हित के मुख्य कारक इस प्रकार हैं –

(A) पाक का एकीकरण

(B) पाकिस्तान की संस्कृति

(C) सुरक्षात्मक दृष्टिकोण या सामरिक सुरक्षा की खोज(3)

2. भू राजनीतिक :

पाकिस्तान नव स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में उदय होने के साथ ही विश्व राजनीति में

---

2. एस. अहमद काजी : ए ज्योग्राफी ऑफ पाकिस्तान, कराची 1969 पृ. 10–15
3. डॉ. रियाज : पाक की विदेश नीति के निर्धारक तत्व, परीक्षा मंथन, Vol. IX, 1995

अपनी भूमिका रखने की लालसा रखता था। इसी कारण वह बड़ी शक्तियों विशेषकर अमेरिका के साथ समायोजन कर भू राजनीतिक पहल करने में सक्षम रहा। पाक की विदेश नीति में यह भी पाया गया कि वह चीन, रूस व पश्चिमी राष्ट्रों के साथ भी महत्वपूर्ण भूमिका को निर्धारित करने वाला राष्ट्र रहा है। वह कश्मीर समस्या के माध्यम से विश्व के राष्ट्रों को प्रभावित करने की नीति रखता रहा है। एशियाई राष्ट्रों में भी पाक की अपनी पृथक पहचान है।

3. अन्तर्राष्ट्रीय वातावरण :

1947 में विश्व राजनीति का वातावरण जिन समस्याओं को लेकर संघर्ष कर रहा था उनका प्रभाव पाक की विदेश नीति के निर्धारण पर पड़ा। पाक अन्तर्राष्ट्रीय वातावरण के अनुकूल ही विदेश नीति का निर्धारण करना चाहता था। द्वितीय विश्व युद्ध के उपरान्त शीत युद्ध, विचारधारात्मक संघर्ष, बड़ी शक्तियों का उदय होने से पाक भी प्रभावित था। पाकिस्तान एक ओर तो अपने को इस्लामिक देशों के नेतृत्व की आकांक्षा रखता है एवं दूसरी ओर अमेरिका से आर्थिक मदद प्राप्त कर दक्षिण एशिया में अमेरिका का नेतृत्व भी करता है। अमेरिका निस्सन्देह पाकिस्तान और अफगानिस्तान के रास्ते मध्य एशिया में कदम रखना चाहता है। पाकिस्तान इस मैदान में उसका मुकाबला कर रहा है। पाकिस्तान अपने को इस्लामी दुनिया का नेता समझता है। अमरीका यह नहीं चाहेगा कि पाकिस्तान इस्लाम के नारे बुलन्द करके मध्य एशिया पर नियंत्रण करे और कश्मीर को भी अपना अड्डा बनाकर चीन से याराना कायम करे। इन हालात में जबकि कश्मीर का महत्व बहुत बढ़ गया है और भारत अमरीका के लिये किसी तरह का खतरा नहीं है, देखना यह है कि राष्ट्रपति क्लिंटन कश्मीर के बारे में क्या प्लान पेश करते हैं। उधर पाकिस्तान जो आर्थिक लिहाज से दिवालियेपन की कगार पर है, क्या अमरीका को दुश्मन बनाने की गलती करेगा।[4] इस तरह पाकिस्तान निम्नलिखित अन्तर्विरोधी तत्वों को अपनी विदेश नीति के संचालन में महत्व देता है।

(i) इस्लामिक नेतृत्व

(ii) बड़े देशों से घिरे होने के कारण सुरक्षा संकट का अहसास

(iii) महाशक्तियों का मुहरा बनने को तत्पर

(iv) भारत विरोधी मानसिकता

---

4. जमनादास अख्तर : अमरीकी रुख में बदलाव सम्भव, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार, 15 जनवरी 2002, पृ. 3

पाकिस्तानी विदेश नीति की विशेषतायें

1947 से लेकर सन् 2000 तक जब हम पाक विदेश नीति का विश्लेषण करते हैं तो हम पाते हैं कि पाक की विदेश नीति में निरन्तरता, गतिशीलता आदि का समावेश है। किन्तु फिर भी पाक की विदेश नीति की व्यवहार में निम्न विशेषतायें और भी हैं –

1. सैनिक शासन का अत्यधिक प्रभाव।
2. लोकतांत्रिक विदेश नीति का अनुसरण नहीं।
3. कश्मीर मसला पाक विदेश नीति का केन्द्रीय बिन्दु ।
4. अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं, संगठनों, शिखर सम्मेलनों में कश्मीर पर तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त करना।
5. स्थायित्व, शान्ति का अभाव।
6. पाक द्वारा परमाणु परीक्षण कर आणविक क्लब के लिये दावे पेश करना।
7. निःशस्त्रीकरण के स्थान पर शस्त्रों की दौड़ आरम्भ करना।
8. अमेरिकी हितों की रक्षा के लिये कार्य करना।
9. आतंकवादी गतिविधियों को संचालित कर अस्थिरता उत्पन्न करना व अपना महत्व प्रतिपादित करना।
10. भारत के साथ शत्रुतापूर्ण रवैया अपनाना और समय–समय पर किये जाने वाले समझौतों को अस्वीकार करना।
11. अफगान में संघर्ष, तनाव बनाये रखना।
12. क्षेत्रीय संगठन सार्क में भी तनावपूर्ण दृष्टिकोण अपनाना।
13. शीतयुद्ध काल में गुट विशेष से सम्बद्ध होकर अपनी रक्षा करना।
14. चीन से सम्बन्ध बढ़ाना, सैनिक सहायता आर्थिक सहायता प्राप्त करना।
15. तटस्थता, असंलग्नता की नीति का विरोध करना।

भारत विभाजन से पूर्व भारतीय मुसलमान को एक देश की तलाश थी। आज पाकिस्तान एक देश है जिसे राष्ट्र की तलाश है और उन्हें इस बात का विश्वास नहीं है कि पठान, पंजाबी, मुल्तानी, ब्लूची, सिंधी और मुजाहिर एक राष्ट्र हैं कि छैः। वे समझ नहीं पा रहे कि वे भारतीय पंजाबियों और सिन्धियों के साथ किस तरह के रिश्ते रखें।(5)

5. के. आर. मलकानी : पाकिस्तान के आगे पहचान का संकट है, जनसत्ता, 11–1–92

पाकिस्तान के श्री मुमताज हुसैन राठौर मानते हैं कि जम्मू–कश्मीर पाकिस्तान का हिस्सा नहीं है। पाक अधिकृत कश्मीर तभी तक पाकिस्तान का हिस्सा है जब तक कि कश्मीर समस्या हल नहीं हुई। वे जम्मू कश्मीर को अलग प्रभुसत्ता सम्पन्न देश बनाने का सपना देख रहे हैं। इस सिलसिले में जम्मू–कश्मीर लिबरेशन फ्रंट के नेता अमानुल्ला खान, उनके सहयोगी हैं। अमानुल्ला खान भी आजाद कश्मीर की वही धारणा पेश करते रहे हैं जिसमें जम्मू कश्मीर न तो भारत का हिस्सा है और न पाकिस्तान का, बल्कि स्वतंत्र देश है।

लियाकत अली खान की विदेश नीति एवं कश्मीर समस्या

पाक की स्वतंत्रता कायम होने पर मोहम्मद अली जिन्ना पहले गवर्नर जनरल बने। इसके साथ ही पहले पाक के प्रधानमंत्री लियाकत अली खान नियुक्त किये गये। इन्होंने 14 अगस्त 1947 से लेकर अक्टूबर 1951 तक पाक प्रधानमंत्री पद पर कार्य किया। यह मुस्लिम लीग के नेता रहे।

पाक अपनी राष्ट्रीय परम्पराओं को बरकरार रखना चाहता था। जैसे इतिहास, संस्कृति आदि को धरोहर मानता था। इसकी रक्षा करना और इनको बनाये रखना विदेश नीति का मुख्य हिस्सा रहा है। मुस्लिम सम्प्रदाय से जुड़ना और एकता स्थापित कर इस्लामिक धर्म को महत्वपूर्ण स्थान देना पाक की विदेश नीति की राष्ट्रीय परम्परा रही है।

पाक में इसके दो स्वरूप देखने को मिलते हैं –

1. राजनीतिक दृष्टि से धार्मिककरण करना।
2. धार्मिक दृष्टि से राजनीतिक गतिविधियाँ संचालित कर धर्म को बढ़ावा देना।

इन आधारों पर पाक ने अपनी पहचान इस्लामिक राष्ट्र के रूप में बनाने का प्रयास किया जिसमें वह सफल भी हुआ है। यहाँ भूतपूर्व राष्ट्रपति अयूब खान ने लिखा था "पाक जब भी अपनी पहचान बनाने की कोशिश करता है तब वह अपनी विचारधारा को ही खो देता है।"[6]

कश्मीर समस्या का जन्म इसी दृष्टिकोण पर अत्यधिक बल देने के कारण हुआ कि एक इस्लामिक राज्य या बहुसंख्यक इस्लाम मतावलम्बियों के निवास के बावजूद वह हिन्दू राष्ट्र का अंग कैसे हो सकता है।[7] यह विचारधारा पाक द्वारा कश्मीर को भारत का अभिन्न अंग

---

6. मोहम्मद अयूब खाँ : पाकिस्तान वर्क्स पेक्टीवस ऑन फोरेन अफेयर्स, न्यूयार्क 1960 पृ. 547
7. जावेद असलम : लियाकत कालीन विदेश नीति एवं कश्मीर, यूथ कम्पटीशन टाइम Vol. IX पृ. 167

स्वीकार नहीं करने देता है। अतः प्रारम्भ से ही कश्मीर समस्या भारत पाक सम्बन्धों में एक महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान करती रही है।

लियाकत कालीन पाक विदेश नीति के उद्देश्य :

1. पाक सीमाओं की सुरक्षा करना।
2. कश्मीर को अपने राज्य में मिलाना।
3. पड़ोसी राष्ट्रों से संघर्ष, तनाव को बनाये रखना।
4. पड़ोसी राष्ट्रों के साथ युद्ध लड़ना।

पाक की विदेश नीति के बारे में यह तथ्य भी हमारे सामने आया है कि पाक की विदेश नीति में व्यक्तित्व का भी महत्वपूर्ण स्थान रहा है।[8] पाक में नेताओं के व्यक्तित्व के ही कारण सृजनात्मक और विध्वंसात्मक क्षमताओं का निर्माण सम्भव हो पाया है। अतः पाक के नेताओं की गहरी भावनायें, विश्वास, व्यक्तिगत उद्देश्य की भी छाप विदेश नीति पर रही है। इसी कारण से पाक साधारण लक्ष्यों की पूर्ति करने के साथ–साथ असाधारण उद्देश्यों की पूर्ति करने में निरन्तर सफल होता रहा है।[9]

अतः इस कार्यकाल के लिये हम यही कह सकते हैं कि पाक ने अपनी विदेश नीति का विकास भी किया, क्रियान्वयन भी किया और उसका प्रसार भी किया है। यद्यपि पाक के अन्तर्गत सरकारें और सैनिक शासन स्थापित होते रहे हैं। उनके दौरान दिये गये भाषण, वक्तव्य आदि से यह स्पष्ट हो जाता है कि पाक विदेश नीति, राष्ट्रीय सुरक्षा, आर्थिक विकास, सैन्य क्षमता के विकास के लिये निरन्तर चिन्ता व्यक्त करती रही है। फिर भी हम पाक विदेश नीति के अन्तर्गत यह पाते हैं कि इसके परिणाम नकारात्मक ही रहे हैं। इससे पाक की अन्तर्राष्ट्रीय पहचान को भी क्षति पहुँची है। अलोकप्रियता के कारण वह घरेलू समस्याओं का निराकरण भी नहीं कर सका। इस दृष्टि से भी विदेश नीति के घरेलू परिणाम भी सकारात्मक नहीं रहे हैं।[10]

पाक की विदेश नीति में भिन्न–भिन्न कार्यकाल में भिन्न–भिन्न व्यक्तित्व की छाप विदेश नीति पर हमें देखने को मिलती है। इस दृष्टि से भी वैकल्पिक उद्देश्यों की पूर्ति ही कर

---

8. हेराल्ड स्प्राउट और मारग्रेट स्प्राउट : फाउन्डेशन्स आफ इन्टरनेशन पोलिटिक्स, न्यूयार्क, 1962 पृ. 287
9. हेराल्ड एण्ड मारग्रेट स्प्राउट : वही, पृष्ठ 287
10. Michael Brecher : "Elite Images an Foreign Policies" Pacific Affairs spring and summer 1967 p.p. 61

सकी है। राष्ट्र के लिये प्राथमिक स्तर पर क्या आवश्यक है और क्या आवश्यक नहीं है। इसके बीच में राष्ट्रीय सुरक्षा को सर्वोपरि माना गया। यही राष्ट्रीय सुरक्षा भी पाक ने स्वयं आत्म निर्भर होकर प्राप्त नहीं की है। पाक ने भिन्न–भिन्न कार्यकाल की विदेश नीति में सैन्य संतुलन को बिगाड़ने का कार्य किया। जैसे कि पाक सेनाओं पर सबसे अधिक व्यय किया गया। जो कि आर्थिक स्थिति के कारण पाक को नहीं करना चाहिये था। पाक ने यह आर्थिक व्यय विदेशी सहायता से प्राप्त होने के उपरान्त किया। इससे पाक प्रारम्भिक स्तर पर ही अमेरिका जैसी शक्ति के हाथों की कठपुतली बनकर रह गया। पाक ने ऐसा करके अपनी विदेश नीति का संचालन अमेरिकी हितों के अनुकूल किया था। इससे पाक को विदेश नीति की कीमत भी चुकानी पड़ी है। पाक को यह आगे चलकर महसूस हो गया था कि अमेरिका के साथ संलग्न रहकर वह अपने स्वयं के राष्ट्रीय उद्देश्यों की पूर्ति नहीं कर सकता है। इस कारण लियाकत युग की विदेश नीति आगे चलकर परिवर्तित हुयी थी। यद्यपि पाक ने विदेश नीति के निर्धारण में आने वाली कठिनाइयों का अधिक सामना किया था एवं अपने विदेशी आकाओं के बहकावे तथा धार्मिक कट्टरता के चलते कश्मीर की समस्या को लगातार उलझाये रखा।(11)

मोहम्मद अली काल एवं कश्मीर समस्या

1953 में पाक में प्रथम बार सैनिक शासन स्थापित हुआ। 17 अप्रैल 1953 को निजामुद्दीन मंत्रिमण्डल को बर्खास्त कर दिया गया। इसके स्थान पर अमेरिका में पाक के राजदूत मोहम्मद अली को पाक का नया प्रधानमंत्री बनाया गया। इन्होंने 6 अक्टूबर 1958 तक पाक की विदेश नीति का संचालन किया था।(12)

मोहम्मद अली ने अपने कार्यकाल में कश्मीर समस्या के समाधान के लिये अनेक प्रयास किये। सर्वप्रथम 1953 ई. की गर्मियों में पाकिस्तान तथा भारत ने कश्मीर समस्या को सुलझाने के लिये द्विपक्षीय बातचीत आरम्भ की। जून 1953 को क्वीन कारपोरेशन के समय पर जो पहली द्विपक्षीय बातचीत आरम्भ हुयी, वह जुलाई में कराची तथा अगस्त में दिल्ली में भी जारी रही। बातचीत सद्भावना के वातावरण में आरम्भ हुयी परन्तु शीघ्र ही कुछ एक नकारात्मक बातों के उभरने के कारण ही इसमें कटुता आ गई। 9 अगस्त 1953 को शेख अब्दुल्ला को पदच्युत

---

11. खालिद बी. सईद : पाकिस्तान की विदेश नीति का विश्लेषण
12. एस.पी. वर्मा और के. पी. मिश्रा : दक्षिण एशिया में विदेश नीतियाँ, पृ. 70–80

कर दिया गया तथा उसे राष्ट्र विरोधी गतिविधियों के लिये भारत की सरकार द्वारा भारत में ही नजरबन्द कर दिया गया। फरवरी 1954 ई. में कश्मीर की संवैधानिक सभा ने राज्य के भारत में विलय की एकमत होकर पुष्टि की। इन दोनों परिवर्तनों ने वातावरण को बोझिल तथा सन्देहास्पद बना दिया। बातचीत को अधिक क्षति तब पहुँची जब 1954 में अमरीका द्वारा पाकिस्तान को भारी मात्रा में सैनिक साजो सामान देने तथा पाकिस्तान द्वारा अमरीका की दक्षिण पूर्वी एशिया के लिये बनाई गई सैनिक सन्धि में शामिल होने की घोषणा की गई। पाकिस्तानी गवर्नर जनरल गुलाम मोहम्मद द्वारा किये गये प्रयत्नों तथा भारत द्वारा सद्भावना का उत्तर सद्भावना में देने के बावजूद कश्मीर समस्या के हल की दिशा में कोई प्रगति नहीं की जा सकी।[13] अमरीका द्वारा प्रायोजित सैनिक गुट में शामिल होने के पाकिस्तान के निर्णय को भारत ने अपने ऊपर दबाव डालने का उपकरण माना। परिणामस्वरूप कश्मीर पर भारत की स्थिति को तथा कश्मीर के भारत में विलय को अलंघनीयता कहा जाने लगा। सन् 1956 में पाकिस्तान में सरकार बदलने से तथा प्रधानमंत्री चौधरी मुहम्मद अली द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ में कश्मीर समस्या फिर भड़काने के प्रयत्न, स्पष्टतया पाकिस्तान के नये गुट मित्रों की सहायता से, दुबारा आरम्भ करने के निर्णय ने द्विपक्षीय बातचीत के युग को समाप्त कर दिया। भारत ने कश्मीर में अब मत संग्रह की माँग को इस आधार पर अस्वीकार कर दिया कि कश्मीर की संवैधानिक सभा ने कश्मीर के भारत में विलय की पुष्टि कर दी तथा कश्मीर के संविधान के अनुच्छेद 111 में कहा गया है कि "जम्मू तथा कश्मीर का राज्य भारतीय संघ का अटूट अंग है तथा रहेगा।"[14] इससे पाकिस्तान का रवैया और भी कठोर हो गया। परिणामस्वरूप भारत तथा पाकिस्तान कश्मीर के प्रश्न पर सुरक्षा परिषद में एक बार फिर तू–तू मैं–मैं पर उतर आये।[15]

इस तरह पाकिस्तान की विदेश नीति के इस दौर में पाकिस्तान ने कश्मीर की समस्या तथा भारत एवं पाक सम्बन्धों के विषय में लगातार ऐसी नीति का अनुसरण किया जिसमें जहाँ एक ओर अपने आका अमेरिका से निकटता बनायी जाये एवं शीत युद्ध में दक्षिण एशिया में मार्क्सवादी विचारधारा के विस्तार को रोकना तथा सोवियत संघ के मार्ग में बाधायें उत्पन्न करना

---

13. ए. एम. हेल्पर्न (सम्पादित) : Policies Toward China and his Political Systerm of Pakistan. It MCO Boston 1957 p.p.
14. सी.एम. कोली : प्रमुख देशों की विदेश नीतियाँ, साहित्यागार, 2000, पेज 310
15. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर पृ. 366

रहा। इसके लिये पाकिस्तान द्वारा लगातार कश्मीर में उपद्रव या अशान्ति पैदाकर एक ओर जहाँ अपनी घरेलू समस्याओं से अपने नागरिकों का ध्यान बंटाना रहा एवं दूसरी ओर भारत को कश्मीर समस्या में उलझाकर भारत के प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू, जो कहीं न कहीं मार्क्सवाद या कहें वामपंथ में आस्था रखते थे, उन्हें स्वतंत्र न छोड़ना; पाकिस्तान विदेश नीति के नींव के पत्थर रहे हैं। इस काल में कश्मीर समस्या को सुलझाने का कोई खास प्रयास ही नहीं किया गया वरन् एक विशेष विचारधारा का अनुगमन किया गया।[16]

जनरल अयूब खाँ का काल एवं कश्मीर समस्या

पाक में यह देखा गया कि जब राजनीतिक व्यवस्था सुचारू रूप से कार्य करने में असमर्थ होती जा रही थी तब सेनाओं के सेनापति ने सैनिक विद्रोह करके सत्ता प्राप्त की और दीर्घकाल तक सत्ता में बने रहे। इससे पाक में लोकतांत्रिक प्रक्रिया पर अंकुश लगाये गये तथा पाक की विदेश नीति में भी व्यापक परिवर्तन किये गये।

इसी तरह दूसरी बार पाक में 7 अक्टूबर 1958 को सेनापति जनरल अयूब ने सैनिक विद्रोह कर सत्ता प्राप्त की। इसके साथ ही पाक में मार्शल लॉ लागू किया गया। संविधान संसद व राजनीतिक दलों पर व्यापक प्रतिबन्ध लगाये गये।[17] सेनापति अयूब ने सभी प्रकार के अधिकार अपने पास रखे। इससे पाक के पड़ोसी राष्ट्र भी प्रभावित हुये। इनके कार्यकाल 30 मार्च 1969 तक की विदेश नीति के मुख्य बिन्दु निम्न प्रकार हैं –

पाक सेनापति जनरल अयूब ने जब अमेरिका से भरपूर मात्रा में आर्थिक सैनिक सहायता लेना आरम्भ किया तो भारत के प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू का रुख पाक के प्रति परिवर्तित हुआ।[18] कश्मीर समस्या पर जब द्विपक्षीय समझौते के माध्यम से अप्रैल 1954 में जनमत प्रशासक की नियुक्ति की बात आयी तब पाक अमेरिका के साथ सैन्य रूप से गठबन्धन कर चुका था।[19] इसी दौरान पं. जवाहर लाल नेहरू ने यह घोषणा कर दी थी कि यदि पाक को सैनिक सहायता मिली तो कश्मीर मुद्दे पर सभी आयाम परिवर्तित हो जायेंगे। सैन्य गठबन्धन

---

16. डॉ. अखिलेश दास : पाकिस्तान की आरम्भिक विदेश नीति, मंथन, Vol. IX, 1997
17. ए. एम. हेल्पर्न (सम्पादित) : Policies toward China and his political system of Pakistan it m.c.o. Boston, 1957
18. ए.एम. हेल्पर्न : वही पृष्ठ 168
19. ए.एम. हेल्पर्न : वही पृष्ठ 168

के सम्बन्ध में U.N.O. की सुरक्षा परिषद में भारत द्वारा विरोध किये जाने पर वीटो का प्रयोग किया गया तो सैन्य गठबन्धन के सम्बन्ध में पाकिस्तानी विदेश नीति आलोचना की पात्र बनी।

1954 से 1965 तक पाक को 12 से 15 मिलियन डालर की अमेरिकी सैन्य सहायता प्राप्त हुयी थी। इसी तरह 1947 से लेकर 1965 तक पाक को 3 मिलियन डालर अमरीकी आर्थिक सहायता भी प्राप्त हुयी थी। इस दृष्टि से अयूब के कार्यकाल की विदेश नीति में पाक की विदेश नीति के दो परिणाम सामने आये थे –

1. अमेरिका से आर्थिक सहायता प्राप्त करना।
2. कश्मीर मुद्दे पर अमेरिका को अपने पक्ष में करना

अमेरिका ने कश्मीर मुद्दे पर भारत के विपरीत पाक की मदद की। इसका मुख्य कारण यह भी कहा जा सकता है कि अमेरिका स्वयं कश्मीर मुद्दे में शामिल होना चाहता था। पाक के लिये अकेले यह समस्या हल करना संभव नहीं था। वैसे भी अयूब के कार्यकाल में राष्ट्रीय सुरक्षा का बिन्दु सर्वोपरि रहा था जिसे स्थापित करने में वह पूर्ण सफल रहे।[20]

श्री अयूब स्वयं एक सैनिक शासक था इस कारण भी पाक की विदेश नीति सैनिक तत्वों से अधिक प्रभावित रही थी। अयूब ने सत्ता में आते ही महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह करने का प्रयास किया था।[21]

जनरल अयूब ने सत्ता में आते ही भू राजनीतिक दृष्टिकोण को अपनाना प्रारम्भ कर दिया था। अयूब द्वारा जुलाई 58 में लन्दन में दिये गये भाषण से इसका स्पष्ट पता चलता है। अयूब ने स्वयं यह स्वीकार किया था कि रूस, चीन जैसी शक्तियों से निपटने के लिये अमेरिका जैसी शक्ति पर ही निर्भर होना ज्यादा लाभदायक होगा। अमेरिका पाक के लिये मजबूत, स्थायी, शक्ति के रूप में उपस्थिति दे चुका था। अमेरिका ही पाक की स्थिति संवारने में सक्षम था। इस कारण से पाक भी भविष्य में शक्ति के रूप में उभरने का प्रयास करने लगा था।

भू राजनीतिक दृष्टि से 1959–62 तक का समय पाक के लिये महत्वपूर्ण रहा। इस समय में पाक ने अपनी स्थिति को सुदृढ़ भी किया और भारत–चीन सीमा विवाद को पाक ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर भी प्रदान करने का प्रयास किया था। जबकि यही समय समस्याओं को हल करने के लिये अधिक उपयुक्त भी रहा था लेकिन अयूब ने इस तरफ ध्यान नहीं दिया। करियप्पा,

---

20. डॉ. पी. एन. दुबे : भारत पाक सम्बन्धों में अमेरिका की भूमिका, यूथ कम्पटीशन टाइम, Vol. X 1997
21. वेक्सटर मलिक : द गवर्नमेन्ट एण्ड पॉलिटिक्स इन साउथ एशिया, वेस्ट व्यू प्रेस, लन्दन, 1987, पृ. 175

फजल, मुकीम खान जैसे सैनिक नेताओं ने भारत से बचाव का एकमात्र उपाय समन्वय स्थापित करना ही बताया था भारत फिर भी प्रभावित नहीं हुआ था। इस कारण सैनिक गठबन्धनों से भारत को मोह भी नहीं रहा था। भू राजनीतिक दृष्टि से चीन–भारत एशिया में बड़ी शक्ति रहे हैं। इस कारण भी पाक बड़ी शक्तियों को सैनिक अड्डे स्थापित करने की आवश्यकता भी महसूस कर रहा था। रूस–चीन में सीमा विवाद उभरकर आये थे इस कारण भी अमेरिका ने पाक को ही मदद देने में रुचि ली थी। भारत को कोई मदद अमेरिका नहीं देना चाहता था। अतः अयूब का दृष्टिकोण भू राजनीतिक सन्दर्भों से ही अधिक जुड़ा हुआ रहा था।[22]

पाकिस्तान, चीन तथा भारत की बराबरी करना चाहता था। वैसे भी भारत–पाक के बीच विवाद होने के कारण चीन का झुकाव पाक की ओर बढ़ने लगा था। 1962 में भारत पर चीन के आक्रमण होने के उपरान्त मियां मुमताज दौलताना ने लिखा था "एशियाई प्रभुत्व" के लिये संघर्ष जो कि भारत और चीन दोनों का ही भविष्य का स्वप्न है, चीन के साथ विवादित क्षेत्रों के जातीय, ऐतिहासिक बन्धन, सह अस्तित्व के स्थान पर चीन की संघर्ष को बल देती विचारधारा चीन की आन्तरिक स्थिति की गंभीरतायें, पश्चिम द्वारा भारत को आकर्षित करने के प्रयास एक अलग ही तरह की स्थिति को प्रकट करते हैं। भारत तथा चीन के मध्य शीत युद्ध अभी भी जारी है।[23]

सितम्बर 1965 में भारत–पाक युद्ध लड़ा गया। इस युद्ध में रावलपिंडी, पेकिंग, जकार्ता धुरी बनी। चीन ने पाक को इस युद्ध के दौरन बड़ी मात्रा में सहायता उपलब्ध करायी। चीन ने भारतीय सेनाओं पर सैनिक गतिविधियाँ आरम्भ की। इस युद्ध में इण्डोनेशिया ने भारत की आलोचना की और पाक को समर्थन किया। इस भारत–पाक युद्ध में पाक की सहायता पश्चिमी राष्ट्रों द्वारा नहीं की गई। मलेशिया ने भी पाक के साथ सम्बन्ध तोड़ दिये। यद्यपि चीन से भी पाक को अधिक आशायें मदद करने के सम्बन्ध में रही थी। फिर भी पाक को निराशा ही मिली थी। यद्यपि 1965 के युद्ध में पाक की भारी सैनिक पराजय हुई थी। इस युद्ध के विरोध स्वरूप मंत्री रहे जुल्फिकार अली भुट्टो ने अपना त्यागपत्र भी दे दिया था।[24]

इस युद्ध से पाक विदेश नीति पर निम्न प्रभाव पड़े थे –

---

22. वेक्स्टर मलिक : द गवर्नमेन्ट एण्ड पोलिटिक्स इन साउथ एशिया, वेस्ट व्यू प्रेस, लन्दन 1987 पृ. 175
23. The Round Table LIII 1962-63 : 289
24. अयूब खान : Friends not master, लन्दन ऑक्सफोर्ड 1967, पृ. 117

1. पाक–अमेरिका सम्बन्धों में गिरावट आयी थी।
2. चीन–पाक सम्बन्धों में भी गिरावट आयी थी।
3. भारत–पाक सम्बन्धों में भी तनावपूर्ण स्थिति बनी थी।
4. भारत द्वारा पाक को दी जाने वाली मदद का विरोध किया जा रहा था।
5. पाक–अरब देशों के मध्य सम्बन्ध बढ़ने लगे थे।
6. पाक–रूस सम्बधों में वृद्धि होने लगी थी।

भारत–पाक युद्ध 1965 के आयोजित होने के बाद में रूस की मध्यस्थता के कारण 10 जनवरी 1966 को ताशकन्द समझौता भारत–पाक के मध्य सम्पन्न हुआ। इस युद्ध का पाक पर यह प्रभाव पड़ा कि भारत के साथ कटुता बनाये रखने के बजाय सम्बन्धों को सुधारने की पहल कर ही लेनी चाहिये थी। इस स्थिति के सम्बन्ध में अयूब ने लिखा था "अमेरिका, रूस, चीन के साथ द्विपक्षीय समीकरणों की स्थापना और मुस्लिम देशों के साथ सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों के विकास के लिये पाक को भारत के साथ संघर्ष की स्थिति को स्वीकार करने के साथ भारत के साथ जीना सीख लेना चाहिये। इसी क्रम में जुल्फिकार भुट्टो ने लिखा था "यदि वो प्रत्येक मामले में सहयोग के लिये सहमत नहीं है तो कम से कम मानव मात्र के भले और प्रसन्नता से जुड़े मसलों पर तो सहयोग के लिये सहमत होना चाहिये। यदि वो अपने राजनीतिक विवादों का समाधान नहीं कर सकते हैं तो उन्हें छोड़कर ऐसे मामलों में तो हाथ मिला सकते हैं जिससे गरीबी दूर की जा सके, बीमारी से लड़ा जा सके और भुखमरी जैसी समस्या से निपटा जा सके।"[25]

पाक ने 1965 के इस भारत पाक युद्ध के बाद ही मुस्लिम देशों के साथ अपने राष्ट्रीय हित को जोड़ने का प्रयास किया है इसे अपनी विदेश नीति में प्रमुखता प्रदान की। पाक ने यह भी स्पष्ट किया था कि वह पश्चिम के राष्ट्रों के साथ सैन्य गठबन्धन में केवल सुरक्षा के लिये ही शामिल हुआ है। अब पाक ने भी अमेरिका को नीचा दिखाने का प्रयास आरम्भ किया। 1966–67 के मध्य रूस तथा चीन से पाक को सहायता प्राप्त होने लगी थी।[26]

दिसम्बर 1965 में अयूब ने अमेरिका की यात्रा की। इस यात्रा से भी पाक अमेरिका सम्बन्धों में वृद्धि नहीं हुई। अमेरिका के राष्ट्रपति जानसन ने अयूब से कहा कि वो चीन के दक्षिण

---

25. अयूब खान : Friends not master, लन्दन ऑक्सफोर्ड 1967, पेज 117
26. पेपर : The Pakistan Times, 24 November 1967

एशिया की भूमिका को समझें और वियतनाम मामले पर अमेरिका का समर्थन करें। लेकिन अयूब ने उसे अस्वीकार कर दिया। वैसे भी पाक की भौगोलिक स्थिति बहुत ही नाजुक अवस्था में मानी गई। इस कारण से पाक स्वतंत्र विदेश नीति का अनुसरण करने पर अधिक बल दे रहा था इस कारण भी अमेरिका–पाक मतभेद उभरकर आये थे जो निः सन्देह भारत के लिये हितकारी थे तथा एक विशाल परिप्रेक्ष्य में भारत को कश्मीर समस्या के उलझाव में शिथिलता प्रदान करने वाले साबित हुये।[27]

अयूब के कार्यकाल में विदेश नीति में द्विपक्षीय समीकरण ज्यादा बने हैं। जो कि एक दूसरे को ज्यादा प्रभावित भी करते रहे हैं। इस तरह प्रत्येक समीकरण का निर्धारण तीसरे पक्षों की सहनशीलता की सीमाओं को ध्यान में रखकर निर्धारित किया जाता रहा है। इस तरह पाक ने द्विपक्षीय समझौते भी किये और द्विपक्षीय समीकरण भी बनाये थे।[28]

उदाहरण के लिये अमेरिका पाक को अपार सहायता देने का उत्सुक था। साम्यवादी शक्तियों से भी पाकित्तान ने द्विपक्षीय सम्बन्ध स्थापित किये।

अतः पाक की विदेश नीति के अयूब काल तक तीन स्तरीय विकास को हम इस प्रकार समझ सकते हैं।

1. 1954–62 तक विकास जिसमें अमेरिका सुरक्षा विकास (विकास की अपेक्षा सुरक्षा अधिक) को अधिक स्थान दिया गया।
2. 1962–65 में अमेरिका व चीन – 3/4 सुरक्षा (संयुक्त राज्य + 1/4 सुरक्षा (चीन) + 3/4 विकास (संयुक्त राज्य व पश्चिमी स्रोत) सम्बन्धी विदेश नीति रही।
3. 1966–68 में अमेरिका, चीन, सोवियत रूस – 1/2 सुरक्षा + 1/4 सुरक्षा (चीन) + 2/3 विकास पश्चिम से + 1/3 विकास सोवियत गुट से[29]

उपरोक्त सभी समीकरणों के आधार पर हम स्पष्ट कर सकते है कि पाक नीति मात्रात्मक अधिक रही है। इन समीकरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि पाक नीति निर्धारण में बौद्धिक दृष्टिकोण को ही अपनाया गया। अयूब ने अपने कार्यकाल में सुरक्षा एवं विकास से ही

---

27. सी. एम. कोली : प्रमुख देशों की विदेश नीतियाँ, साहित्यागार 2000 पृष्ठ 314
28. मोहम्मद अयूब खान, Friends not Masters, ऑक्सफोर्ड लन्दन 1967 पृ. 118–119 डॉन, 12 दिसम्बर 1965
29. सी. एम. कोली : प्रमुख देशों की विदेश नीतियाँ, साहित्यागार 2000 पृष्ठ 315

जुड़े रहने का प्रयास किया।[30]

इसके साथ–साथ पाक की विदेश नीति को लेकर अयूब को यह अहसास भी हो गया था कि अमेरिका के साथ जुड़कर पाक को भारी कीमत चुकानी पड़ेगी। भारत से पाक को निरन्तर खतरा रहा। इस कारण भी अयूब ने चीन की तरफ जुड़ने का प्रयास किया था। इस दृष्टि से 1965 से लेकर 68 तक पाकिस्तान की सुरक्षा व्यवस्था में चीन का योगदान 1/4 ही रहा था। इसका एक कारण तो यह रहा था कि भारत–चीन के बीच तनाव था इसलिये पाक को चीन से आसानी से मदद प्राप्त हो गयी। इसके साथ–साथ चीन ने पाक के आर्थिक विकास में भी योगदान दिया था। 2/3 सहायता पश्चिमी खेमे से पाक को मिली थी। इस तरह से हम देखते है कि पाक की विदेश नीति में लचीलापन भी पाया गया, क्योंकि पाक भी अपने राष्ट्रीय हितों पर अधिक ध्यान देता था। इस सम्बन्ध में अयूब ने कहा था "जनता को शान्त रहना चाहिये, सरकार पर छोड़ देना चाहिये। सरकार जनता की और राष्ट्र की भलाई के लिये ही है। उसके पास समस्त जानकारी व सूचना है। सब कुछ सरकार पर छोड़ दिया जाये। हम इस उद्देश्य के लिये एक उपकरण है जिसे काम में लगा रहने दिया जाये।[31]

23 मार्च 1960 को अयूब ने पाकिस्तान दिवस के अवसर पर प्रसारण में कहा था "मैं इस बात से प्रसन्न हूँ कि क्षेत्रीय और पश्चिमी दोनों तरफ से हमारे सम्बन्ध और सौहार्दपूर्ण व नजदीकी बने हैं। उनमें हमारा विश्वास बढ़ा है। उनकी हमारे प्रति आशाओं में वृद्धि हुई है। हमारी कोशिश होगी कि इन सम्बन्धों को और अधिक सुदृढ़ किया जाये।[32]

श्री अयूब ने विदेश नीति के स्पष्ट संकेत देते हुये 1960 के Foreign Affairs के अंक मे लेख के दौरान कहा था "आज की अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के सन्दर्भ में पाकिस्तान ने खुले रूप में अपने आपको पश्चिम से सम्बद्ध कर लिया है। हम भटकने के स्थान पर एक स्पष्ट राह के अनुसरण में विश्वास रखते हैं और यही हमने किया है।[33]

यह बात भी पाक विदेश नीति में सच साबित हो जाती है कि अयूब ने ही पश्चिमी रुझान वाली नीति को पुनः स्थापित कर नकारात्मक परिणामों की ओर बढ़ाया था। चीन के साथ

---

30. सी. एम. कोली : प्रमुख देशों की विदेश नीतियाँ, साहित्यागार 2000 पृष्ठ 315
31. The Pakistan Observer 16 August 1967
32. अयूब खान : Speeches and Statements Vol. II, July 1959, June 1960, Page - 123
33. अयूब खान : Speeches and Statements Vol. II, July 1959, June 1960, Page - 123

पाक के सम्बन्ध निरन्तर बढ़ते चले गये। अयूब ने सत्ता संभालने के बाद ही कहा था "लोग रूस के साथ सह अस्तित्व की बात करते हैं, मैं मानता हूँ कि सह अस्तित्व सम्भव नहीं है, क्योंकि इसके लिये आवश्यक परिस्थितियाँ मौजूद नहीं हैं। यदि साम्यवाद रहता है तो हमारी हैसियत एक पिछलग्गू की रहेगी। रूस का विभिन्न देशों के साथ भिन्न व्यवहार है। चीन जैसे राष्ट्र को रूस बराबरी का दर्जा देता है। यदि भारत साम्यवादी ही हो जाता है तो उसे भी समानता की हैसियत मिल सकती है। लेकिन हम तो बिल्कुल जमीन पर रहेगें।[34]

भारत पाक विभाजन के बाद से ही दोनों में तनाव संघर्ष की शुरुआत हुई। जनरल अयूब खाँ के कार्यकाल में भारत–पाक का युद्ध 1965 लड़ा गया। इससे पाक को सबक सीखने को मिला था। पाक ने कश्मीर कच्छ की खाड़ी के माध्यम से दो तरफा ध्यान खींचते हुये युद्ध करने का साहस किया था।

इस कार्यकाल की विदेश नीति भारत के प्रति इस प्रकार रही :–

1. भारत–पाक के मध्य संतुलन बिगड़ गया था इससे कश्मीर समस्या को पाक की ओर से उलझाने का प्रयास किया गया।
2. पाक कश्मीर मुद्दे पर भारत से वार्ता करने को कभी तैयार नहीं हुआ।
3. पाक ने भारत के विरुद्ध चीन, अमेरिका, मुस्लिम देशों से सम्बन्ध कायम कर सैन्य क्षमता बढ़ाने का कार्य किया।
4. भारत ने अमेरिकी सहायता का निरन्तर विरोध किया इसके उपरान्त भी अमेरिका द्वारा पाक को मदद उपलब्ध कराई जाती रही। इससे पाक भारत की बराबरी करने लगा था।
5. पाक, भारत के साथ निरन्तर युद्ध करने की नीति को ही दोहराता रहा।
6. अमेरिका ने पाक को रूस ने भारत को स्पष्ट समर्थन देना शुरू कर दिया था इससे कश्मीर जैसी समस्या पर यू. एन. ओ. की सुरक्षा परिषद में वीटो करने की स्थिति उत्पन्न हुई।
7. पाक शीतयुद्ध काल की परिस्थितियों का भारत के विरुद्ध पूर्ण लाभ उठाना चाहता था इस कारण वह सैनिक संगठनों, क्षेत्रीय संगठनों में शामिल हुआ।[35]

---

34. अयूब खान : Speeches and Statements Vol. II, July 1959, June 1960, Page - 123
35. Quoted Khalid Bin Sayeed : "Pakistan foreign An Analysis of Pakistan Feacs and Interest" Asian Survey Vol. 4 No. 3 March 1964 Page - 749-50

इस अयूब कार्यकाल में पाक को कश्मीर मसला हल करने की पहल करनी चाहिये थी। पाक ने भी अमेरिका के कारण इस अवसर को पूर्ण रूप से गँवा दिया। यही नहीं पाक ने भारतीय भूमि जो पाक कब्जे में रही थी उसका 2050 वर्ग मील क्षेत्रफल चीन को हस्तान्तरित कर दिया। ऐसा करने के पीछे यह बताया था कि "इसका एकमात्र उद्देश्य भविष्य में किसी विवाद के कारण को समाप्त करना ही रहा था।"(36)

इस तरह अयूब के कार्यकाल में अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों, शीतयुद्ध एवं राष्ट्रीय अस्थिरता के दौर के चलते कश्मीर समस्या के समाधान के लिये कोई ठोस सार्थक प्रयास नहीं किये गये थे।

याहिया खाँ का काल एवं कश्मीर समस्या

अयूब के शासन काल में काफी जन असन्तोष उभरकर आया। 31 मार्च 1969 को जनरल अयूब ने पद त्याग किया। इनके बाद में याहिया खाँ पाक के राष्ट्रपति बने। यद्यपि अयूब के सैनिक शासन के दौरान लोकतांत्रिक भावनाओं को कुचला गया। पूर्वी पाकिस्तान में अयूब के सैनिक शासन के विरोध के लिये व्यापक जन आन्दोलन उभरकर आया। इसलिये जब याहिया खाँ ने पद ग्रहण किया तो उन्होंने वादा किया था कि वे चुनाव कराकर सत्ता जन प्रतिनिधियों के हाथों में सौंप देंगे ऐसा करके पाक में लोकतांत्रिक शासन की स्थापना की जायेगी।

याहिया खाँ के कार्यकाल के अन्तर्गत 7 दिसम्बर 1970 को पाकिस्तान में चुनाव सम्पन्न कराये गये। इस चुनाव में पाक की राष्ट्रीय असेम्बली 300 सदस्यीय सभा में प्रमुख राजनीतिक दलों की स्थिति इस प्रकार रही –

1. शेख मुजीबुर्रहमान की आवामी लीग – 160
2. जुल्फिकार अली भुट्टो की पीपुल्स पार्टी – 84

इस तरह नव निर्वाचित राष्ट्रीय असेम्बली को 120 दिनों में नया संविधान निर्मित करना था। इस पर याहिया खाँ ने कोई ध्यान नहीं दिया। इधर पीपुल्स पार्टी के अध्यक्ष भुट्टो ने यह घोषणा कर दी कि 3 मार्च 1971 में ढाका में होने वाली राष्ट्रीय असेम्बली के अधिवेशन का बहिष्कार किया जायेगा। भुट्टो आवामी लीग के छः सूत्रों का विरोध कर रहे थे।

---

36. Quoted Khalid Bin Sayeed : "Pakistan foreign An Analysis of Pakistan Feacs and Interest" Asian Survey, Vol. 4 No. 3, March 1964 Page 749-750

आवामी लीग पार्टी ने चुनाव में निम्न दृष्टिकोण अपनाये थे :–

1. पड़ोसी राष्ट्रों से अच्छे सम्बन्ध स्थापित करना।
2. सीटो सेन्टो सन्धियों से पाक को बाहर निकालना।
3. लोकतंत्र की स्थापना करना।
4. समाजवाद की स्थापना करना।
5. धर्म निरपेक्षता के सिद्धान्तों का पालन करना।
6. पूर्वी पाकिस्तान को स्वायत्तता दिलाना।

3 मार्च 1971 को राष्ट्रीय असेम्बली का अधिवेशन आरम्भ होने वाला था। भुट्टो के नेतृत्व में पश्चिमी पाकिस्तान में आन्दोलन प्रारम्भ किया गया। भुट्टो और याहिया के मध्य गठबन्धन बनता जा रहा था। राष्ट्रीय असेम्बली के अधिवेशन को स्थगित कर दिया गया। इसके विरोध में शेख मुजीबुर्रहमान ने पूर्वी पाकिस्तान में हड़ताल करने का आवाहन किया। इस हड़ताल ने विकट रूप धारण किया। पाक सेना ने जनता पर खुलेआम अत्याचार किये। जनता पर गोली चलाई गई। अतः पूर्वी पाकिस्तान में व्यापक जन आन्दोलन आरम्भ हुआ। याहिया खाँ ने 6 मार्च 1971 को एक रेडियो प्रसारण में कहा कि 25 मार्च 1971 को राष्ट्रीय असेम्बली का अधिवेशन बुलाया जायेगा। जबकि यह कहाँ होगा इसका जिक्र नहीं किया गया।

7 मार्च 1971 को ढाका के अन्तर्गत शेख मुजीबुर्रहमान ने कहा ''राष्ट्रपति याहिया खाँ ने 25 मार्च को अधिवेशन बुलाया है। कहाँ ? पता नहीं। लेकिन हम तभी सम्मिलित होंगे जब हमारी चार माँगें स्वीकार की जायेंगी।'' यह माँगें इस प्रकार थी :–

1. सैनिक शासन की समाप्ति की जाये।
2. सेना की वापसी की जाये।
3. पूर्वी पाकिस्तान में बेमौत मारे जाने वालों की न्यायिक जाँच कराई जाये।
4. शासन जनता द्वारा चुने गये प्रतिनिधियों को सौंपा जाये।

इन माँगों के अलावा कहा गया ''8 मार्च से सरकार के करों की अदायगी नहीं होगी, सरकारी कार्यालय न्यायालय, स्कूल बन्द रहेंगे। दो घण्टे के लिये बैंक खुलेगी। यदि हम पर गोली बरसायी जायेगी तो हम घर को किला बना देंगे।''[37]

इस तरह 8 मार्च 1971 से पूर्वी पाकिस्तान में अवामी लीग के अनुसार समस्त

37. दीनानाथ वर्मा : अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, पृ. 533

गतिविधियाँ संचालित होने लगी। अतः बंगालियों के द्वारा स्वतंत्रता आन्दोलन प्रारम्भ किया गया। यद्यपि याहिया खाँ ने पूर्वी पाकिस्तान को सैनिक छावनी में बदलने का पूरा प्रयास किया। 40 हजार सैनिक तैनात किये गये थे। ऐसा इसलिये किया गया कि उन पर पूर्ण नियंत्रण रखा जा सके।

इन स्थितियों में पूर्वी पाकिस्तान के उदय होने के आसार पूर्ण हो चुके थे। उधर भारत–पाक में तनाव निरन्तर बढ़ता ही जा रहा था। भारत–पाक सीमा पर विस्फोट की स्थिति बनती जा रही थी। 21 नवम्बर 1971 को सेनाओं की स्थिति युद्ध जैसी बन गयी। इसके बाद विमान द्वारा भारत पर आक्रमण करने का पाक द्वारा प्रयास किया गया। 25 नवम्बर को पाक द्वारा भारत के साथ युद्ध लड़ने की घोषणा की गई।

पाक ने भारत के श्रीनगर, आगरा हवाई अड्डों पर बमबारी की। युद्ध विराम रेखा पार करके पाक सेना भारतीय क्षेत्र में घुसी। इसके पश्चात् भारतीय प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी ने कहा "भारत पर पाकिस्तान ने आक्रमण किया है। हम इस युद्ध को निर्णायक रूप में लड़ेंगे।"[38]

इसके पश्चात् 4 दिसम्बर 1971 को याहिया खाँ ने स्पष्ट घोषणा की "हम भारत के साथ युद्ध में रत है।" भारत–पाक युद्ध लड़ते हुये 6 दिसम्बर 1971 को भारत ने बांग्लादेश को मान्यता देने की घोषणा की। भारत ने पाक के साथ सभी सम्बन्ध विच्छेद कर लिये। इस युद्ध में पाक की करारी हार हुई।[39]

सुरक्षा परिषद ने 6 दिसम्बर 1971 को युद्ध विराम कराने के लिये पुनः बैठक आयोजित की। जिस पर रूस ने वीटो कर प्रस्ताव को रद्द किया। इसके बाद 8 दिसबर 1971 को साधारण सभा में प्रस्ताव रखा। 14 दिसम्बर को तृतीय बैठक सुरक्षा परिषद की हुई। 16 दिसम्बर 1971 को पाक सेना के जनरल नियाजी ने भारतीय सेनाओं के सामने आत्मसमर्पण किया। इस आत्म समर्पण में पाक सेना के 93 हजार सैनिकों ने आत्मसमर्पण किया था। इसी तिथि को बांग्लादेश की स्वतंत्रता बहाल की गई।

यद्यपि पाक को यह युद्ध विराम एकतरफा करना पड़ा था। इस युद्ध में अमेरिका का रुख भारत विरोधी ही रहा था। इस सम्बन्ध में 6 दिसम्बर 1971 को भारत को दी जाने वाली 876 करोड़ डालर की अमेरिकी सहायता का समझौता रद्द किया गया। याहिया खाँ के शासनकाल

---

38. सी. एम. कोली : प्रमुख देशों की विदेश नीतियाँ, साहित्यागार 2000, पृ. 321
39. डा. वी. एम. जैन : प्रमुख देशों की विदेश नीतियाँ, पृ. 122

में पाकिस्तान को लगातार राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। एक ओर बढ़ते अमेरिकी दबाव एवं शीत युद्ध के चलते जहाँ अन्तर्राष्ट्रीय स्थितियों के साथ पाकिस्तान सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास कर रहा था वही दूसरी ओर राष्ट्रीय स्तर पर शेख मुजीबुर्रहमान तथा पीपुल्स पार्टी एवं बंगालियों की समस्याओं के चलते याहिया खाँ के शासनकाल में कश्मीर समस्या सुलझाने के बारे में सोचने तक का समय नहीं था।

यद्यपि याहिया खाँ के शासनकाल में भारत एवं पाकिस्तान के मध्य तीसरा युद्ध सम्पन्न हुआ परन्तु इससे कश्मीर समस्या अप्रत्यक्ष रूप से और उलझ गयी तथा कश्मीर समस्या को सुलझाने के लिये किये गये समस्त प्रयासों की दिशा सुलझाव की ओर न जाकर एक नये बन्धन के साथ उलझकर रह गये।(40)

अतः एक ओर पाकिस्तान ने अपनी विदेश नीति के संचालन में स्पष्ट कर दिया था कि इस्लाम के प्रति कट्टरता तथा परम्पराओं के प्रति रूढ़िग्रस्तता के कारण तथा दूसरी ओर लगातार अमेरिकोन्मुखी विदेश नीति के कारण याहिया खाँ ने अपने पूर्ववर्तियों की भाँति ही विदेश नीति का संचालन किया जिससे कोई नया प्रावधान न भारत–पाक सम्बन्धों में और न ही कश्मीर समस्या को सुलझाने के विषय में दिखाई दिया।

जुल्फिकार अली भुट्टो का काल एवं कश्मीर समस्या

याहिया खाँ ने जुल्फिकार भुट्टो को 20 दिसम्बर 71 को सत्ता हस्तान्तरित कर दी। याहिया खाँ अपमानजनक स्थिति में सत्ता से अलग हुये। श्री भुट्टो पाक के राष्ट्रपति बने तब पाक की स्थिति पहले से ज्यादा बदल चुकी थी इन्हें खण्डित पाकिस्तान मिला। पाक की जनता का पाक प्रशासकों के विरुद्ध असन्तोष उभरकर आया था। आन्तरिक रूप से पाक के अन्तर्गत हालात ठीक नहीं थे। बलूचिस्तान और सिन्ध में जनता ने व्यापक आन्दोलन चलाया था। पाक की लोकप्रियता पहले से कम हो गयी। इसी दृष्टि से आन्तरिक रूप से भुट्टो के सामने निम्न समस्यायें थी :–

1. पूर्वी पाकिस्तान का बांग्लादेश के रूप में उदय हो जाने से पाक की जनता ने आन्दोलनात्मक रूप ग्रहण कर लिया था। पाक का बढ़ती हुई स्थिति को रोक पाना कठिन कार्य था।

---

40. Sanjay Dutt : Inside Pakistan 52 year outlook, A.P.H. Publishing Corporation, 5, Ansari Road, Dariya Ganj, New Delhi, 2000

2 पाकिस्तान का क्षेत्रफल पहले से कम हो गया था।

3 भारत पाक युद्ध में पाक की करारी हार हुई थी इससे पाक अपमान जनक स्थिति में था।

4 पाक जनता सैनिक शासन को हटाने की माँग कर रही थी।

5 पाक के दोषी सेनापतियों के विरुद्ध जाँच आयोग नियुक्त किया जाये।

6 पाक अर्थव्यवस्था दिवालियेपन के कगार पर थी।

7 पाक में भ्रष्टाचार व्याप्त हो गया था।

8 पख्तूनों एवं बलूचिस्तान में लोकतंत्र बहाली की जाये।

इन समस्याओं का पाक राष्ट्रपति भुट्टो एक ही दिन में समाधान नहीं करने वाले थे। भारत पाक के मध्य 93 हजार युद्धबन्दियों का मामला तनाव का मुद्दा बना हुआ था। इसके उपरान्त भी भुट्टो ने भारत के साथ निरन्तर युद्ध लड़ने की घोषणायें की। इन्होंने दोहरी नीति भारत के प्रति अपनायी। भुट्टो पुनः भारत के विरुद्ध युद्ध की तैयारी में जुट जाना चाहते थे। ताकि भारत के साथ हुई पराजय को धोया जा सके। 15 मार्च 1972 को भुट्टो आपसी समस्याओं को हल करने के लिये भारतीय प्रधानमंत्री से मिलने के उत्सुक दिखाई दिये।(41)

श्री भुट्टो भी कश्मीर समस्या का हल करने के लिये कोई सिद्धान्त विकसित नहीं कर पाये। भुट्टो ने भारत के विरुद्ध कहा कि "हम घास खायेंगे मगर भारत के साथ युद्ध अवश्य लड़ेंगे और परमाणु बम बनायेंगे।"(42) अतः कश्मीर के सन्दर्भ में इस काल में भी कोई प्रगति सम्भव नहीं हुई।

जिया उल हक का काल एवं कश्मीर समस्या

जिया उल हक ने भारत के प्रति दोहरी नीति अपनायी। इन्होने अपने कार्यकाल में भारत के साथ धोखा, अविश्वास, तनाव बढ़ाने के साथ साथ अस्थिरता उत्पन्न करने की नीति का अनुसरण किया।

फरवरी 78 में भारतीय विदेश मंत्री अटल बिहारी बाजपेयी ने पाक की यात्रा की। इस यात्रा के बाद भारत पाक के बीच में 16 अप्रैल 78 को सलाल समझौता किया गया। यह समझौता जल विद्युत परियोजना जम्मू क्षेत्र से सम्बन्धित था। भारत मे जनता पार्टी शासन काल मात्र 2

---

41. दि हिन्दू (मद्रास), 21 सितम्बर 1975
42. सी. एम. कोली : प्रमुख देशों की विदेश नीतियाँ साहित्यकार–2000, पृ. 329

Place of publication

वर्ष 6 माह के बाद ही समाप्त हो गया था। 1 जनवरी 80 में पुनः श्रीमती इन्दिरा गाँधी भारत की प्रधानमंत्री बनी । तब भारत पाक के मध्य में सुरक्षा के लिये व्यापक खतरा महसूस किया गया था। जिया उल हक ने अमेरिका से एफ–16 विमान तथा आर्थिक सहायता प्राप्त करने में बढ़ोत्तरी करा ली थी। इससे भी भारतीय सुरक्षा को खतरा बढ़ा। जिया उल हक ने अमेरिका से तीन कारणों से प्रभावित होकर सहायता प्राप्त की थी। वे इस प्रकार थे –

1. पाक को अफगान से खतरा है।
2. पाक को भारत से खतरा है।
3. पाक को ईराक से खतरा है।

इसके अतिरिक्त पाक ने भारत को धोखे मे रखने का प्रयास किया। जिया उल हक ने वर्ष 81 में भारत के साथ युद्ध निरोधक समझौता करने का प्रस्ताव रखा। 29 फरवरी 82 को पाक विदेश मंत्री आगाशाही ने भारत की यात्रा की। दूसरी ओर कश्मीर का मामला भी शिमला समझौते के विरुद्ध उठाया गया।

भारतीय विदेश मंत्री पी. वी. नरसिम्हाराव को श्रीमती गाँधी ने जून 83 में पाक यात्रा पर भेजा। इस यात्रा के दौरान हथियारों की आपूर्ति पर दबाव डाला। सितम्बर 83 से भारत पाक के बीच स्पष्ट रूप से निम्न कारणों से सम्बन्ध सामान्य नहीं रहे –

1. भारत में पंजाब के खालिस्तान आन्दोलन में पाक की सहायता।
2. पाक भारत के आन्तरिक मामलों में दखल देने लगा।
3. भारतीय पाक सीमाओं पर निरन्तर युद्ध जैसी स्थिति बनी रही।
4. पाक ने भारत में आतंकवादियों की गतिविधियों में रुचि लेना प्रारम्भ किया। उन्हे प्रशिक्षण देकर भारत में भेजकर अस्थिरता उत्पन्न की।[43]

31 अक्टूबर 1984 को श्रीमती गाँधी की हत्या कर दी गई। इसी दिन राजीव गाँधी को प्रधानमंत्री की शपथ दिलायी गई। इनके कार्यकाल में भी भारत पाक के मध्य तनाव व्याप्त रहा। 17 दिसम्बर 85 को भारत पाक ने संयुक्त बयान जारी करते हुये एक दूसरे के परमाणु प्रतिष्ठानों पर हमला नहीं करने का संकल्प दोहराया। इसके पश्चात 10 जनवरी 1986 को भारत पाक के बीच व्यापारिक समझौता सम्पन्न हुआ। इसमें 42 वस्तुओं को आयात करने की सूची में

---

43. द टाइम्स आफ इण्डिया, 14 सितम्बर 1979

रखा गया। जिया उल हक ने इसी दौरान पाक परमाणु कार्यक्रम चलाया। इससे भारत की बराबरी करने की भावना को पाक ने विकसित किया।(44)

परन्तु इस समय जिया उल हक एक ओर संयुक्त राष्ट्र संघ तथा अन्तर्राष्ट्रीय जनमत को दिखाने के लिये तो निःसन्देह भारत से वार्तालाप कर रहे थे परन्तु दूसरी ओर वह किसी भी तरह का सहयोगी कदम नही उठा रहे थे जिससे कि भारत पाकिस्तान सम्बन्ध को सुधारने तथा कश्मीर समस्या के समाधान का कोई सार्थक हल निकल सके जिससे भारत पाकिस्तान सम्बन्धों में उलझाव की स्थितियाँ बनी रहीं। समस्त उपरोक्त पाकिस्तानी शासकों के शासनकाल तथा विदेशनीतियों के दौरान यह देखने को मिला है कि भारत पाक सम्बन्ध तथा कश्मीर समस्या के बारे में दो तरफ के दबावों के तहत पाकिस्तानी विदेश नीति संचालित की जाती है उसमें शासक का कोई विशेष व्यक्तित्व तथा रुचि सम्मिलित नहीं की जाती है। पाकिस्तान में शासक चाहे जनता द्वारा चुना गया हो या सैनिक तानाशाही से स्थापित शासक हो वह अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अमेरिका एवं अमेरिकी पिछलग्गुओं के दबाव के अन्तर्गत शीत युद्ध की राजनीति से प्रेरित रहता है; परन्तु इससें भी महत्वपूर्ण दबाव पाकिस्तानी राजनीति में प्रभावी कठमुल्लापन की रुढ़ियों एवं परम्पराओं के अन्तर्गत पाकिस्तान में एक ऐसे जमींदार वर्ग की स्थापना हो गई है जो कि पाकिस्तान में "किंग मेकर" की राजनीति को संचालित करते हैं। इन समस्त परिस्थितियों के चलते कश्मीर समस्या एक कैंसर के समान भारत एवं पाकिस्तान के सम्बन्धों के मध्य कीटाणुओं की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है। आज इस समस्या को एक सम्पूर्ण सर्जरी की आवश्यकता है। अतः भारत एवं पाकिस्तान ने अकुशल सर्जन की तरह चीरा लगाकर काम चला रहे हैं और एक कुशल सर्जन की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

बेनजीर भुट्टो का काल एवं कश्मीर समस्या

जनरल जिया उल हक के सैनिक शासन के पश्चात पाक में 16 नवम्बर 1988 को लोकतंत्र की स्थापना के लिये आम चुनाव सम्पन्न हुये। जिसमें बेनजीर भुट्टो दिसम्बर 1988 में पाक की प्रधानमंत्री बनी। यह इनका प्रथम कार्यकाल था। इस कार्यकाल की विदेशनीति के मुख्य तत्व इस प्रकार थे।(45)

---

44. विलियम एच. लचर : पाकिस्तान इन 1984 एशियन सर्वे, फरवरी 1985 पृ. 152
45. डॉ वी. एम. जैन : प्रमुख देशों की विदेश नीतियाँ, पृ. 284

दिसम्बर 1988 में बेनजीर के प्रधानमंत्री बनने के समय भारत में प्रधानमंत्री राजीव गाँधी थे। इस दृष्टि से सार्क के चतुर्थ शिखर सम्मेलन दिसम्बर 1988 में राजीव गाँधी इस्लामाबाद गये थे इसमें बेनजीर ने भारत के प्रति उत्साह दिखाते हुये सम्बन्धों को सामान्य करने की दिशा में पहल की तथा दिसम्बर 1988 में भारत पाक के मध्य तीन समझौते सम्पन्न किये।(46)

1. दोहरे कर समाप्त करने सम्बन्धी घोषणा।
2. परमाणु ठिकानों पर आक्रमण नहीं करने सम्बन्धी समझौता।
3. सांस्कृतिक आदान प्रदान सम्बन्धी समझौता।

इन समझौते के अतिरिक्त बेनजीर भुट्टो ने शिमला समझौते के प्रति अपनी वचनबद्धता को दोहराया था। इसके पूर्व पाक की भारत के प्रति गलत नीति थी। कश्मीर में आतंकवाद उत्पन्न करना, आतंकवादियों को प्रशिक्षण देकर भारत विरोधी गतिविधियाँ पाक द्वारा संचालित की जा रही थी। अतः बेनजीर के इस कार्यकाल मे भारत पाक सम्बन्धों को सैद्धान्तिक रूप से ही सुधारने का प्रयास किया गया। पाक का व्यवहारिक रूप से भारत के प्रति रूढ़िवादिता पूर्ण दृष्टिकोण ही रहा।(47)

बेनजीर भुट्टो ने चुनावों के दौरान कहा था कि जिया उल हक की संकीर्ण भावना के आधार पर रही विदेशनीति के कारण पाक को सुरक्षा खतरों और चुनौतियों में हुई वृद्धि के कारण पाक राष्ट्र एवं देशवासियों को ही हानि उठानी होगी।(48)

प्रथम कार्यकाल में बेनजीर भुट्टो को आन्तरिक रूप से उभरी अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा था। जिया उल हक के सैनिक शासन के दौरान जो असन्तोष उभर कर आया था उसका सामना भुट्टो को ही करना पड़ा। केवल 20 माह के शासन काल के बाद अगस्त 1990 में बेनजीर भुट्टो को बर्खास्त कर दिया गया था।

पाक के अन्तर्गत राजनीतिक अस्थिरता के चलते पुनः जुलाई 1993 में बेनजीर भुट्टो पाक प्रधानमंत्री बनी। इस दूसरे कार्यकाल में भी बेनजीर भुट्टो ने विदेशनीति के प्रति कठोर

---

46. पी. एस. भोला : पाकिस्तान एक्सटर्नल रिलेशन्स 1987, साउथ ऐशियन न्यूज लैटर (जयपुर) जुलाई–दिसम्बर, पृ. 33–35
47. पी. वी. सिन्हा : द अफगान रिवोल्यूशन एण्ड आफ्टर, फोरेन अफेयर्स रिपोर्टर, नई दिल्ली
48. डॉ. वी. एम. जैन : प्रमुख देशों की विदेश नीतियाँ, पृ. 284

रवैया अपनाने का ही प्रयास किया था। इस दूसरे कार्यकाल की विदेश नीति के मुख्य बिन्दु इस प्रकार हैं –

श्रीमती बेनजीर भुट्टो ने पाक विदेशनीति में और अधिक कठोर रुख अपनाया। शायद यह इनके लिये उचित ही रहा था। इस दूसरे कार्यकाल में कठोरता का रुख अपनायें जाने के निम्न कारण रहे थे –

1. बेनजीर अपनी राजनैतिक स्थिति को मजबूत करने के लिये पाक जनता का समर्थन प्राप्त करना चाहती थी।
2. आणविक ऊर्जा तथा कश्मीर जैसे मुद्दे को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उभारकर राजनीतिक क्षमता को बढ़ाना चाहती थीं।
3. अमेरिका के रुख को पाक के प्रति पुनः अनुकूलता प्राप्त करना था क्योंकि अमेरिका का दृष्टिकोण पाक के बजाय भारत के प्रति बदलता जा रहा था।
4. पाक सेना भारत विरोधी गतिविधियाँ आयोजित कर रही थी। इससे भुट्टो को राजनीतिक खतरा बढ़ रहा था।

इस कार्यकाल में विदेशनीति का मुख्य बिन्दु यह रहा कि पाक ने कश्मीर मुद्दे पर वार्ता करने से इन्कार कर दिया। भारत के प्रति नकारात्मक रुख ही अपनाया। इसके अलावा कश्मीर में आतंकवादियों की घुसपैठ निरन्तर जारी रखी गई। बेनजीर भुट्टो ने कश्मीर का अन्तर्राष्ट्रीयकरण कर समर्थन प्राप्त करने का पूर्ण प्रयास किया। इसका उदाहरण यह रहा कि बेनजीर ने जितनी भी विदेश यात्रायें आयोजित की उन सभी यात्राओं में कश्मीर मुद्दे को उठाया। जिससे पाक की अन्तर्राष्ट्रीय भूमिका भी कमजोर होती गई।

बेनजीर ने भारत के प्रति कड़ी विदेशनीति के सन्दर्भ मे कहा "भारत ने कश्मीरियों के आत्म निर्णय के अधिकार की यदि अनदेखी करना जारी रखा तो भारत पाक के बीच अगला युद्ध छिड़ सकता है।"(49)

वर्ष 1994 में भारतीय प्रधानमंत्री पी. वी. नरसिम्हाराव ने अमेरिका की यात्रा की। इस यात्रा के दौरान इन्होने क्लिटन को अवगत कराया कि यदि पाक को एफ–16 विमान दिये जाते हैं तो इसका प्रभाव भारत पाक सम्बन्धों पर पड़ेगा। जिस पर क्लिटन ने पाक को एफ–16 विमान

---

49. सी. एम. कोली : प्रमुख देशों की विदेश नीतियाँ, साहित्यागार 2000

उपलब्ध नहीं कराने का आश्वासन भी दिया।

इसी वर्ष 1994 में 23 अगस्त को नीला बट्ट (पाक अधिकृत) में नवाज शरीफ ने कहा था "यदि भारत पाक के बीच मे युद्ध हुआ तो इसका परिणाम भंयकर होगा.......मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि पाकिस्तान के पास वर्तमान में परमाणु बम हैं।(50)

इसी तरह बेनजीर भुट्टो ने भी वर्ष 1994 में एफ–7 के 100 से अधिक विमान चीन से खरीदे थे। इसी प्रकार मिराज 2000 विमान भी फ्रांस से खरीदे गये। इससे प्रमाणित होता है कि भारत के प्रति कठोर नीति अपनाई। इसके अतिरिक्त 11 मई 1995 को आतंवादियों के माध्यम से कश्मीर में चरार–ए–शरीफ (पुरानी दरगाह) दरगाह में आग लगवाकर नष्ट करा दिया।

इस तरह बेनजीर के प्रथम कार्यकाल के पश्चात द्वितीय कार्यकाल मे उन्होने भारत के प्रति कठोर नीति का पालन किया। बेनजीर के दूसरे कार्यकाल में पाकिस्तान के किंगमेकर कट्टरपंथी समुदाय का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है क्योंकि अपने पहले कार्यकाल में इस समुदाय की बात स्वीकार न कर अपना शासन गँवा चुकी थीं। परन्तु अपने कार्यकाल के पश्चात बेनजीर की चुनाव में पराजय के बारे में स्वयं बेनजीर भुट्टो ने बी.बी.सी. के प्रसारण में स्वीकार किया कि जनता ने उनके भारत विरोधी रुख को नकार दिया है और उन्हें यह परिणाम देखने को मिले हैं। इस तरह के बयान से स्पष्ट है कि पाकिस्तान की जनता भी भारत विरोधी रुख को स्वीकार नहीं करती है परन्तु वहाँ का शासक वर्ग इस यथार्थ को स्वीकार नहीं कर पाता है।

नवाज शरीफ का काल एवं कश्मीर समस्या

प्रधानमंत्री नवाज शरीफ के प्रथम कार्यकाल के दौरान वर्ष 1992 में भारत पाक के मध्य कटुता, संघर्ष, वैमनस्य, अविश्वास अधिक रहा। पाक द्वारा वास्तविक नियत्रंण रेखा का उल्लंघन किया गया तथा भारत को अनेक धमकियाँ दी गईं।

अक्टूबर 1992 में भारत में राम जन्म भूमि अयोध्या विवाद तेज गति से उभर कर आया। यह विवाद भी पाक असेम्बली में उठाया गया। 6 दिसम्बर 1992 को जब भारत में मस्जिद की तोड़ फोड़ की गई तो इसी तरह पाक में भी हिन्दुओं के मन्दिरों में तोड़ फोड़ हुई। कई स्थानों पर आग लगा दी गई। इस घटना के कारण भी भारत पाक के बीच तनाव व्याप्त रहा।

जब पाक में नवाज शरीफ प्रथम बार प्रधानमंत्री बने तब भारत में पी. वी. नरसिम्हाराव

---

50. एशियन रिकार्डर, 1981, पृ. 16418

प्रधानमंत्री रहे थे। इस समय के दौरान ही 6 फरवरी 1992 को नवाज शरीफ ने पाक में कश्मीर मुद्दे पर राष्ट्रव्यापी हड़ताल का आवाह्न भी किया था। इन्होने इस कार्यकाल के अन्तर्गत तथाकथित बाबरी मस्जिद जो कि भारत की आन्तरिक समस्या थी उसका अन्तर्राष्ट्रीयकरण करने का प्रयास किया जिसका भारत ने कड़ा विरोध किया।(51)

नवाज शरीफ भी बेनजीर भुट्टो की तरह अपना कार्यकाल पूर्ण नहीं कर पाये। इन्हे अल्प काल में ही सत्ता खोनी पड़ी थी। इनके कार्य काल में अप्रैल 1991 में भारतीय विदेश सचिव मुचकुन्द दुबे एवं पाक विदेश सचिव शहरयार खान के मध्य निम्न मुद्दों पर वार्ता हुई थी।

1. सियाचिन ग्लेशियर
2. सीमा पर तनाव कम करने सम्बन्धी
3. आतंकवाद

इन मुद्दों पर वार्ता करने के अलावा एक दूसरे के बीच विश्वास कायम करने की दिशा में निम्न समझौते भी शरीफ के कार्यकाल मे किये गये थे।

1. हवाई सीमाओं के पालन करने सम्बन्धी समझौता
2. सीमाओं पर तनाव कम करने की दिशा मे सैनिक अधिकरियों के मध्य विचार विमर्श आरम्भ करने सम्बन्धी समझौता।

इसके पश्चात भारत पाक के बीच वार्ताओं के क्रम को बढ़ाने की दिशा में 17–19 अगस्त 1992 को नई दिल्ली में वार्ता का छठा दौर आयोजित हुआ इस वार्ता मे भारत की ओर से जे. एन. दीक्षित और पाकिस्तान की ओर से शहरयार खान ने हिस्सा लिया। इस वार्ता मे भारत पाक के बीच आणविक हथियारों का प्रयोग नहीं करने सम्बन्धी समझौता भी सम्पन्न किया गया। श्री शरीफ को 1993 में बर्खास्त कर दिया गया।

दूसरे कार्यकाल में प्रधानमंत्री नवाज शरीफ ने भारत के साथ सम्बन्धों को सामान्य करने के बजाय कश्मीर समस्या को तीसरे पक्ष के माध्यम से हल करने की मांग उठाई जिसको भारत ने अस्वीकार कर दिया। इनके (नवाज शरीफ) प्रधानमंत्री बनने से पूर्व 9 जून 96 को भारत पाक के मध्य विदेश सचिव स्तर की वार्ता आयोजित हुई जो कि अनिर्णीत ही रही।

12 मई 1997 को भारत पाक के मध्य सम्बन्धों को सुधार करने की दिशा में कार्यकारी

---

51. सी. एम कोली : प्रमुख देशों की विदेश नीतियाँ, साहित्यागार 2000, पृ. 342

दल गठित करने का निर्णय लिया। इसके साथ ही दोनों प्रधानमंत्रियों के बीच "हॉट लाइन" स्थापित की गई। इसके बाद में जून 1997 में वार्ता आयोजित हुयी। इसी वर्ष में दोनों ने अपनी अपनी स्वतंत्रता की 50वीं वर्षगाँठ मनाई । इसके पश्चात नवम् सार्क सम्मेलन माले में मई 1997 में दोनों प्रधानमंत्रियों की वार्ता हुई। जिसमें विशेष प्रगति नहीं हुई। भारतीय प्रधानमंत्री इन्द्र कुमार गुजराल ने पाक के प्रति गुजराल सिद्धान्त के तहत पाक से सम्बन्ध सुधारने का प्रयास किया।[52]

श्री इन्द्र कुमार गुजराल के बाद में श्री अटल बिहारी बाजपेयी भारत के प्रधानमंत्री बने। तब इनके कार्यकाल में 6 अप्रैल 1998 को गौरी प्रक्षेपास्त्र का परीक्षण किया तब नवाज शरीफ ने कहा था" कि पाक ने गौरी नामक प्रक्षेपास्त्र का परीक्षण कर लिया है। जो हर तरह से उड़ान में कामयाब हुआ है। यह 1500 किलोमीटर तक मार सकता है एवं 200 किलोग्राम तक बम या परमाणु बम ले जा सकता है।

भारत के प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी बाजपेयी ने भी इस पर कहा था "भारत अपनी सुरक्षा करने में सक्षम है। भारत परमाणु नीति में परिवर्तन नहीं करेगा। 28 मई 1998 को पाक द्वारा परमाणु परीक्षण किये जाने से भारत पाक के बीच तनाव और भी अधिक बढ़ गया। इस परमाणु परीक्षण के बाद दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों की मुलाकात जुलाई 1998 को सार्क के 10वें शिखर सम्मेलन में कोलम्बो में हुई। इसके बाद मे विदेश सचिव स्तर की वार्ता आयोजित होने का मार्ग खोला गया।

15 से 18 अक्टूबर 1998 को सचिव स्तर की वार्ता हुई जिसमें अनेक महत्वपूर्ण मुद्दों पर चर्चा हुई। इसके बाद कुछ एक पर सहमति हुई। यह वार्ता भी पूर्ण रूप से असफल हो गयी। इसके पश्चात 4 से 13 नवम्बर 1998 को नई दिल्ली मे वार्ता का दौर शुरू हुआ। इसमें भी अनेक मुद्दों पर मतभेद ही बना रहा। पाक प्रत्येक वार्ता में कोई नई समस्या उत्पन्न करता रहा है। इस वार्ता मे लाहौर बस सेवा प्रारम्भ करने पर सहमति हुई।

इसके पश्चात फरवरी 1999 भारत के प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेयी ने लाहौर बस यात्रा सम्पन्न की जिसमें शिमला समझौते की तर्ज पर लाहौर समझौता किया गया। फिर भी भारत के प्रति पाक नीति में बदलाव नहीं आया। इसका उदाहरण यह देखने को मिलता है कि

---

52. सी. एम कोली : प्रमुख देशों की विदेश नीतियाँ, साहित्यागार 2000, पृ. 343

जम्मू कश्मीर के कारगिल क्षेत्र में बड़ी संख्या मे घुसपैठियों ने प्रवेश किया। जिसके कारण भारत की सेना से मई 1999 में सैनिक युद्ध भी हुआ। भारत ने इस कारगिल क्षेत्र को मुक्त कराया। भारतीय रक्षा मंत्री, प्रधानमंत्री एवं भारतीय सेना ने पाक के प्रति कड़े कदम उठाये जिसमें पाक को अप्रत्यक्ष रूप से पराजय ही मिली। कारगिल क्षेत्र को लेकर भारत पाक के बीच युद्ध की सी स्थिति उत्पन्न हुई। वास्तविक नियंत्रण रेखा का पाक पालन नहीं कर रहा है। उसे भारत के साथ शत्रुता और वैमनस्य का वातावरण उत्पन्न नहीं करना चाहिये।

पाकिस्तान में पाठ्य पुस्तकों के माध्यम से भारत के प्रति घृणा फैलाने का कार्य किया जा रहा है जो कहीं न कहीं पाकिस्तानी जनता में भारत के खिलाफ एक सुनियोजित दुष्चक्र है तथा पाकिस्तानी सरकार इस पर चुप है।[53]

डॉ. रुबीना के अनुसार पाकिस्तान के विद्यालयों में बच्चों को दूसरी कक्षा में पढ़ाई जाने वाली 'मेरी किताब' के पृष्ठ 85 पर लिखा है कि विभाजन के समय सभी प्रकार के अत्याचार मुस्लिम समुदाय के लोगों पर ही किये गये।[54]

1998 में प्रकाशित आठवीं कक्षा की किताब 'सामाजिक ज्ञान' में लिखा है ''स्वतंत्रता की लड़ाई में हिन्दुओं एवं मुसलमानों दोनों ने भाग लिया था। इसके बावजूद हिन्दुओं ने चालाकी से ब्रिटेन को इस बात के प्रति आश्वस्त कर दिया कि उनके विरुद्ध स्वाधीनता का संघर्ष तो केवल मुस्लिम समुदाय के लोगों ने छेड़ा था।[55] डॉ. रुबीना ने यह विचार बर्लिन स्थित हुमबोल्ट विश्वविद्यालय द्वारा कट्टरवाद और सहिष्णुता विषय पर आधारित परिसम्वाद में व्यक्त किये। डॉ. रुबीना लाहौर स्थित ''सोसाइटी फार एडवांसमेंट ऑफ एजुकेशन'' की अध्यक्ष हैं।

पाकिस्तानी समस्त शासकों की विदेशनीति का अवलोकन करने के पश्चात ज्ञात होता है कि पाकिस्तान में शासकों ने लगातार किसी न किसी के दबाव में कार्य किया है चाहे वह अन्तर्राष्ट्रीय दबाव हो या राष्ट्रीय स्तर पर कट्टरपंथी जमींदार हों या मुल्ला एवं मौलवी। आजादी के 55 वर्षों के पश्चात भी पाकिस्तान मे या तो उच्च वर्ग है या निम्न वर्ग। उच्च वर्ग ही राजनीति का संचालन करता है तथा ''किंग मेकर'' की भूमिका अदा करता है। अतः न चाहते हुये भी पाकिस्तानी शासक इन कट्टरपंथी ताकतों के हाथों का खिलौना नजर आता है। जो

---

53. डॉ. कृष्ण कुमार रत्तू : कारगिल – कौन है पीछे इस साजिश के, पोइन्टर पब्लिशंस, जयपुर, पृ. 63
54. डॉ. कृष्ण कुमार रत्तू : वही पृ. 63
55. डॉ. कृष्ण कुमार रत्तू : वही पृ. 63

कभी भी यह स्वीकार नहीं कर पाता कि एक मुस्लिम बाहुल्य प्रदेश भारत का अंग बन जाये साथ ही उन्हें बांग्लादेश के रूप में कटे अपने बाजू का दर्द आज भी है। ये दोनों ही कारण कश्मीर समस्या को जटिलता प्रदान करने में अहम भूमिका निभा रहे हैं।

1998 में भारत के 11 मई के परमाणु परीक्षण के पश्चात पाकिस्तान ने भी अपने यहाँ परमाणु परीक्षण सम्पन्न किया। 1999 में पाकिस्तानी सेना ने कारगिल में घुसपैठ किया। भारत ने जबाबी कार्यबाही करके उसे तुरन्त मुक्त कराया। जनरल परवेज मुशर्रफ ने सैनिक बगावत के जरिये नवाज शरीफ सरकार का तख्ता पलट दिया। मुशर्रफ के इस प्रयत्न की निःसन्देह विश्व मे घोर निन्दा हुई और पाकिस्तान को राष्ट्रकुल से निष्कासित कर दिया गया।

परवेज मुशर्रफ का काल एवं कश्मीर समस्या

सन् 2000 में नवाज शरीफ को विमान अपहरण एवं आतंकवादी गतिविधियों का आरोप लगाकर उम्र कैद की सजा सुनायी गयी। पाक के सैनिक अधिकारियों ने शरीफ को क्षमादान देते हुये सऊदी अरब निष्कासित कर दिया।

सन् 2001 में मुशर्रफ ने सेनाध्यक्ष होने के साथ साथ खुद को राष्ट्रपति घोषित किया एवं जून 2001 में राष्ट्रपति बने सेनाध्यक्ष जनरल परवेज मुशर्रफ ने एक साथ दो पदों को धारण किया। जुलाई 2001 में जनरल परवेज मुशर्रफ एवं भारतीय प्रधानमंत्री बाजपेयी के मध्य आगरा शिखर वार्ता हुई, यह वार्ता पूर्ण रूप से विफल रही, कश्मीर के मुद्दे पर कोई आम राय न बनने के चलते दोनों नेता संयुक्त बयान भी जारी नहीं कर सके। सितम्बर–अक्टूबर 2001 में अफगास्तिान में आतंकवाद के खिलाफ लड़ाई में मुशर्रफ ने अमरीका का पूरा साथ दिया परन्तु भारत के लिये आतंकवाद के प्रोत्साहन एवं दाऊद जैसे आतंकवादी लोगों को संरक्षण प्रदान करना जारी रखा। दिसम्बर 2001 को भारत सरकार ने संसद पर हुये हमले मे पाकिस्तान के स्पष्ट हाथ होने का ठोस सबूत पेश करते हुये कहा था कि पाकिस्तान अपने देश में सक्रिय भारत विरोधी आतंकवादी संगठनों के खिलाफ कार्रवाही करे। भारत ने पाकिस्तान के खिलाफ कूटनीतिक दबाव बनाने के लिये अपने उच्चायुक्त को इस्लामाबाद से वापस बुलाया। इसी कड़ी में भारत ने समझौता एक्सप्रेस और लाहौर दिल्ली बस सेवा बन्द करने का फैसला लिया और पाकिस्तानी हवाई जहाजों के भारतीय वायु क्षेत्र में उड़ने पर पाबन्दी लगायी। दोनों देशों ने इस समय अपनी सेनाओं का सीमाओं पर जमावड़ा लगा दिया है।

अन्ततः परवेज मुशर्रफ के सत्ता में आते ही भारत पाक सम्बन्धों में युद्ध जैसी स्थिति दिन व दिन बढ़ती जा रही है किसी भी दिन युद्ध होने की आशंका से कश्मीर तथा समीवर्ती क्षेत्रों की जनता पलायन कर रही है। अतः मुशर्रफ कट्टरपंथियों द्वारा संचालित भारत के प्रति कठोर विदेश नीति को अपना कर पाकिस्तान में अपनी राजनैतिक स्थिति मजबूत करने का प्रयास कर रहे हैं परन्तु उन्हे यह याद नहीं है कि इस नीति से वह भारत को कम परन्तु पाकिस्तान को पूरी तरह से विनाश की ओर ले जा रहे है जो निःसन्देह पाकिस्तान को विखण्डन की ओर ले जा रहे है। परन्तु जनरल परवेज मुशर्रफ ने भारत के प्रति कठोर नीति को अपनाने के दो कारण हैं–

1. राजनैतिक दृष्टि से अपने को पाकिस्तानी राजनीति में स्थापित करना तथा
2. पाकिस्तान की वर्तमान स्थितियाँ

आज पाकिस्तान चौतरफा संकट में है भ्रष्टाचार की चपेट में आने से शीर्ष राजनीतिक नेतृत्व को देश निकाला हो चुका है। सेना एवं आई. एस. आई. अमेरिका के प्रभाव से ओत–प्रोत है एवं उसी के इशारे पर सम्पूर्ण कार्य का सम्पादन करते हैं। अन्तराष्ट्रीय दबाव इस कदर है कि सारे जिहादियों की धरपकड़ करनी पड़ रही है। जैश, लश्कर एवं जेहाद का जुमला रटने वाले आतंकवादी नयी रणनीति बनाने में जुटे हैं। सबसे ज्यादा समस्या आज मुशर्रफ के समक्ष है। अगर वह भारत से युद्ध लड़ते है तो परास्त होने का खतरा है और युद्ध से अलग होते हैं व आतंकवादियों के विरुद्ध कार्यवाही करते हैं तो पाकिस्तान में गृहयुद्ध छिड़ने की आशंका है। जिन जिहादियों को पिछले 15–20 वर्षों से यह देश पालता पोसता रहा,आज वही जिहादी उसके गले की हड्डी बन गये हैं। इस दोतरफा नीति ने पाकिस्तान को गृहयुद्ध की कगार पर खड़ा कर दिया है जिसका प्रमाण वर्ष 2000 में पाकिस्तान में हुये बम विस्फोट है। जो निम्न प्रकार हैं[56]

दिनाँक	स्थान	मृत व्यक्ति	घायल व्यक्ति
17 जनवरी	कराची	9	25
28 जनवरी	कराची	05	35
29 जनवरी	सिआलकोट	02	03
5 फरवरी	हैदराबाद	06	60
28 मार्च	तोरखम	5	22
11 अप्रैल	भलोहवाली	14	30

56. सैमुअल वैद : पाकिस्तान का दर्द, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार 5 जनवरी 2002, पृ. 1

20 अप्रैल	देगरी	07	05
01 मई	लाहौर	02	05
16 जुलाई	हैदराबाद	09	35
22 जुलाई	क्वेटा	09	35
29 जुलाई	इस्लामाबाद	01	02
03 अगस्त	क्वेटा	02	04
17 अगस्त	बटखेला	01	15
07 सितम्बर	लाहौर	07	40
	कुल	79	316

पाकिस्तान में जातीय हिंसा[57]

वर्ष	घटना	मृतक	घायल
1989	67	18	102
1990	274	32	328
1991	180	47	263
1992	135	58	261
1993	90	39	247
1994	162	73	326
1995	88	59	186
1996	80	86	168
1997	103	193	219
1998	188	157	231
1999	103	86	189
2000	109	149	—
कुल	1579	997	2523

पाकिस्तान को अपनी समूची विदेशनीति को कश्मीर और आतंकवाद का पर्याय बना देने का खामियाजा भुगतना ही था। इस देश की दूसरी मुसीबत उसके अन्दर के झगड़े हैं। आशंका

57. सैमुअल वैद : पाकिस्तान का दर्द, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार 5 जनवरी 2002, पृ. 1

वर्ष 2001 में पाकिस्तान में जातीय हिंसा
350
325
300
275
250
225
200
175
150
125
100
75
50
25
0
331
202
113
84
65
50
53
44
52
31
26
23
8
50
18
18
21
11
17
13
4
17
18
14
18
10
15
16
जनवरी
फरवरी
मार्च
अप्रैल
मई
जून
जुलाई
अगस्त
योग
घटनायें
मरे
घायल
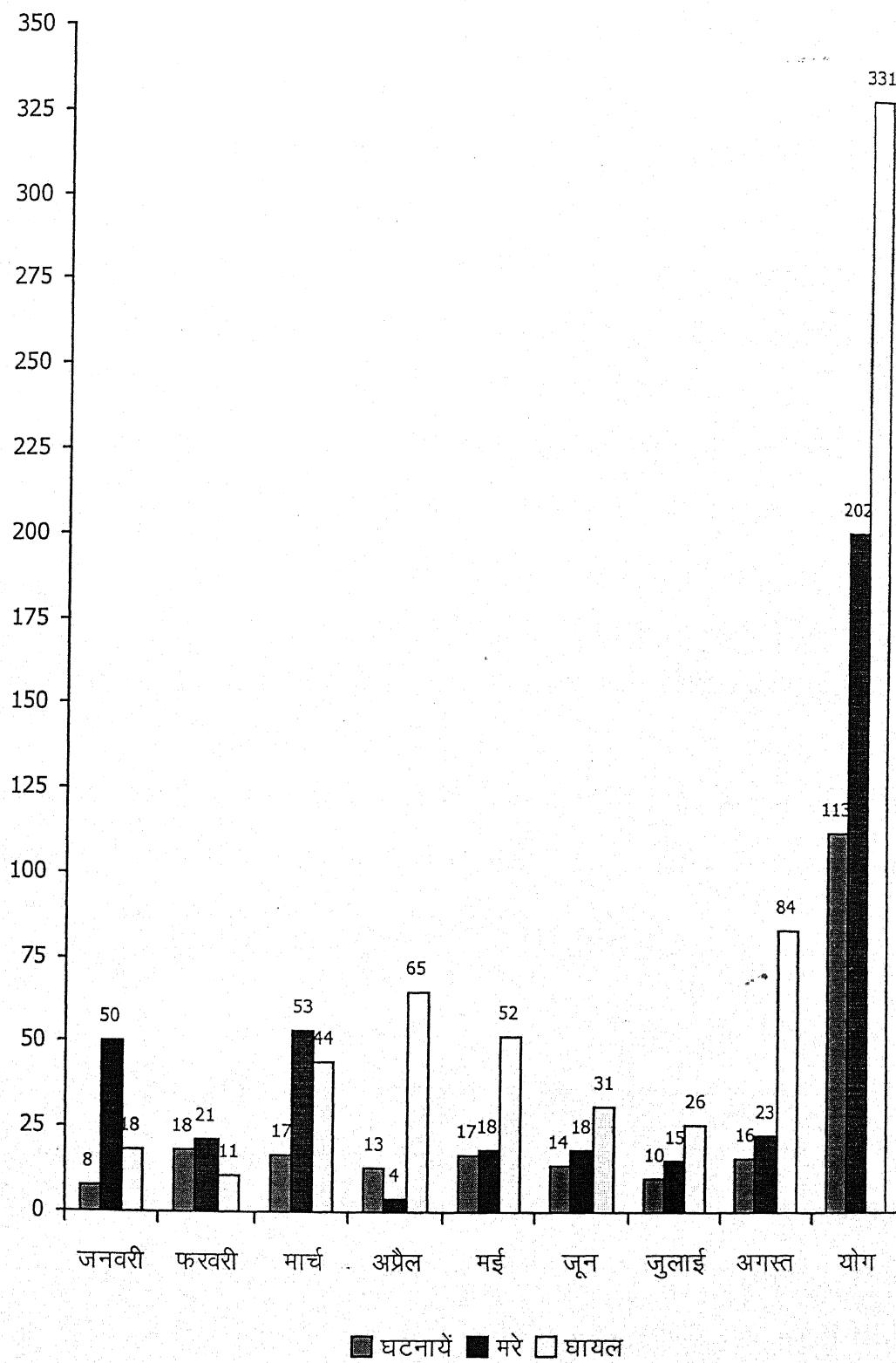
है कि जो कौमी फसाद सत्तर के दशक में उफान पर थे, उनकी अब वापसी हो सकती है। युद्ध न हुआ तो पाकिस्तान को एकजुट रखना मुशर्रफ के लिये कठिन होगा। मुशर्रफ रहेंगे या नहीं इसका फैसला तो अभी होना है पाकिस्तान के अन्दरूनी हालात पर ही है आज की पाकिस्तानी विदेशनीति जो निःसन्देह अपने अतीत से अधिक कठोर एवं दिशाहीन प्रतीत हो रही है।

आज मदरसे भी पाकिस्तान के लिये मुसीबत की जड़ बने हुये हैं। अपनी कट्टर शिक्षा नीति, धार्मिक अन्धविश्वास एवं रूढ़िवादिता के चलते जहाँ यह मदरसे पाकिस्तान की विदेशनीति में अहम भूमिका अदा कर रहे हैं। किसी के पास इसका ठीक ठीक आंकड़ा नहीं कि पाकिस्तानी कट्टरता और जिहाद की शिक्षा देने वाले मदरसों की संख्या कितनी है। सुप्रसिद्ध पत्रिका फारेन अफेयर्स के नवम्बर–दिसम्बर 2000 अंक में छपे एक लेख के अनुसार पाकिस्तान में मदरसों की संख्या करीब 20 हजार है। पाकिस्तान के आन्तरिक मंत्री के हवाले से 2001 की न्यूज लाइन पत्रिका के अंक में छपा है कि इन बीस हजार मदरसों में करीब 30 लाख छात्र हैं। इनमें से करीब 7 हजार मदरसे देवबन्दियों के है जिन्हे आतंकवादी प्रशिक्षण का गढ़ माना जाता है। इन देवबन्दी मदरसों में करीब 70 हजार युवक जिहाद की शिक्षा प्राप्त करते हैं। कुछ जॉन रीड जैसे विशेषज्ञों का अनुमान है कि कुल मदरसों की संख्या 8 से 15 हजार के मध्य है जबकिं विल्सन की राय में यह संख्या 40 से 50 हजार तक है। पाकिस्तान की चर्चित मासिक पत्रिका 'द हेराल्ड' ने मई 2000 अंक में सरकारी रिपोर्ट का हवाला देते हुये छापा था कि अकेले बलूचिस्तान में मदरसों की संख्या 1000 है। समस्त अनुमानों के आधार पर कहा जा सकता है कि पाक में मदरसों की संख्या इतनी अधिक है कि कट्टरता और आतंकवाद फैलाना कठिन नहीं है। यहाँ का सबसे बड़ा मदरसा बिनोरी मस्जिद माना जाता है जो कराची के बिनोरी कस्बे में है। दूसरा सबसे बड़ा मदरसा "आखोर खट्टक" के नाम से जाना जाता है।

पाकिस्तानी अर्थव्यवस्था बैसाखियों पर टिकी हुयी है। पाकिस्तान सैनिक असफलता से अधिक आर्थिक क्षेत्र में असफल रहा है। पाकिस्तानी सरकार कभी अपनी अर्थव्यवस्था के बारे में आश्वस्त नहीं रही। पाकिस्तान की रक्षा नीति के समान ही वहाँ भारत से बराबरी या भारत से ऊपर उठने की चेष्टा में पाकिस्तानी शासक भूल जाते हैं कि दोनों देशों के क्षेत्रफल और संसाधनों में बड़ा अन्तर है। सबसे बड़ी बात यह है कि भारत के राष्ट्रीय बजट का जो भाग आर्थिक और औद्योगिक विकास पर व्यय होता है उसका अनुपात पाकिस्तान की अपेक्षा बहुत अधिक है। इस दृष्टि से यदि दोनों देशों के बजट की तुलना की जाय तो यह प्रतीत होगा कि

पाकिस्तानी शासकों को विकास की चिंता कतई नहीं है।

पाकिस्तान के बजट का 70 प्रतिशत भाग सेना एवं ऋण वापसी में खर्च होता है उसके सेना के कुल खर्च का एक बड़ा हिस्सा जम्मू कश्मीर की गतिविधियों में खर्च होता है जिसमें कश्मीरी आतंकवादियों को दिया जाने वाला समर्थन भी शामिल है।(58)

पाकिस्तान करीब तेरह करोड़ तीस लाख की जनसंख्या वाला देश है और उसकी जनंसख्या वृद्धि दर 2.6 प्रतिशत है। सकल घरेलू उत्पाद वृद्धि दर 5.3 फीसदी है साथ ही वहाँ प्रतिव्यक्ति घरेलू उत्पाद 1605 डालर है जबकि प्रतिव्यक्ति राष्ट्रीय उत्पाद 492 डालर है। पाकिस्तान में 37.8 प्रतिशत लोग साक्षर हैं। इस वक्त पाकिस्तान में मुद्रास्फीति 4.8 प्रतिशत है। पाकिस्तान सालाना 8.3 अरब डालर की वस्तुयें विदेशों को निर्यात करता है और उसका स्वर्ण भंडार 1.7 अरब डालर है पाक का चालू खाता सन्तुलन 1.8 अरब डालर है और उसका सकल घरेलू उत्पाद 206 अरब डालर है। वहाँ 51 व्यक्तियों पर एक टेलीफोन है। पाकिस्तान में लोगों की औसत आयु 63 वर्ष है। इन तथ्यों से पाकिस्तान की दयनीय स्थिति प्रदर्शित होती है।(59)

"पाकिस्तान में यदि युद्ध न हुआ तो वहाँ गृह युद्ध होगा"(60)

इन समस्त कारणों एवं स्थितियों के साथ पाकिस्तान को भारत विरोध का एक आसान रास्ता मिल जाता है जो कि पाकिस्तान को गृहयुद्ध एवं विखण्डन से बचाता है।

पाकिस्तान के राष्ट्रपति परवेज मुशर्रफ ने खुद कहा कि अफगानिस्तान की 'गर्द बैठने के बाद' ही कश्मीर पर विचार हो पायेगा और यदि अमरीका के कहे पर विश्वास किया जाये तो गर्द को दबाने में कई वर्ष लग जायेंगे, क्योंकि आतंकवाद की व्याधि के निर्मूलन के लिये लड़ाई लम्बी चलेगी। इस परिदृश्य में कश्मीर के विचार को अभी किनारे किया जा सकता है। भारत और पाकिस्तान के बीच जो अन्य मामले विचाराधीन है फिलहाल उन पर विचार करना असामयिक नहीं होगा, क्योंकि कश्मीर के अनेक पहलू हैं और एक या दूसरे लिहाज से तालिबान और उनके समर्थकों से भी उसका सम्बन्ध जुड़ा हुआ है।

पूर्व प्रधानमंत्री बेनजीर भुट्टो के अनुसार कश्मीर समस्या ऐसी समस्या है जिसका समाधान नहीं खोजा जा सकता, इसे तो मैनेज ही करना होगा। समाधान नहीं खोजे जा सकने

---

58. न्यूयार्क टाइम्स : 30 अगस्त 1998, द ट्रिब्यून, 10 अक्टूबर 1998
59. सैमुअल वेद : पाकिस्तान का दर्द, राष्ट्रीय सहारा, 5 जनवरी 2002, पृ. 1
60. स्मृति पटनायक (पाक मामलों की विशेषज्ञ) : "युद्ध न हुआ तो गृह युद्ध होगा पाक में", राष्ट्रीय सहारा, 5 जनवरी 2002, पृ. 3

सम्बन्धी उनकी टिप्पणी गले नहीं उतरने वाली है। न तो पाकिस्तान बलात् भारत से कश्मीर हथिया सकता है और न ही भारत शान्तिपूर्वक उसे पाकिस्तान को सौंप सकता है।

"भारत के साथ शत्रुता से पाकिस्तान को किसी लिहाज से कोई लाभ नहीं हुआ। वह आर्थिक और अन्तर्राष्ट्रीय दोनों ही दृष्टि से घाटे में रहा है।"(61)

अतः आज दोनों ही राष्ट्रों (भारत एवं पाकिस्तान) को समय रहते पुनः एक बार आत्ममंथन कर स्पष्ट रूप से अपने राष्ट्रीय हितों को पुनः रेखांकित करना चाहिये क्योंकि समय रहते दोनों राष्ट्र अपने यथार्थ राष्ट्रीय हितों को रेखांकित करने में असफल रहे तो निकट भविष्य में कश्मीर समस्या केवल भारत एवं पाकिस्तान के मध्य ही नहीं वरन् सम्पूर्ण दक्षिण एशिया के लिये नासूर बन जायेगी। जिसका इलाज केवल सर्जरी ही हो सकता है। जो निःसन्देह सम्पूर्ण विश्व के लिये कष्टकारी होगा।

"मुशर्रफ को अभी हमारा विश्वास अर्जित करना है। उन्होंने कारगिल में घुसपैठ से अपना कैरियर आरम्भ किया। ताशकंद, शिमला और लाहौर में इससे पूर्व हुये विश्वासघात की कटु स्मृतियाँ भी हमें हैं हीं। फिर भी उन्होंने एक ऐसे व्यक्ति की छवि दर्शाने का प्रयास किया है जो अपने मुल्क की भाव भंगिमा बदलना चाहता है जिसकी बुनियाद ही मजहब और कट्टरतावाद के आक्रोश पर रखी गयी थी। हमें अपनी प्रतिक्रिया में अधिक सकारात्मक होना चाहिये था।(62) अभी देखना यह है कि मुशर्रफ कुछ सकारात्मक होकर कश्मीर समस्या पर गम्भीर हैं या नहीं। क्या मुशर्रफ इस दिशा में कुछ नया पैगाम देंगे या वही पुराना राग अलापते हैं।

✦✦✦

---

61. कुलदीप नैयर : तनाव घटाने का सही समय, दैनिक जागरण कानपुर, 17 अक्टूबर 2001
62. कुलदीप नैयर : क्या कश्मीर की गुत्थी सुलझेगी, दैनिक जागरण कानपुर, 23 जनवरी 2002

चतुर्थ अध्याय

अध्याय चतुर्थ

कारगिल युद्ध और कश्मीर समस्या

20 वर्ष पहले जुलाई 1979 को सीमावर्ती लद्दाख जिले को काटकर नया जिला कारगिल बनाया गया था लेकिन लगता है कि भारत सरकार का लेह से कारगिल को अलग करने का निर्णय आत्मधाती साबित हुआ। कुछ हद तक कहा जा सकता है कि भारत सरकार का यह निर्णय कश्मीर के तत्कालीन शासन के हितों के अनुरूप था, लेकिन यही एक ऐसा निर्णय था, जिसने न केवल वहाँ के लोगों में साम्प्रदायिकता के बीज बोये, बल्कि लद्दाखियों और कारगिल निवासियों के बीच घृणा का जहर भी फैलाया। भारत सरकार के उस निर्णय पर पाकिस्तान ने आग में घी डालने का कार्य शुरू किया जो उसके लिये फायदेमन्द रहा। उल्लेखनीय है कि उस समय कश्मीर राज्य के मुख्यमंत्री स्वर्गीय शेख अब्दुल्ला थे।

इतिहास के अनुसार चौदहवीं और सोलहवी शताब्दी के मध्य कारगिल नाम अस्तित्व में आया। वर्तमान कारगिल जिले में वाल्टिस्तान का कुछ हिस्सा भी शामिल किया गया है। प्राचीन इतिहास में उस हिस्से को पुरिक के नाम से जाना जाता है। कारगिल का एक सामरिक अर्थ है 'कार' यानि 'सफेद' और ''अगिल'' यानी 'स्थान'। तिब्बती में गारगिल के नाम से सम्बोधित किया जाता है जिसका अर्थ है चौराहा। स्कार्दू तथा लेह के बीच एवं काशगर तथा श्रीनगर के बीचों बीच स्थित होने से कारगिल नाम सार्थक करता है।(1)

कारगिल की अनोखी सामरिक स्थिति है। यह ऐसी जगह पर स्थित है जो चार घाटियों का प्रवेश द्वार है। इसलिये पाकिस्तानी सेना लद्दाख में हमले के लिये कारगिल को प्रमुख निशाना बनाती है। तेरहवीं शताब्दी से कारगिल का अन्त तक जो इतिहास रहा है वह यह स्पष्ट करता है कि यह क्षेत्र सामरिक दृष्टिकोण से कितना महत्वपूर्ण है। कारगिल एक ऐसा क्षेत्र है जो जोजीला दर्रा के द्वारा शेष राज्य के सड़क सम्पर्क मार्ग से जुड़ा है। यह अक्टूबर से लेकर मई तक बर्फ से घिरा रहता है क्योकि यह मार्ग 11300 फुट ऊँचाई पर है।(2)

भौगोलिक दृष्टि से कारगिल जिले का क्षेत्रफल 14036 वर्ग किलोमीटर और यहाँ की जनसंख्या लगभग 81,000 है। कारगिल में दो तहसीलें हैं, कारगिल और जन्सकर। जिले का एक

---

1. श्रीमती नीलम सिंह : भारत–पाक सम्बन्ध, प्रतियोगिता दर्पण, नवम्बर 1999, पृ. 269
2. Amitabh Mattoo : Kargil and Kashmir, World focus monthly discussion journal, 1999, p.p. 25

KARGIL DISTRICT
DRASS
KARGIL
CHIKTAN
SANKOO
SHERGOL
TAISURU
SRINAGAR DISTRICT
LEH DISTRICT
ANANTNAG DISTRICT
DODA DISTRICT
ZANSKAR
PADUM
LEGEND
DISTRICT BOUNDARY
DISTRICT HEADQUARTER
BLOCK HEADQUARTER
ROADS
HIMACHAL PRADESH
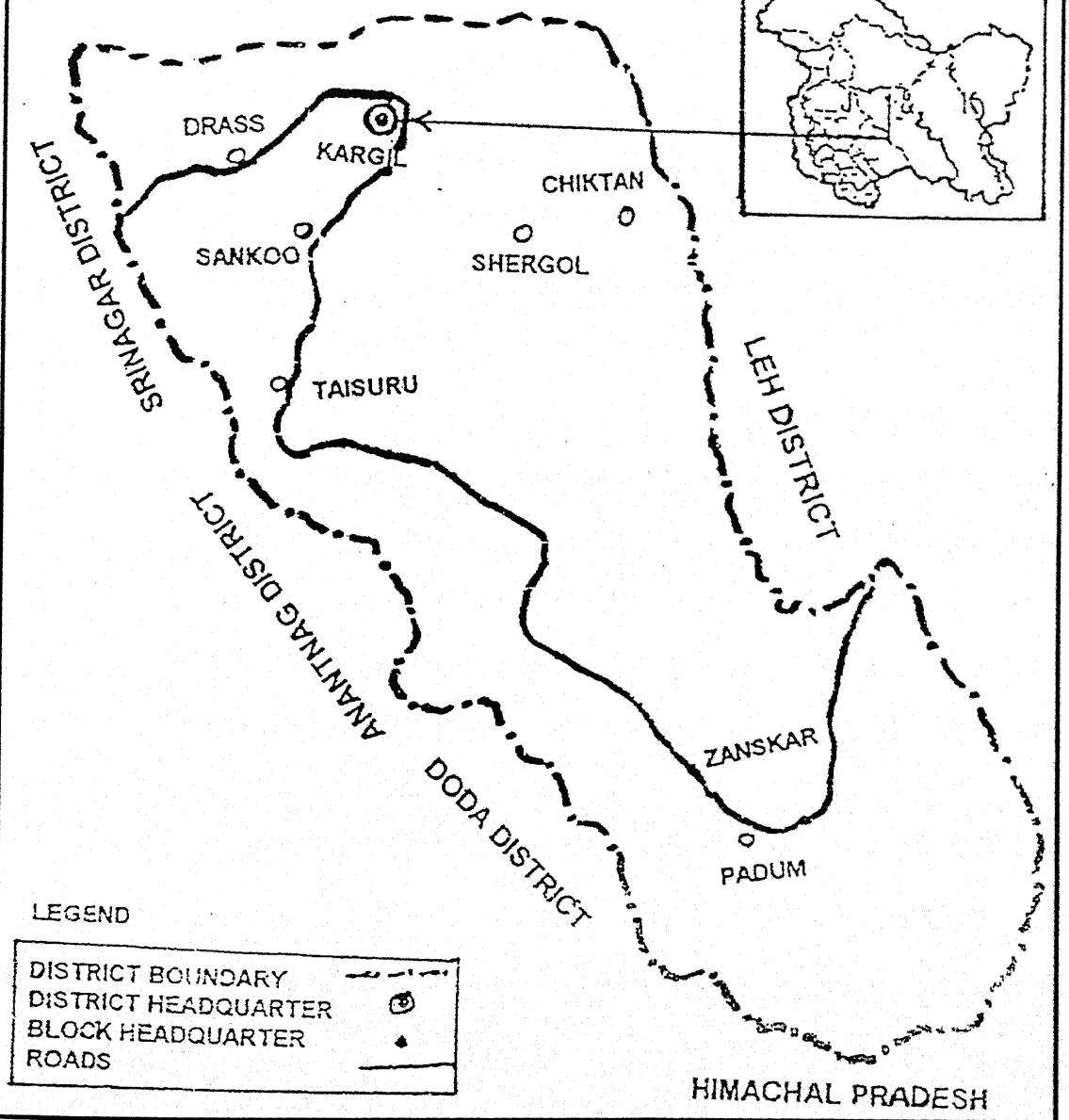
अन्य प्रमुख गाँव है – द्रास, जो साईबेरिया के बाद विश्व का सबसे बड़ा दूसरा ठण्डा क्षेत्र है। द्रास का तापमान जाड़ों में माइनस पचास डिग्री तक पहुँच जाता है। जन्सकर के पोनीज पोलो तथा स्कीड के लिये सबसे अच्छे माने जाते हैं। कारगिल के निवासी मंगोल, दुख्या तथा मौख जाति के वंशज हैं। चौदहवीं शताब्दी के दौरान कारगिल में इस्लाम धर्म आया।[3]

1846 में डोगरा सेना के कमांडर जनरल जोरावर सिंह ने लद्दाख की खोज की। डोगरा ने बाल्टिस्तान, पुरिक, जन्सकर तथा लद्दाख के आस पास के क्षेत्रों को संगठित किया और पूरा क्षेत्र जम्मू कश्मीर राज्य का एक हिस्सा बना। क्षेत्र को तीन मंडलों स्कार्दू, कारगिल तथा लेह में विभाजित किया गया। बटालिक के लोगों कों आर्यों का वंशज माना जाता है।

पाकिस्तान की वर्षों से नजर लद्दाख पर लगी हुई थी। सन 1971 के युद्ध में भारत द्वारा छीने गये क्षेत्रों को पुनः हासिल करना उसकी प्राथमिकता है। पाकिस्तान के लिये यह कार्य मुश्किल भी है क्योंकि पहली बात यह है कि अन्य घाटियों की तरह लद्दाख इस्लामी आन्दोलन को चलाने के लिये उचित स्थान नहीं है। यद्यपि यहाँ साम्प्रदायिक तनाव फैलाने का कई बार प्रयास किया गया है। दूसरी बात यह है कि पथरीले और बर्फीले पहाड़ छापामार अभियान चलाने के लिये भी उचित नहीं है। इसलिये पाकिस्तान ने अपनी रणनीति बदली और कारगिल–लेह सम्पर्क मार्ग पर नजर गड़ाई और इस बार की घुसपैठ श्रीनगर–लेह राजमार्ग संख्या एक को अपने कब्जें में लेने और नियंत्रण रेखा को बदलने की नियत से कराई गई। पाकिस्तान का कहना है कि नियंत्रण रेखा स्पष्ट नहीं है जब कि वास्तव में नियंत्रण रे.खा को शिमला–समझौते के समय करीब डेढ़ दर्जन नक्शों पर उतार कर स्पष्ट कर दिया गया था। इन सभी नक्शों पर भारत एवं पाकिस्तान के प्रमुख सैन्य–अधिकारियों के हस्ताक्षर हैं।[4]

पाकिस्तान शुरू से ही काश्मीर को बल पूर्वक हासिल करने का हिमायती रहा है इसीलिये उसने सर्वप्रथम 1947–48 में कश्मीर हथियाने के लिये वहाँ सशस्त्र कबाइलियों की घुसपैठ कराई थी तब जम्मू–कश्मीर एक स्वतंत्र राज्य था। वहाँ के तत्कालीन महाराजा हरीसिंह ने जब देखा कि इस घुसपैठ से निपटने का सामर्थ्य उनके राज्य में नहीं है तो उन्होंने अपने राज्य को भारत में मिलाने तथा भारत से सैन्य सहायता करने का अनुरोध किया। भारत ने उनके अनुरोघ को तत्काल स्वीकार किया फलतः कश्मीर के भारत में औपचारिक विलय होते ही भारत

---

3. राजकुमार अग्रवाल : कारगिल संघर्ष एवं भोगोलिक परिस्थितियाँ, प्रतियोगिता किरण, मई 2000, पृ. 246
4. राजकुमार अग्रवाल : कारगिल संघर्ष एवं भोगोलिक परिस्थितियाँ, प्रतियोगिता किरण, मई 2000, पृ. 246

ने घुसपैठियों को खदेड़ने के लिये सैन्य कार्यवाही शुरू की। भारतीय सेना के पराक्रम से घुसपैठिये पीछे हटने को मजबूर हुये। यदि सेना को कुछ समय और मिल जाता तो सम्भवतः पूरा जम्मू कश्मीर भारत का अभिन्न अंग होता परन्तु भारतीय सेनाओं को मिल रही अच्छी सफलता के बावजूद भारत सरकार ने पूरे जम्मू कश्मीर क्षेत्र को मुक्त कराने में यथेष्ट रुचि नहीं ली और शीघ्र ही तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू इस मामले को संयुक्त राष्ट्र में ले गये। इससे द्विपक्षीय कश्मीर विवाद के अन्तर्राष्ट्रीयकरण की सम्भावना बढ़ गई। 1 जनवरी 1949 को संयुक्त राष्ट्र आयोग के प्रस्ताव के आधार पर युद्ध विराम को दोनों देशों ने मान लिया।[5] युद्ध विराम के लागू होते ही दोनों देशों की सेनायें जहाँ थीं वहीं थम गईं परिणामस्वरूप पाकिस्तान के कब्जे में कश्मीर का 32,000 हजार वर्ग मील क्षेत्र चला गया। पाकिस्तान इसी क्षेत्र को आजाद कश्मीर कहता है। यहीं से वह आये दिन घाटी में विध्वंसक कार्यवाहियाँ चलाने के लिये घुसपैठिये और आतंकवादियों को भेजता रहता है और यहीं उसने उन्हें प्रशिक्षित करने के लिये शिविर लगा रखे हैं। आजाद कश्मीर और शेष भारत के बीच सबसे बड़ी बाधा नियंत्रण रेखा ही है। 29 जुलाई 1949 को कराची समझौते के आधार पर इस क्षेत्र को कुछ सेक्टरों में एक युद्ध विराम रेखा स्वीकार की गई थी। सन् 1965 के युद्ध में जो देश जहाँ तक पहुँच गया वही उसके लिये नियंत्रण रेखा हो गई। सन् 1971 के युद्ध ने भारत को पुनः स्वर्णिम अवसर दिया था कि वह कश्मीर समस्या के बारे में पाकिस्तान को अपनी शर्तों के मानने को बाध्य कर सके जबकि इस युद्ध में पाकिस्तानी सेनायें बुरी तरह परास्त हुईं थीं किन्तु भारत के सैनिकों ने जिसे युद्ध के क्षेत्र में जीता था, उसे भारत की कूटनीति ने शिमला में खो दिया। कश्मीर समस्या का स्थायी हल ढूढ़े बिना पाकिस्तान को 5000 वर्ग मील से अधिक का क्षेत्र वापिस लौटा दिया गया। शिमला समझौते के तहत जम्मू–कश्मीर में 17 दिसम्बर 1971 को हुये युद्ध विराम के अनुरूप नियंत्रण रेखा को मान्य कर दिया गया। तबसे स्थापित हुयी यह नियंत्रण रेखा जिले के अखनूर कस्बे से शुरु होकर राजौरी, पुंछ, उड़ी, कुपवाड़ा, कारगिल, लेह होती हुई सियाचिन तक मानी गई है। इसकी जम्मू–कश्मीर में कुल लम्बाई 814 कि.मी. है। भारत तो सम्पूर्ण जम्मू–कश्मीर को अपने नक्शे में दिखाता है जो कि उचित भी है किन्तु वास्तविकता यह है कि वास्तविक नियंत्रण रेखा जम्मू–कश्मीर को दो स्पष्ट भागों में बांट देती है – 1. भारत प्रशासित कश्मीर 2. पाक अधिकृत

---

5. जाफी : कारगिल से कारगिल तक, दैनिक जागरण, 11 जुलाई 1999

कश्मीर। भारतीय सेनायें वास्तविक नियंत्रण रेखा के पार नहीं जाती हैं।[6]

पाकिस्तान का दूसरा स्वार्थ यह है कि कारगिल संकट से उत्पन्न युद्ध का खतरा विश्व समुदाय विशेषकर प्रमुख शक्तियों को चिन्तित करके उन्हे इस मामले में हस्तपेक्ष करने के लिये प्रेरित करना और तब कारगिल संकट को कश्मीर समस्या के एक हिस्से के रूप में प्रस्तुत करके कश्मीर समस्या का अन्तर्राष्ट्रीयकरण किया जा सकेगा।

पाकिस्तान घुसपैठ की आड़ में भारत में इस्लाम के नाम पर युद्ध सा छेड़कर इस्लामी देशों से मदद एवं सहानुभूति भी पाना चाहता है। परमाणु परीक्षण करने के बाद पाकिस्तान में इस्लामी जगत का नेता बनने की महत्वाकांक्षा भी जाग्रत हुई है साथ ही वह कुशासन तथा आर्थिक परेशानियों से ग्रस्त पाकिस्तानी जनता का ध्यान बंटाने के लिये सीमाओं पर युद्ध का भय खड़ा करना चाहता है। यहाँ यह प्रश्न विचारणीय है कि आखिर पाकिस्तानी सेना एवं उसके समर्थित आतंकवादी घुसपैठियों द्वारा कारगिल क्षेत्र को ही क्यों बराबर लगातार निशाना बनाया जा रहा है ? एक ट्रेड रिपोर्ट के अनुसार पाकिस्तान का इरादा है कि यदि कारगिल क्षेत्र के श्रीनगर–लेह मुख्य राजमार्ग से भारतीय सैनिकों की रसद एवं आवश्यक आपूर्ति बंद हो जाये तो नियंत्रण रेखा पर सरलता से अधिकार जमाया जा सकता है। चूँकि लेह–लद्दाख को जोड़ने वाला 434 किलोमीटर लम्बा श्रीनगर–कारगिल–लेह मार्ग इस क्षेत्र का सबसे महत्वपूर्ण प्रमुख मार्ग है इसी के द्वारा एशिया के काकपिट अर्थात सियाचिन ग्लेशियर पर पहुँचा जाता है। यद्यपि इस प्रमुख मार्ग को संवेदनशीलता और सामरिक दृष्टि से नाजुक हो जाने के कारण एक नये मनाली–लेह मार्ग का निर्माण किया जा चुका है किन्तु अभी हमारा इस क्षेत्र का अधिकांश आवागमन श्रीनगर, कारगिल–लेह प्रमुख राजमार्ग द्वारा ही किया जा रहा है। पाकिस्तान का असली इरादा इस मार्ग को अवरुद्ध करके सियाचिन क्षेत्र की आवश्यक आपूर्ति को खंडित करके इस संवेदनशील क्षेत्र को अधिकृत करना और प्रशिक्षित उग्रवादियों को इस इलाके में प्रवेश कराके जनता में आतंक व दहशत फैलाकर भारतीय सुरक्षा व्यवस्था को कमजोर करना तथा देश की एकता–अखण्डता और सम्प्रभुता के लिये सीधी चुनौती देना था।[7]

इस तरह पाकिस्तान प्रायोजित इस घुसपैठ का उद्देश्य अत्यन्त चिन्ताजनक और बहुआयामी था इसलिये अंततः भारतीय सुरक्षा सैनिकों को जम्मू–कश्मीर के कारगिल क्षेत्र में

---

6. श्रीमती नीलम सिंह : भारत एवं पाक सम्बन्ध, प्रतियोगिता दर्पण, मई 2000, पृ. 246
7. श्रीमती नीलम सिंह : भारत एवं पाक सम्बन्ध, प्रतियोगिता दर्पण, मई 2000, पृ. 246

कुंडली मारे बैठे भाड़े के आतंकवादियों और पाकिस्तानी सैन्य कर्मियों के विरुद्ध सैनिक कार्यवाही करनी ही पड़ी। घुसपैठिये भले ही संख्या में कम हों पर वे खतरनाक आधुनिकतम सैन्य साजोसामान से लैस थे उन्होने ऊँची–ऊँची चोटियों पर पहले ही कब्जा जमाकर भारतीय सेना को गम्भीर चुनौती पेश करने की योजना बनाई। अतः इन सब तथ्यों के विरुद्ध सख्त कार्यवाही करने का निश्चय किया और 14 मई 1999 को सभी प्रभावित सेक्टरों में घुसपैठियों को मार भगाने के लिये आपरेशन फ्लश आउट शुरू किया गया। इस कार्यवाही में भारतीय सेना ने घुसपैठियों को चारों ओर से घेर तो लिया पर दुर्गम इलाका होने से उन्हें पूरी तरह समाप्त करने के लिये वायुसेना की मदद लेना अपरिहार्य हो गया। अतः 26 मई 1999 से भारतीय वायुसेना ने घुसपैठियों के विरुद्ध कार्यवाही शुरू की। इसे 'आपरेशन विजय' की संज्ञा दी गई। आपरेशन विजय भारतीय सेना का अब तक का सबसे अधिक साहसिक और कठिन अभियान रहा। दुर्गम और बर्फीली पहाड़ियों से दुश्मन को भगाने के लिये सेना को आमने–सामने का युद्ध करना पड़ा। पाकिस्तान के लिये तो यह युद्ध जम्मू–कश्मीर में एक दशक पुराना अलगाववादी संघर्ष का एक हिस्सा है। विश्लेषकों का मानना है कि पाकिस्तानी सेना द्वारा की गई घुसपैठ टोपेक आपरेशन का एक हिस्सा है जिसे 1971 में पूर्वी पकिस्तान में हुई अपने देश की हार का बदला लेने के लिये स्वर्गीय जनरल जिया–उल–हक ने तैयार किया था। जिया–उल–हक के समय कश्मीर में हिंसा के द्वारा अलगाववाद फैलाने के लिये टोपेक अभियान का ब्लू प्रिंट तैयार किया गया था। वह घाटी में दीर्घावधि तक चलाये जाने वाले संघर्ष का हिस्सा था।

विश्लेषकों का मानना है कि 1997 की गर्मी से ही इस अभियान को सफल बनाने के लिये पकिस्तान ने कारगिल में बड़ी मात्रा में सैन्य सामग्री, बमबारी के साधन जुटाना शुरू कर दिये थे। उसका उद्देश्य लोगों को आतंकित करना था ताकि वे ऊँची पहाड़ियों से भाग जायें। इस रणनीति से पाकिस्तानी सेना को भारत की खुफिया एजेन्सियों की आँखों में धूल झौंकने में मदद मिली। पाकिस्तानी सेना का उद्देश्य संचार और आपूर्ति मार्ग को नष्ट करना था ताकि स्थानीय लोगों को मदद न मिल सके। पाकिस्तान ने इस समय त्रिकोणीय रणनीति अपनाई।[8]

1. जोजीला दर्रा को खोलने के लिये पहले श्रीनगर एवं लेह से कारगिल और द्रास को अलग करना।

---

8. डॉ. श्रीमती राजेश जैन : कारगिल संकट और भारत पाक सम्बन्ध, प्रतियोगिता दर्पण, नवम्बर 1999, पृ. 269

2. बटालिक और चोहबाटला के मार्फत खालट तक पूरी घाटी पर कब्जा करना।

3. तुरतुक फरोल त्याकक्षी घांग तथा चांलुगका गाँवों को मिलाकर बने तुरतुक के 254 वर्ग मील पर कब्जा करने के लिये शयोक घाटी में प्रवेश करना।

यदि अप्रैल 1999 में जोजीला बाईपास पहले खुल जाता तो पाकिस्तानी सेना अपने लक्ष्य में सफल हो सकती थी। केन्द्र सरकार का इस क्षेत्र मे घुसपैठ और युद्ध का आंकलन गलत साबित हुआ।(9)

इंग्लैड के ''सण्डे टेलीग्राफ'' की रिपोर्ट के अनुसार घुसपैठियों का पहला जत्था फरवरी 1999 के पहले सप्ताह में ही पाक अधिकृत कश्मीर में पहुँच चुका था जिसमें अधिकतर अरबी एवं अफगानी थे। ये घुसपैठिये उस छापामार युद्ध में पारंगत माने जाते हैं जिसका प्रशिक्षण अफगानिस्तान के तालिबान विद्रोहियों एवं पश्चिमी देशों के लिये आतंक का पर्याय माने जाने वाले प्रशिक्षण केन्द्रों में दिया जाता है।(10)

एक अन्य अमरीकी पत्रिका ''जेम्स डिफेंस वीकली'' के अनुसार अत्याधुनिक हथियारों से सज्जित 3000 पूर्ण प्रशिक्षित घुसपैठिये पाक अधिकृत कश्मीर में भारतीय सीमा में घुसने को तैयार थे। लेकिन भारतीय सेना की सख्त कार्यवाही से उनकी यह योजना सफल नहीं हो पाई। भारतीय फौज को कड़े मुकाबले का सामना करना पड़ा और भारतीय सेना का कारगिल, तुरतुक, द्रास और बटालिक आदि इलाकों पर पुनः नियंत्रण कायम हो गया है। घुसपैठियों का मनोबल टूट गया और भारतीय क्षेत्रों से पलायन करने को विवश हो गये।

भारतीय सेनायें अत्यन्त संयम, उच्च स्तरीय पराक्रम एवं तत्परता के साथ पाकिस्तान के नापाक इरादों को विफल करने में सफल हो गईं। वहाँ पाकिस्तान की मियाँ नवाज सरकार अन्तर्राष्ट्रीय जगत द्वारा दुत्कारे जाने पर हताश होकर अपने घुसपैठिये वापस बुलाने को तैयार हो गई तथा भारत की बाजपेई सरकार ने 16 जुलाई 1999 तक का समय पाक घुसपैठियों से भारतीय सीमा क्षेत्र खाली कर देने की घोषणा की।

कारगिल संघर्ष में पाकिस्तान को दोहरी असफलता का सामना करना पड़ा। एक

---

9. डॉ. श्रीमती राजेश जैन : कारगिल संकट और भारत पाक सम्बन्ध, प्रतियोगिता दर्पण, नवम्बर 1999, पृ. 269

10. डॉ. श्रीमती राजेश जैन : कारगिल संकट और भारत पाक सम्बन्ध, प्रतियोगिता दर्पण, नवम्बर 1999, पृ. 269

ओर तो भारतीय सेना के शौर्य और वीरता ने सैनिक मोर्चे पर उसे पीछे हटने को बाध्य कर दिया तो दूसरी ओर कूटनीतिक मोर्चे पर अन्तर्राष्ट्रीय समर्थन पाने के बजाय बुरी तरह निराश होना पड़ा। वह इसलिये कि अमरीका, चीन जैसे पाक समर्थित राष्ट्रों ने उसकी निन्दा करते हुये वास्तविक नियंत्रण रेखा से अपने घुसपैठिये वापस बुलाने के लिये दबाव डाला। पाकिस्तान के लिये यह चिन्ता का विषय रहा है कि चीन तक ने भारतीय सैन्य कार्यवाही की निन्दा नहीं की और कहा कि "दोनों देशों को कश्मीर मुद्दा आपसी बातचीत से हल करना चाहिये।" फ्रांस और रूस सहित कई अन्य देशों ने पाकिस्तान पर दबाव डाला कि वह कश्मीर में युद्ध की स्थिति न पैदा होने दे। संयुक्त राज्य अमरीका और ब्रिटेन ने खुलकर पाकिस्तान की आलोचना कर उसे युद्ध का माहौल पैदा करने के लिये उत्तरदायी माना है। अनेक राष्ट्रों ने यह भी आश्वासन दिया कि वह सुरक्षा परिषद में पाक को कश्मीर मुद्दा नही उठाने देंगे। हाल ही में कोलोन में हुई जी–8 के विदेश मंत्रियों की बैठक में जारी संयुक्त विज्ञप्ति में भारत और पाकिस्तान से वास्तविक नियंत्रण रेखा का सम्मान करने का अनुरोध किया गया।

इन सब अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिक्रियाओं के बाद सबसे महत्वपूर्ण एवं अप्रत्याशित प्रतिक्रिया अमरीका की रही, उसने पहली बार कश्मीर के मुद्दे पर भारत का पक्ष लिया। अमरीका ने चेतावनी भी दी कि वह इस मुद्दे पर पाकिस्तान के खिलाफ आर्थिक प्रतिबन्ध भी लगा सकता है। इस प्रकार अमरीका के इस बदले रुख ने पाकिस्तान को चिन्ता में डाल दिया क्योंकि जब पाकिस्तानी प्रधानमंत्री 4 जुलाई 1999 को अमरीका पहुँचे, तो अमेरिकी राष्ट्रपति ने स्पष्ट शब्दों मे कह दिया कि "पकिस्तान को वास्तविक नियंत्रण रेखा का सम्मान करना ही पड़ेगा।" वाशिंगटन घोषणा पत्र में कहा गया कि "पाकिस्तान वास्तविक नियंत्रण रेखा का सम्मान करते हुये मौजूदा संघर्ष को समाप्त करने के लिये ठोस कदम उठायेगा तथा दोनों देश अपनी सभी समस्यायें शिमला समझौते और लाहौर घोषणा पत्र के अनुसार हल करेंगे।[11]

कारगिल मसले पर अन्तर्राष्ट्रीय जनमत अभी भारत के पक्ष में है, किन्तु भारत को अपने धैर्य एवं अपनी राजनीति की समीक्षा भी करनी चाहिये, कहीं ऐसा न हो कि अतिशय उदारता हमारे लिये अधिक महँगी सिद्ध हो जाये क्योंकि पाकिस्तान अपने को पराजित होता देखकर कोई भी कदम उठा सकता है। दूसरी तरफ अमरीका के समर्थन पर हमें हर्षित होकर

---

11. विनोद कुमार तैलग : कारगिल एक गम्भीर राजनैतिक संकट, प्रतियोगिता दर्पण, अगस्त 1999, पृ. 65

चुपचाप नहीं बैठना है। अमरीका किसी भी देश का समर्थन या विरोध मात्र अपने स्वार्थ के लिये हित या अहित में करता है। इस तथ्य को नजरन्दाज करना भारत के लिये हानिकारक होगा। इसके अतिरिक्त यह भी सावधानी रखनी होगी कि कहीं पाकिस्तान सम्पूर्ण भारतवासियों का ध्यान कारगिल क्षेत्र पर केन्द्रित कर अन्य सीमावर्ती चौकियों पर हमला कर हथियाने की कुटिलता न कर बैठे। अतः हमारी सेना, सरकार तथा गुप्तचर एजेन्सियों को इस दिशा में निरन्तर सजग, सतर्क और सचेष्ट रहने की आवश्यकता है।[12]

कारगिल युद्ध अब समाप्त हो चुका है। 52 दिन तक चली इस लड़ाई में भारतीय सेनाओं के 300 से अधिक अफसरों और जवानों ने अपने प्राणों की आहुति दी। इस अभियान में 10000 करोड़ रुपये खर्च हुये। भारत और पाकिस्तान के बीच इस युद्ध में निश्चित ही भारत की विजय हुई। जाति, धर्म और सम्प्रदाय के राजनीतिक विभाजन के बावजूद पूरा देश एक राष्ट्र के रूप में उठ खड़ा हुआ और सभी ने एक स्वर से भारतीय सेनाओं के अप्रतिम शौर्य और बलिदान का सम्पूर्ण समर्थन किया। राष्ट्रीय चेतना, देशभक्ति और एकजुटता का उद्घोष देश में चारों तरफ गूँज उठा।[13]

कारगिल युद्ध से उठने वाले राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नों पर विचार करने से पहले इस युद्ध की विशिष्ट परिस्थितियों का विश्लेषण करना आवश्यक है। लोकसभा के मध्यावधि चुनाव की घोषणा के लगभग एक महीने बाद कारगिल क्षेत्र में व्यापक पाकिस्तानी घुसपैठ का पता लगा और पाकिस्तानी सेना के सहयोग से नियंत्रण रेखा के पार भारतीय इलाकों मे बहुत अन्दर तक आये हुये घुसपैठियों को खदेड़ने के लिये 'आपरेशन विजय' आरम्भ किया गया। यह लड़ाई एक कामचलाऊ सरकार के नेतृत्व में लड़ी गयी। भारतीय सेनाओं के वीर जवानों ने 1965 और 1971 की लड़ाइयाँ पाकिस्तान की जमीन पर लड़कर जीती थी। कारगिल की लड़ाई हमारी अपनी जमीन पर लड़ी गयी। दुश्मन के सैनिकों को और घुसपैठियों को नियंत्रण रेखा के बाहर खदेड़ने के लिये हमें अपनी ही भूमि पर बमबारी, गोलाबारी करनी पड़ी । हमारे वीर जवान अपने देश की जमीन पर ही शहीद हुये। महीनों पहले से घुसपैठिये सीमा के अन्दर आते रहे और हमारी सरकार को कोई जानकारी नही मिली। सभी खुफिया तन्त्र की विफलता की बात कर रहे हैं। असल में कारगिल मोर्चे के हालात ही कुछ अलग से हैं। यहाँ हर बार आमने–सामने और

12. विनोद कुमार तैलग : कारगिल एक गम्भीर राजनैतिक संकट, प्रतियोगिता दर्पण, अगस्त 1999, पृ. 65
13. देवी प्रसाद त्रिपाठी : कारगिल या देश का दिल, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार 24 जुलाई 1999, पृ. 3

हाथों–हाथ की लड़ाई हुयी है।[14] अभी हाल में पाकिस्तान के उर्दू लेखक खुर्शीद कायम रबानी के संस्मरण छपे हैं। वे पाकिस्तानी सेना में अफसर थे और 1965 में कारगिल मोर्चे पर तैनात थे। उन्होने लिखा है कि एक दिन सुबह पौ फटने से पहले वे अपनी सैनिक टुकड़ियों का निरीक्षण करने निकले। लगभग आधे घण्टे बाद जब कायम रबानी सैनिकों के बीच पहुँचे, उन्होने जवानों से हालचाल पूछा और उनसे बहादुरी से लड़ने को कहा। एकाएक उन्हें पता लगा कि वे दूसरी ओर यानी भारतीय सैनिक टुकड़ी का निरीक्षण कर रहे हैं और वे वहाँ से खिसक लिये। इस घटना से संकेत मिलता है कि इस मोर्चे पर ऐसी गड्ड–मड्ड होती रही है। कुछ समय पूर्व प्रकाशित पत्रकार मनोज जोशी की कश्मीर विषयक पुस्तक में इस बात का प्रमाणिक उल्लेख है कि कई वर्षों से कारगिल की सरहदों की तरफ से घुसपैठिये आते जाते रहे हैं। पाकिस्तान और भारत की सेनाओं के बीच गोलाबारी और मुठभेड़ें होती रही हैं।

आपरेशन विजय एवं कारगिल संघर्ष का तिथिवार ब्यौरा

कारगिल में घुसपैठ के पश्चात आपरेशन विजय तक के काल का तिथिवार ब्यौरा निम्नवत है–[15]

8–15 मई 1999 :

गश्ती दल ने कारगिल की पहाड़ियों पर घुसपैठियों को देखा एवं इसकी सूचना अग्रसारित की एवं लगभग 25 किमी क्षेत्र में 100 घुसपैठियों के होने का अनुमान लगाया तथा यह भी अनुमान लगाया कि पाकिस्तान लेह–श्रीनगर सड़क सम्पर्क काटना चाहता है। परन्तु इस अनुमान से कहीं अधिक ही वास्तविकता स्वीकार की गई।

26 मई 1999 :

सेना द्वारा प्राप्त आँकड़ों एवं निगरानी के बाद माना गया कि कारगिल–द्रास–बटालिक सेक्टरों में 600–800 घुसपैठिये जमे हुये हैं। परन्तु वायुसेना के द्वारा किये गये हमलों से दुश्मन भारी चिन्ताग्रस्त हो गया एवं विरोधी कार्यवाही प्रारम्भ कर दी।[16]

---

14. के. के. रत्तू : कारगिल संघर्ष – नियंत्रण रेखा के आर–पार, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर
15. के. के. रत्तू : कारगिल संघर्ष – नियंत्रण रेखा के आर–पार, पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर, पृ. 27
16. Fifty days of operation vijay : World focus monthly discussion journal, June-July 1999, p.p. 47

कारगिल क्षेत्र में सेना की स्थिति

27 मई 1999 :

मिग–27 हादसा हुआ, पाकिस्तान ने फ्लाइट लेफ्टिनेंट के. नचिकेता को युद्धबन्दी बनाया तथा मिग–27 को नियंत्रण रेखा पर मार गिराया। स्क्वा. लीडर अजय आहूजा शहीद हो गये तथा इसी समय श्रीनगर हवाई अड्डा बन्द कर दिया गया।

28 मई 1999 :

एम. आई–17 हैलीकाप्टर मार गिराया गया। चार सदस्यीय चालक दल शहीद हो गया। फर्नांडीज ने कहा कि कारगिल मे नवाज शरीफ एवं आई.एस.आई का हाथ नहीं है।[17]

31 मई 1999 :

प्रधानमंत्री बाजपेई ने कहा, कारगिल में युद्ध जैसी स्थिति है। हताहतों की संख्या बढ़ने पर सेना ने रणनीति बदलने की बात की और कहा कि समुचित तैयारी के लिये समय चाहिये।

1 जून 1999 :

फर्नांडीज ने घुसपैठियों की सुरक्षित वापसी की पेशकश करके विवाद छेड़ा। राजनयिक प्रयास प्रारम्भ। फ्रांस और अमेरिका ने घुसपैठ के लिये पाकिस्तान को जिम्मेदार ठहराया और नियंत्रण रेखा का सम्मान करने को कहा।

3 जून 1999 :

पाकिस्तान ने सद्भावना दिखाते हुये युद्धबन्दी स्क्वाडन लीडर नचिकेता को वापस भारत भेजा जो कि पाकिस्तान की ओर से एक प्रशंसनीय कार्य सम्पादित किया गया।

6 जून 1999 :

पर्याप्त सैन्य तैयारी। कारगिल और द्रास में भारत का भारी हमला, साथ ही साथ हवाई आक्रमण। भारत ने तैयारी एवं घुसपैठ को देखते हुये यह निश्चित किया कि सैन्य कार्यवाही में थलसेना के साथ–साथ वायु सेना का प्रयोग करने के बाद एक सम्पूर्ण प्रतिरोध उत्पन्न करने की तैयारी पूर्ण कर लेने के पश्चात उसे आरम्भ कर दिया जाये। इसके पीछे मकसद श्रीनगर लेह राजमार्ग को पाकिस्तानी खतरे से मुक्त कराना था।

---

17. Fifty days of operation vijay : World focus monthly discussion journal, June-July 1999, p.p. 47

10 जून 1999 :

पाकिस्तान के द्वारा भारत की थलसेना की जाट रेजीमेन्ट के छैः जवानों के क्षत विक्षत शवों को वापस लौटाया, जिन्हें देखने से लगता था कि सैनिकों के साथ लगातार अमानवीय व्यवहार किया जाता रहा हो। इन शवों को देखकर सेना अधिकारियों एवं कार्यपालिका सदस्यों ने अपनी स्पष्ट नाराजगी प्रकट की।

12 जून 1999 :

कारगिल संकट को सुलझाने के लिये भारत पाकिस्तान के विदेशमंत्रियों का एक सम्मेलन दिल्ली में किया गया, इसमें गतिरोध उत्पन्न हो गया। पाकिस्तान के विदेशमंत्री से स्पष्ट तौर पर कहा गया कि घुसपैठियों को हटना ही होगा।

13 जून 1999 :

तोलोलिंग पर भारत ने कब्जा कर लिया यह भारतीय सेना के लिये एक निर्णायक मोड़ साबित हुआ तथा इसी समय प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी बाजपेयी ने भारी गोलाबारी के मध्य कारगिल का दौरा किया।(18)

15 जून 1999 :

भारतीय सेना एवं भारतीयों की सराहना करते हुये क्लिंटन ने अपना बयान दिया तथा जसवन्त सिंह जी इस सन्दर्भ में चीनी नेताओं से मिले।

17–18 जून 1999 :

जी–8 के नेताओं से मिलने के लिये बृजेश मिश्र ने जेनेवा में अमेरिकी राष्ट्रपति बिल क्लिंटन के सहायक को भारतीय प्रधानमंत्री का पत्र दिया। अमेरिका ने किसी भी कार्यवाही में देरी न करते हुये कहा कि "हफ्तों में नहीं दिनों में" कार्यवाही होगी।

20 जून 1999 :

20 जून को प्वांइट 5140 पर भारतीय सेना के कब्जे के साथ तोलोलिंग विजय सम्पन्न हुयी। ग्रुप–8 के देशों ने कारगिल घुसपैठ की समाप्ति के लिये कहा।

23–27 जून 1999 :

अमेरिकी जनरल जिन्नी ने इस्लामाबाद में नवाज शरीफ से मुलाकात की तथा इस

---

18. Fifty days of operation Vijay : World focus monthly discussion journal, June-July 1999, p.p. 47

समस्या पर गहन विचार विमर्श किया तथा अमेरिकी रुख के बारे में विस्तार से पाकिस्तानी प्रधानमंत्री नवाज शरीफ को जानकारी दी। वही दूसरी ओर क्लिंटन का विशेष दूत दिल्ली आया एवं अपनी स्थिति के बारे में भारतीय नेताओं से बात की।

28 जून 1999 :

28 जून तक अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्थितियों में लगातार बदलाव के बाद पाकिस्तानी प्रधानमंत्री नवाज शरीफ भयभीत हुये तथा बढ़ते हुये राजनयिक दबाव को कम करने के लिये नवाज शरीफ ने चीन की यात्रा की परन्तु जल्द ही असफलता हाथ में लिये वापस लौट आये।

4 जुलाई 1999 :

टाईगर हिल्स पर भारत का एक बार पुनः वर्चस्व स्थापित हुआ तथा भारतीयों ने टाईगर हिल्स मे अपना कब्जा स्थापित किया। पाकिस्तानी प्रधानमंत्री नवाज शरीफ एक बार पुनः अपनी राजनयिक कुशलता स्थापित करने के लिये वाशिंगटन में अमेरिकी राष्ट्रपति क्लिंटन से मिले। परन्तु यहाँ तो अमेरिकीयों के बदले तेवर देखकर नवाज शरीफ हैरान रह गये क्योंकि क्लिंटन ने नवाज शरीफ को घुसपैठियों को तुरन्त कारगिल से हटाने के लिये एवं बातचीत आरम्भ करने के लिये कहा। इस पर बाहरी तौर पर नवाज शरीफ सहमत दिखे तथा संयुक्त बयान जारी किया गया।

11 जुलाई 1999 :

11 जुलाई पाकिस्तान समर्थित घुसपैठियों ने कारगिल से हटना प्रारम्भ कर दिया। बटालिक स्थित प्रमुख चोटियों पर एक बार पुनः भारतीय सेना ने कब्जा स्थापित किया तथा घुसपैठियों की पूर्ण वापसी के लिये 16 जुलाई तक का समय दिया गया।

12 जुलाई 1999 :

पाकिस्तान के प्रधानमंत्री ने टेलीविजन पर अपने भाषण में घुसपैठियों की वापसी की बात की एवं साथ ही साथ भारतीय प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेयी से वार्ता की पेशकश की।

14 जुलाई 1999 :

14 जुलाई को बाजपेयी ने आपरेशन विजय की सफलता की घोषणा की तथा पाकिस्तान से बातचीत प्रारम्भ करने के लिये शर्तें रखी और कहा कि पाकिस्तान नियंत्रण रेखा का सम्मान करे और सीमा पार से आतंकवाद तुरन्त बन्द करे।

उपरोक्त तिथियों के माध्यम से यह ज्ञात होता है कि सम्पूर्ण कारगिल घुसपैठ में किन तिथियों में क्या–क्या घटनाओं के माध्यम से युद्ध हुआ एवं भारतीय सेना ने किस प्रकार आपरेशन विजय के माध्यम से राष्ट्रीय एवं राजनयिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विजय का वरण किया।

इस घुसपैठ की अहम बात यह थी कि घुसपैठ के पूर्व सम्पूर्ण भारतीय जाँच एजेन्सियों की आँख में धूल झौंककर घुसपैठ सम्पन्न की बाद में भारतीय एजेन्सियों एवं सुरक्षा व्यवस्था से सम्बद्ध लोगों को जानकारी प्राप्त हुयी जिसमें हमारी सुरक्षा एजेन्सियों की भूमिका पर प्रश्न चिन्ह लगा है। परन्तु बाद में जब इस घुसपैठ की जानकारी प्राप्त हुयी तब तुरन्त भारतीय सेना के द्वारा आपरेशन विजय के माध्यम से घुसपैठ का प्रतिरोध किया गया।

इन घुसपैठों तथा युद्धों के प्रतिरोध के लिये भारत तथा पाकिस्तान दोनों ही अपने–अपने बजट का एक बहुत बड़ा हिस्सा उस पर खर्च कर रहा है तथा बहुत ही बड़ी रक्षा पंक्ति को स्थापित किये हुये है। भारत का कुल सैन्य विश्लेषण निम्न प्रकार है –

रक्षा व्यय :

443 अरब रुपये[19]

कुल सशस्त्र सेना :

लगभग 12 लाख (हाल में पचास हजार सैनिकों की कटौती की गयी है) (सक्रिय)

लगभग 5.28 लाख (रिजर्व)[20]

थल सेना :

लगभग 10,00,000 (पचास हजार सैनिकों की कटौती के बाद)

पाँच क्षेत्रीय कमाण्ड हैं। 4 फील्ड आर्मी, 11 कोर, तीन बख्तरबन्द डिवीजन, 4 रैपिड डिवीजन, 15 स्वतंत्र ब्रिगेड, तीन इंजीनियर ब्रिगेड[21]

टैंक : 3414

बख्तरबन्द सैनिक वाहन (ए.पी.सी) : 850

सचल तोपें: 2175 (400 बोफोर्स होवित्जर सहित)

स्वचलित तोपें : 180

---

19. भारत क्या करे, सैन्य क्षमता, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार 10 जुलाई 1999, पृ. 1
20. भारत क्या करे, सैन्य क्षमता, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार 10 जुलाई 1999, पृ. 1
21. डॉ. कृष्ण कुमार रत्तू : कारगिल संघर्ष – नियंत्रण रेखा के आर पार पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर, पृ. 29

मल्टी राकेट लांचर : 150

सतह से मार करने वाली मिसाइलें : पृथ्वी (150–250 किमी. मारक दूरी वाली)[22]

नौसेना :

कुल नौसैनिक : 55,000

7 हजार नौसैनिक उड्डयन, 1200 समुद्री छापामार 2000 महिलाओं सहित,

प्रमुख कमांड : पश्चिमी, पूर्वी, दक्षिणी और सदूर पूर्वी

पनडुब्बियाँ : 19

प्रमुख युद्ध पोत : 25

विमान वाहक पोत : एक

विध्वंसक : 6

फ्रिगेट : 18

लड़ाकू पोत : 49

मिसाइल पोत : 8

नौ सैनिक उड्डयन : 67 लड़ाकू विमान, 83 सशस्त्र हेलीकॉप्टर

वायु सेना :

कुल वायुसैनिक : 1,40,000 लगभग, 800 लड़ाकू विमान, 36 सशस्त्र हेलीकाप्टर

जमीन पर मार करने वाले लड़ाकू विमान : 22 स्क्वाड्रन

तीन – 54 मिग 23

पाँच – 89 जगुआर

पाँच – 120 मिग–27

नौ – 144 मिग 21

लड़ाकू बेड़ा : 20 स्क्वाड्रन

चार – 74 मिग 21

दो – 26 मिग 23

दो – 35 मिराज 2000

---

22. डॉ. कृष्ण कुमार रत्तू : कारगिल संघर्ष – नियंत्रण रेखा के आर पार पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर, पृ. 29

नौ – 170 मिग 21 (बिस)

तीन – 59 मिग 29

इलैक्ट्रॉनिक प्रतिरोधक उपाय (ई.सी.एम.) : 5 कैनबरा

हमलावर हेलीकाप्टर : 2 स्क्वाड्रन

एक – 18 मी. 3

एक – 18 मी. 35

समुद्री हमलावर विमान : 8 जगुआर

टोही : 2 स्क्वाड्रन

एक – 8 कैनबरा

एक – 6 मिग 25 आर

परिवहन विमान : 12 स्क्वाड्रन

छैः – 105 ए. एन 32

दो – 30 डोर्मियर 228

दो – 33 एव्रो

दो – 24 आई.एल – 76

हेलीकॉप्टर : 11 स्क्वाड्रन (80 मी. 8,50 मी 17,10मी 26)

पाकिस्तानी सैन्य बल

रक्षा व्यय :

139 अरब रुपये[23]

कुल सशस्त्र सेना :

5,87,000 सक्रिय एवं 5.13 लाख रिजर्व[24]

थल सेना :

5,20,000

नौ कोर मुख्यालय, दो बख्तर बन्द डिवीजन, नौ कोर तोपखाना ब्रिगेड, 19 पैदल

---

23. भारत क्या करे, सैन्य क्षमता, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार 10 जुलाई 1999, पृ. 1
24. भारत क्या करे, सैन्य क्षमता, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार 10 जुलाई 1999, पृ. 1

सेना डिवीजन, सात इंजीनियर ब्रिगेड, एक एशिया कमांड (डिवीजन),तीन बख्तरबन्द टोही रेजीमेंट, सात स्वतंत्र बख्तरबन्द ब्रिगेड, एक स्पेशल फोर्सेज ग्रुप (तीन बटालियन) नौ स्वतंत्र पैदल सेना, ब्रिगेड हवाई सुरक्षा कमांड।

टैंक : 2,120

बख्तरबन्द सैनिक वाहन : 157

सचल तोपें : 240

मल्टी राकेट लांचर : 45

सतह से सतह से मार करने वाली मिसाइलें :

हल्फ – (80 कि.मी.) हल्फ– 2 (120 किमी)

हल्फ 3 या एम–11 (300 कि. मी.) गोरी (1500किमी)

नौसेना :

कुल सैनिक : 22,000

1200 नौ सैनिक उड्डयन और 2,000 समुद्री सुरक्षा एजेंसी के जवानों सहित

नौसैनिक अड्डा : कराची (फ्लीट मुख्यालय)

पनडुब्बियाँ : 9

प्रमुख युद्ध पोत : 10

विध्वंसक : 2

फ्रिगेट : 8

लड़ाकू पोत : 10

मिसाइल पोत : 5

नौसैनिक उड्डयन : 7 लड़ाकू विमान, 12 सशस्त्र हेलीकाप्टर

वायु सेना :

कुल वायु सैनिक : 45,000 लगभग, 430 लड़ाकू विमान

जमीन पर हमला करने वाले लड़ाकू विमान

सात – स्क्वाड्रन

एक– 18 मिराज 3

तीन – 58 मिराज 5

तीन – 50 क्यु 5

लड़ाकू बेड़ा : 10 स्क्वाड्रन

चार – 100 जे 6

तीन – 34 एफ 16

दो – 80 जे 7

एक – 30 मिराज 1110

टोही : एक स्क्वाड्रन

बारह – मिराज– 111 आर पी

परिवहन विमान :

12 (सी 130 हर्कुलस)

तीन – बोइंग–707

तीन फॉल्कन – 20

2 एफ 27

हेलीकाप्टर : एक स्क्वाड्रन

इस तरह देखने पर प्रतीत होता है कि भारत एवं पाकिस्तान दोनों ही देशों ने अपने रक्षा बजट मे अत्याधिक विस्तार किया है एवं अपनी सेनाओं को अधिक विस्तार दिया है।[(25)] भारत अपनी आमदनी का 25 प्रतिशत और पाकिस्तान अपनी आमदनी का 35 प्रतिशत रक्षा में खर्च कर रहा है। जबकि दोनों देशों में गरीबी चरम सीमा छू रही है। भारत में अभी भी 35 से 37 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा के नीचे हैं, पाकिस्तान की स्थिति तो और भी खराब है। अगर किसी देश की आमदनी रक्षा में ही समाप्त कर दी जाये तो फिर विकास की बात कहाँ होगी। भारत पाक के मध्य तीन बार युद्ध हो चुका है। युद्ध का परिणाम कुछ नहीं होता है। अब दोनों देश परमाणु शक्ति सम्पन्न हैं और इनके मध्य युद्ध का कोई अर्थ नहीं है क्योकि आज अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक स्थिति में कोई लड़ाई राष्ट्रीय नहीं रह सकती। इसलिये कश्मीर के मामले को बातचीत से सुलझाने की आवश्यकता है। सच्चे दिल से प्रयास करने की आवश्यकता है। 1971

---

25. हस्तपेक्ष, शनिवार 10 जुलाई 1991, पृ. 1

का शिमला समझौता ईमानदारी पूर्वक लागू नहीं हुआ। उस दिशा में पहल करने की आवश्यकता है।[26]

पूर्व सेनाध्यक्ष जनरल बी. एन. शर्मा का इण्टरव्यू कि "पड़ोसी गुंडा देश से निपटने के लिये स्थायी नीति हो"

कारगिल के लघु युद्ध से नेताओं और जनता की आँखें खुल जाना चाहिये। राजनैतिक नेतृत्व की भयंकर भूलों को सेना के जवान अपने गाढ़े खून से सुधारते हैं। अगर यही सिलसिला जारी रहा तो देश को और भी बड़ी कीमत चुकानी पड़ेगी। सरकार को यह सुनिश्चित करना पड़ेगा कि भविष्य में सेनाओं की उपेक्षा न हो। उसे पड़ोसी देश से निपटने के लिये अलग व स्थायी नीति बनानी पड़ेगी।

पिछले लगभग 15 सालों से सेनाओं की जितनी अनदेखी हुई, वह इस बात का सबूत हैं कि देश के राजनैतिक नेतृत्व ने नेहरू युग की भूलों से जरा सा भी सबक नहीं लिया। जनरल शर्मा 1988 से 1990 तक सेनाध्यक्ष रहे थे। उनके अनुसार देश के रक्षा बजट में हर साल भारी कटौती की जा रही है, जबकि पाकिस्तान और चीन का रक्षा बजट लगातार बढ़ रहा है। इसका नतीजा सामने है। उन्होने बताया कि जब वे सेना प्रमुख थे, उन दिनों कारगिल में भारतीय सेना की चार ब्रिगेड तैनात थी। अब वहाँ युद्ध शुरू होने पर सिर्फ एक ब्रिगेड थी। रक्षा बजट साल दर साल घटने की बजह से कई संवेदनशील क्षेत्रों से सेना को हटाना पड़ा।

1947–48 से आज तक हमारी सेनाओं की हिम्मत और वतन पर जान कुर्बान करने का जज्बा ही सीमाओं की हिफाजत करता रहा है। सैनिकों ने अपने खून से भारतीय इतिहास के स्वर्णिम अध्याय लिखे, वरना राजनैतिक नेतृत्व की अदूरदर्शिता ने देश को नीचा दिखाने मे कोई कसर नहीं छोड़ी।

1947–48 में पाकिस्तानी कबाइलियों के हमले के समय, समूचे कश्मीर का सम्पर्क शेष देश से काट दिया था। तब उनके बड़े भाई सोमनाथ ने अद्वितीय शौर्य का प्रदर्शन करते हुये श्रीनगर हवाई अड्डा दुश्मन के हाथ मे जाने से रोका था उसमें मेजर सोमनाथ शहीद हो गये थे। उन्हें मरणोपरान्त देश का सर्वोच्च शौर्य सम्मान "परमवीर चक्र" प्रदान किया गया था। वे यह सम्मान प्राप्त करने वाले प्रथम सैनिक थे।

---

26. डॉ कृष्ण कुमार रत्तू : कारगिल संघर्ष–नियंत्रण रेखा के आर–पार, पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर पृ. 135

श्रीनगर हवाई अड्डे पर ही भारतीय फौजें उतारी गईं। भारतीय सेनायें जब समूचा कश्मीर अपने नियंत्रण में लेने के लिये बढ़ रही थीं कि तत्कालीन प्रधानमंत्री नेहरू जी ने एकतरफा युद्ध विराम कर अपनी ही सेनाओं को करारा झटका दे दिया। अगर सेनाओं से राय कर नेहरू जी कोई कदम उठाते तो आज जम्मू कश्मीर समस्या नाम की कोई चीज नहीं रहती।

तिब्बत पर चीनी शिकंजे को देखकर 1958 में सेनाध्यक्ष जनरल थिमैय्या ने संवेदनशील तिब्बत सीमा पर सेना की 40 पल्टनें बढ़ाने के लिये कहा था। तब नेहरू जी ने यह कहकर उनका मजाक उड़ाया था कि भला चीन से हमें क्या खतरा हो सकता है। वह तो हमारा सबसे नजदीकी दोस्त है। नेहरू जी के रुख से दुःखी और चीनी हमले की आंशका से चिन्तित जनरल थिमैय्या ने तब पद से इस्तीफा दे दिया था। पर सरकार ने उसे नामंजूर कर दिया। नेहरू शांति का राग अलापते रहे और तिब्बत पर काबिज होने के बाद चीन ने भारत पर हमला बोल दिया। उन्होने कहा कि तब निहत्थे भारतीय सैनिकों ने आधुनिक हथियारों से लैस चीनियों का मुकाबला सिर पर कफन बाँधकर किया और अपने रक्त से शौर्य की अद्‌भुत गाथायें लिखीं।

1965 में पाकिस्तान को हमने मुखतोड़ जबाब दिया लेकिन वार्ता की मेज पर तत्कालीन राजनैतिक नेतृत्व ने सैनिकों के खून को पानी समझकर समझौता कर लिया। हमारी जीत हार में बदल दी गई। यही भूलें 1971 में भी दोहराई गई जब पाकिस्तान के 90 हजार से ज्यादा युद्धबंदियों के बदले हमने पाकिस्तान कब्जे वाले कश्मीर को नहीं माँगा।(27)

कारगिल में लघु युद्ध पिछले सभी युद्धों से ज्यादा कठिन है। यह 1965 की गल्तियों का खामियाजा है जब भारत ने वे इलाके जीतने के बाद पाकिस्तान को लौटा दिये थे, जहाँ से अब हथियारबंद घुसपैठिये हम पर दनदना रहे हैं। यह रक्षा बजट में कटौती का नतीजा है कि कारगिल में तैनात 4 ब्रिगेडों मे से तीन को वहाँ से हटा दिया गया। हालांकि सेना इसके सख्त खिलाफ थी। कारगिल में लगभग 14 से 18 हजार फुट की ऊँचाई पर युद्ध के लिये भारतीय सैनिकों के पास जरूरी साजो सामान तक नहीं है। जो हथियार परीक्षणों पर खरे पाये थे और जिनकी खरीद की स्वीकृति दी थी, वह अभी तक सेनाओं को नहीं मिल पाये हैं।

कारगिल की कीमत सैनिक अफसर और जवान अपना खून बहा कर चुका रहे हैं। पाकिस्तानियों का घुस आना हमारे खुफिया तंत्र की विफलता है। लेकिन इसके लिये सेना कतई

---

27. डॉ कृष्ण कुमार रत्तू : कारगिल संघर्ष–नियंत्रण रेखा के आर–पार, पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर, पृ. 136

दोषी नहीं है। उन्होने बताया कि सेना के खुफियातंत्र को सीमा पर गतिविधियाँ चलाने की इजाजत नहीं है। यह काम रिसर्च एण्ड एनालिसिस विंग (रा) का है। पर अब रा का इस्तेमाल सत्ता में बैठे राजनैतिक दल अपने चुनावी फायदे के लिये करते हैं। उन्होने कहा कि कारगिल में पाकिस्तान का कब्जा पिछले कई सालों से सेना की वातों को न मानने का नतीजा है। यही वजह है कि वहाँ फिर से अपना नियंत्रण करने के लिये सैनिको को भारी कुर्बानी देनी पड़ी है।

रक्षा मंत्रालय में बैठे नौकरशाह आला सैनिक अफसरों को सहयोगी मानने के बजाय अपने मातहत मानते हैं। सेना के वरिष्ठ अधिकारी जो सुझाव देते हैं, नौकरशाह उससे ठीक उलट फैसले करते हैं, जबकि अमेरिका मे सेनाओं और प्रशासन के बीच आपसी तालमेल इतना अधिक है कि कही कोई संवादहीनता नही बचती है। यही वजह है कि आज अमेरिका दुनिया में कही भी सैन्य हस्तक्षेप के लिये तैयार रहता है। उन्होने बताया कि नौकरशाहों की वजह से भारत में सेनाप्रमुख का स्तर प्रोटोकाल में भी काफी नीचे धकेल दिया गया है।

सेना के आला अफसर भी अब राजनैतिकों के प्रभाव से अछूते नहीं बचे हैं। वे सेवानिवृति के बाद राज्यपाल और राजदूत जैसे पदों पर निगाह रखते हैं, जबकि यह गलत है और राष्ट्रीय हितों के खिलाफ है। उन्होने इसके लिये फ्रांस की मिसाल दी। वहाँ के सेना प्रमुख को बिना महाभियोग से हटाया नहीं जा सकता। दूसरे वे सेवानिवृति के बाद कोई सरकारी पद नहीं ले सकते। उन्हें ऊँची पेंशन व अच्छी सुविधाओं मिलती है, ताकि वे ईमानदारी से जिन्दगी बसर कर सकें। सरकार समय समय पर उनसे सलाह लेती रहती है। यहाँ हालत विपरीत है। सरकार ईमानदार सैन्य अफसर के सेवानिवृति होने के बाद उसकी शक्ल भी देखना नही चाहती, सलाह लेना तो दूर की बात है।[28]

पाकिस्तान जब तब भारत में गड़बडी फैलाता रहता है और सीमाओं से छेड़छाड़ करता है। भारत जब उसे सबक सिखाने लगता है तो हाथ पांव जोड़कर मुसीबत से बच निकलता है। यह सिलसिला आधी शताब्दी से ज्यादा अरसे से चला आ रहा है। अगर भारत परमाणु परीक्षण नहीं करता तो पाकिस्तान इस बात में हमें बुरी तरह ब्लैकमेल कर लेता। यह सरकार को तय करना ही पड़ेगा कि उसके साथ कैसा सलूक किया जाय। वह सामान्य विदेशी नीति के दायरे में नहीं आता है। भारत को उससे निपटने के लिये अलग से स्थायी नीति बनानी

---

28. डॉ कृष्ण कुमार रत्तू : कारगिल संघर्ष–नियंत्रण रेखा के आर पार, पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर, पृ. 136

पड़ेगी।

कारगिल के लघु युद्ध से सरकार व जनता की आंखे खुल जानी चाहिये। अब वहाँ भी सियाचिन की तरह स्थायी तौर पर फौजें तैनात करनी पड़ेंगी यह नौबत इसलिये है कि 1965 में हमने कारगिल से आगे का राजनैतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण क्षेत्र जीतने के बाद वार्ता की मेज पर गँवा दिया था। कारगिल संघर्ष में फौजों ने एक बार फिर साबित कर दिया कि उनको देश अपनी जान से प्यारा है।[29]

पाकिस्तानी सेना के ब्रिगेडियर रशीद कुरैशी ने आरोप लगाया कि बड़ी संख्या में भारतीय सेना के जवानों ने कारगिल क्षेत्र के पश्चिम और उत्तर पूर्व में कम से कम दो जगहों पर नियंत्रण रेखा को पार कर पाकिस्तान में प्रवेश करने का प्रयास किया, लेकिन पाकिस्तानी सेना ने भारतीय जवानों के इन प्रयासों को नाकाम कर दिया। भारत और पाकिस्तान की सेना के बीच भारी गोलाबारी हुई जिसमें दोनों पक्षों के 100 से अधिक सैनिक मारे गये हैं। भारत और पाकिस्तान के सैनिकों के हताहतों की संख्या को लेकर दावे प्रतिदावे कर रहे हैं।

बहरहाल पाकिस्तान की रक्षा मामलों की कैबिनेट कमेटी ने कारगिल संकट के हल मे मदद के लिये घुसपैठियों से वापिसी की अपील जारी की। प्रधानमंत्री नवाज शरीफ इस कमेटी के अध्यक्ष थे। वाशिंगटन मे अमरीकी राष्ट्रपति बिल क्लिंटन और नवाज शरीफ के साथ हुई सहमति के फलस्वरूप यह अपील जारी की गई। मुलाकात के दौरान नवाज शरीफ ने क्लिंटन के समक्ष कारगिल संकट समाप्त करने के लिये ठोस कदम उठने का वादा किया था। पाकिस्तान घुसपैठियों की वापिसी को कश्मीर विवाद के निपटारे से जोड़ना चाहता है। गौरतलब है कि कश्मीर विवाद की वजह दोनों देशों के बीच 1947 के बाद से दो युद्ध हो चुके हैं। सूचना मंत्री मुजाहिद हुसैन दावा कर चुके हैं कि पाकिस्तान कश्मीर विवाद के अन्तर्राष्ट्रीयकरण और क्लिंटन से दोनों के बीच होने वाली शांति वार्ताओं मे व्यक्तिगत दिलचस्पी लेने का वादा प्राप्त करने मे सफल रहा है लेकिन भारत कश्मीर मामले में किसी भी तरह की मध्यस्थता मंजूर करने से इन्कार कर चुका है। पाकिस्तान ने कश्मीर मुद्दे की ओर अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय का ध्यान आकर्षित करने के लिये कारगिल संकट के इस्तेमाल की रणनीति बनाई, लेकिन यह रणनीति सफल नहीं रही।

---

29. डॉ कृष्ण कुमार रत्तू : कारगिल संघर्ष–नियंत्रण रेखा के आर पार, पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर, पृ. 138

कूटनीति मोर्चे पर विफल : पाकिस्तान

(पूर्व राजदूत अरविन्द देव से बातचीत)

कारगिल मामले को लेकर प्रधानमंत्री नवाजशरीफ चीन गये थे, लेकिन अपनी यात्रा अधूरी छोड़ वापस आ गये ? क्या यह पाकिस्तानी कूटनीतिक विफलता का प्रतीक है ?

कारगिल मसले को लेकर चीन ही नही पकिस्तान ने जिस ओर भी नजर दौड़ाई उसे अपने पक्ष में सकारात्मक दृष्टि नजर नहीं आयी। अमेरिका, रूस, यूरोप खाड़ी के देशों–कहीं से भी पाकिस्तानी कार्यवाही को समर्थन नहीं मिला है। ऐसा ही चीन में उनके साथ हुआ। दरअसल आप नकारात्मक रवैया अख्तियार कर सकारात्मक सहयोग हासिल नहीं कर सकते और यह सब निश्चित रूप से पाकिस्तानी कूटनीति की विफलता है।

अमेरिका के मध्य कमान के प्रमुख जनरल जिन्नी और विदेश विभाग के अधिकारी लैंफर के व्यवहार ने भी पाकिस्तान को आहत किया। भारत की दृष्टि से उन दोनों की भारत पाक यात्रा का क्या महत्व रहा ?

भारत का पक्ष एकदम स्प्ष्ट है और दुनिया भी देख, जान व समझ रही है। हमारे क्षेत्र में पाकिस्तानी घुसपैठिये घुसे हैं और हमारा कर्तव्य है कि हम उन्हें निकालें। पूरी दुनिया इस सच्चाई को जानती है। अमेरिका के ये दोनों अधिकारी पाकिस्तान को यही समझाने आये थे कि नियंत्रण रेखा का सम्मान करो। इसलिये भारत के दृष्टिकोण से उनकी यात्रा इस मायने में महत्पूर्ण है कि दुनिया की एक महाशक्ति ने भारतीय पक्ष को उचित ठहराया है। इससे अन्य देशों के सामने भी भारत का पक्ष मजबूत हुआ। चीन का पाकिस्तान को समर्थन नहीं करने के पीछे एक कारण यह भी है।

कारगिल मामले को लेकर यात्राओं का दौर चल पड़ा है। अमेरिकी अधिकारियों के बाद नवाज शरीफ चीन गये, उनके दूत नियाज नायक भारत आये। भारत से बृजेश मिश्र और के. रघुनाथ यूरोपीय देशों की यात्रा पर गये। इन यात्राओं का राजनयिक महत्व क्या है ?

कारगिल मामले को लेकर दोनों ही देश पूरी दुनिया को अपने अपने पक्ष से अवगत कराना चाहते हैं। इन यात्राओं का मुख्य उद्देश्य यही है कि इस मामले को लेकर अन्य देश भ्रम

की स्थिति में न रहें। इससे तो पाकिस्तान की मंशा पूरी हो गई जिसके तहत वह कश्मीर मुद्दे का अन्तर्राष्ट्रीयकरण करना चाहता था। आज पूरी दुनिया का ध्यान कश्मीर और कारगिल पर केन्द्रित है।

यह सब सच है कि पूरी दुनिया का ध्यान कश्मीर पर केन्द्रित है लेकिन वह किस रूप में है इस पर भी गौर करना जरूरी है। विश्व समुदाय कश्मीर को विवादित क्षेत्र के रूप में नहीं देख रहा है, बल्कि कश्मीर को पाकिस्तान की घृणित कार्यवाही के शिकार के रूप में देख रहा है। यहाँ पर पाकिस्तान सफल नहीं हुआ। बल्कि उसकी कूटनीतिक पराजय हुई है और भारत का दावा मजबूत हुआ है कि कश्मीर भारत का हिस्सा है जिसे पाकिस्तान जबरन हथियाना चाहता है। पाकिस्तान ने कभी भी कश्मीर मुद्दे के इस रूप में अन्तर्राष्ट्रीयकरण के बारे में नहीं सोचा था।

अमेरिकी प्रशासन का एक तबका पाकिस्तान को आतंकवादी राष्ट्र घोषित करने को लेकर गम्भीर है। सरकार भी अलग–अलग तरीके से पाकिस्तान को कड़ी चेतावनी दे रही है। इसको आप किस रूप में देखते हैं ?

पकिस्तान ने जो किया है और अब तक करता आया है उसका परिणाम एक न एक दिन उसे भुगतना ही था। आखिर अमेरिका कब तक उसके कुकृत्यों से आँखें मूंदे रहेगा ? उसकी भी विश्व समुदाय के प्रति जवाबदेही है और वह उसी का निर्वाह कर रहा है।

फ्रांस एक तरफ भारतीय पक्ष का समर्थन कर रहा है और दूसरी ओर पाकिस्तान को अत्याधुनिक पनडुब्बी बेच रहा है यह कैसी दोहरी मानसिकता है ?

पाकिस्तान और फ्रांस के बीच वह करार बहुत पहले हो चुका था उसे कारगिल प्रकरण से जोड़कर नहीं देखा जाना चाहिये। दूसरे कूटनीतिक सम्बन्ध और व्यावसायिक सम्बन्ध में अन्तर समझना चाहिये। फ्रांस हथियार बना रहा है तो उसे खरीददार भी चाहिये और हमें इस गलतफहमी में नहीं रहना चाहिये कि कोई भी देश हमारे पक्ष को उचित ठहराने के लिये अपना आर्थिक नुकसान उठायेगा। दोनों ही चीजें हैं। जहाँ तक सुरक्षा का मामला है तो यह भारत का सिरदर्द है कि वह उसकी काट के लिये अपने यहाँ भी कोई व्यवस्था करे।

भारत–पाक बँटवारे के बाद से पाकिस्तान भारतीय सीमा के साथ कुछ न कुछ खुराफात करता रहा है। एक राजनयिक की दृष्टि से आप इसको किस रूप में देखते हैं ?

दरअसल भारत–पाक विभाजन की अवधारणा ही उचित नहीं थी और पाकिस्तान धर्म के नाम पर कश्मीर को हथियानें के लिये यह सब 1947 से कर रहा है। 1971 में बांग्लादेश के अस्तित्व में आने से उसके अन्तर्मन में यह अवधारणा घर कर गई कि भारत की वजह से ही उसके दो टुकड़े हुये हैं। उसके मन में बदले की भावना जब–जब उबाल मारती है वह कश्मीर में कुछ न कुछ खुराफात करता है। यह मामला पूरे 52 वर्ष से है आज और कल का नहीं है और इसका समाधान भी लम्बे समय के बाद ही हो सकेगा। अब तो पूरी दुनिया और पाकिस्तान की आम जनता के बीच भी उसके नापाक इरादों की कलई खुल गयी।

कारगिल मामले पर पूरी दुनिया से भारत को जो समर्थन मिला है उसका कूटनीतिक महत्व क्या है ?

भारत ने पिछले पचास वर्षों में धैर्य, संयम व सहिष्णुता का जो बीज बोया है आज उसी का परिणाम उसे अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के रूप में मिल रहा है। आज के राजनयिक समर्थन को पिछले छैः–आठ महीनों या दो चार वर्षों के दौरान आई गई सरकार की नीतियों का प्रतिफल नहीं मानना चाहिये यह स्वतंत्र भारत की सम्पूर्ण सोच का परिणाम है। हर सरकार ने तमाम विसंगतियों के बावजूद पाकिस्तान के साथ सम्बन्धों को लेकर रणनीति में एकरूपता बनाये रखी। भारत की यह बड़ी कूटनीतिक सफलता है।

अब भारत को क्या करना चाहिये कि उसकी कूटनीति इसी तरह सफल रहे?

कुछ दिन पहले प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेई ने कहा था कि पाकिस्तान ने हमारे साथ विश्वासघात किया, हमने मित्रता का हाथ बढ़ाया, उसने शत्रुता निभाई। अब हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि पाकिस्तान को इस तरह विश्वासघात करने का मौका न मिले। इस बात का पुर्ननिर्धारण करना जरूरी है कि पाकिस्तानी सरकार और पाकिस्तानी फौज पर कितना भरोसा किया जाये। मौजूदा विवाद के हल होने के बाद भी लम्बे समय तक सतर्क रहने की आवश्यकता है।

क्या आपको लगता है कि भारत और पाकिस्तान के बीच सम्बन्ध सामान्य हो पायेंगे ?

पाकिस्तान एक गैर जिम्मेदार राष्ट्र है, पहले यह हम कहते थे और आज पूरी दुनिया कह रही है। बावजूद इसके हमें पूरा संयम और धैर्य से सतर्क रहते हुये सुलह के लिये प्रयास करना चाहिये। हालांकि पाकिस्तान में जिस तरह की धारणा है उसमें सुलह और सम्बन्ध सामान्य

होने की बात करना दिवास्वप्न की तरह ही है। यहाँ यह बात स्पष्ट कर दूँ कि मैं निराशावादी नहीं बल्कि यथार्थवादी हूँ।

पाकिस्तान के दृष्टिकोण से पूरे मामले का कूटनीतिक औचित्य क्या है ?

पाकिस्तान इस मामले को लेकर पूरी तरह अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के सामने नंगा हो चुका है और अब वह अपनी झेंप मिटाने के लिये ऊल–जलूल ब्यान दे रहा है। उसकी कूटनीति गलत इरादों पर आधारित है और गलत चीजें कुछ समय के लिये तो बेशक सफल हो जायें बाद में असफलता ही हाथ लगती है। यही पाकिस्तान के साथ हुआ। सच पूछिये वो पाकिस्तान की छवि अब पूरी तरह दुनिया के सामने एक निहायत ही गैर जिम्मेदार राष्ट्र की बन गई है। यहाँ तक कि जिन स्वामी देशों का संगठन का झंडाबरदार होने का वह दम भरता था उन्होंने भी अभी तक पाकिस्तान के प्रति समर्थन की खुलेआम घोषणा नहीं की है। इस्लामी देश भी पाकिस्तान का समर्थन करने में कोताही बरत रहे हैं।

दरअसल पाकिस्तान जिस 'जेहाद' के नाम पर इस्लामी कट्टरवाद को फैलाना चाहता था अब वह दीमक की तरह पाकिस्तान को ही चाट रहा है। ऐसे कट्टरपंथी लोग वहाँ की सरकार को अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के साथ मिलकर चलने से रोकने की ताकत रखते हैं। वहाँ की फौज और सत्ता में भी ऐसे लोगों का प्रभुत्व है जिसकी वजह से देश अस्थिरता और अराजकता के जाल में फँसता जा रहा है।

कारगिल संघर्ष के कारण बड़े देश दक्षिण एशिया के प्रति गम्भीर हैं या नहीं?

भारत और पाकिस्तान द्वारा परमाणु परीक्षण किये जाने के बाद से विश्व भर के सामरिक नीति विशेषज्ञों द्वारा इस घटनाक्रम के दक्षिण एशिया समेत अन्य देशों पर प्रभाव का विश्लेषण किया जा रहा है। दोनों देशों के सम्बन्धों के बीच आये बदलाव तथा वर्तमान में कारगिल में चल रहे संघर्ष ने विश्व के प्रमुख देशों को दक्षिण एशिया की स्थिति के प्रति गम्भीर बना दिया है। विश्व के विदेश नीति विश्लेषकों तथा अध्येताओं के समक्ष भारत–पाक के बीच सम्बन्ध सुधारने के उपाय खोजना एक समस्या बन गया है। ऐसे ही प्रश्नों को लेकर, जर्मनी के बर्लिन स्थित हमवोल्ट विश्वविद्यालय में "परमाणु परीक्षणों के बाद दक्षिण एशिया की स्थिति" विषय पर एक अन्तर्राष्ट्रीय परिसंवाद आयोजित किया गया। इस परिसंवाद ने भारत–पाकिस्तान के प्रतिनिधियों को कारगिल संघर्ष की पृष्ठभूमि में एक साथ लाने के साथ ही, भारत–पाक तनावों

के सम्बन्ध में विश्व के प्रमुख देशों के विचार लाने का भी कार्य किया।

सम्मेलन में पाकिस्तान के सामरिक अध्ययन के संस्थापक डा. मसूद हुसैन ने भारत–पाक के परमाणु परीक्षण किये जाने से पूर्व दोनों के बीच परमाणु अस्पष्टता की स्थिति का जिक्र किया। उन्होंने इसे युद्ध प्रतिरोधक के रूप में अच्छा बताया। उनका स्पष्ट मानना था कि "परमाणु परीक्षणों ने दक्षिण एशिया में परमाणु और प्रक्षेपास्त्रों की होड़ को बढ़ावा दिया है। इससे दक्षिण एशिया जैसे अशान्त क्षेत्र में दोनों देशों के बीच किसी दुर्घटनावश, गलतफहमी या गलत अनुमान के आधार पर सामान्य संघर्ष परमाणु टकराव में भी बदल सकता है।" हुसैन के विचार में "पाकिस्तान में यह आशंका बढ़ती जा रही है कि भारत भविष्य में अपनी परमाणु क्षमता को और बढ़ायेगा जिससे भारत–पाक के बीच परमाणु असमानता की स्थिति उत्पन्न हो जायेगी। इससे पाकिस्तान जैसे छोटे देश को निरन्तर परमाणु 'ब्लैकमेल' के खतरे को झेलना होगा।"

पाकिस्तान के पूर्व विदेश सचिव तथा वहाँ के सामरिक अध्ययन संस्थान के अध्यक्ष डा. तनवीर अहमद खान ने भी स्वीकार किया कि भविष्य में दोनों देशों के बीच बढ़ते संघर्ष की दिशा में परमाणु शस्त्रों के टकराव का खतरा पूरे विश्व के समक्ष मौजूद है।

खान ने अपने पत्र में पश्चिमी जगत से मांग की कि वे कश्मीर मुद्दे पर मध्यस्थता की पाक की अपील मान लें। उन्होंने अपने भाषण में गलत तथ्यों का जिक्र कर कश्मीर मुद्दे के अन्तर्राष्ट्रीय काल का भी प्रयास किया। खान ने आरोप लगाया कि "भारत ने 1980 के मध्य दशक में पाक अधिकृत सियाचिन क्षेत्र पर कब्जा जमाया है।" उनके विचार में वर्ष 1971 में नियंत्रण रेखा को पाकिस्तान पर जबरन थोपा गया। खान ने वर्ष 1974 में पाँच सौ से अधिक रियासतों द्वारा भारत के साथ की गई 'विलय सन्धि' की वैधता को भी चुनौती दी। उन्होंने कारगिल में घुसपैठियों को भी आजादी के लिये संघर्षरत 'जेहादी' करार दिया। खान समेत अन्य पाक प्रतिनिधियों ने आरोप लगाया कि भारत ने पाकिस्तान के शान्ति स्थापित करने के प्रयासों को सदा से नजरन्दाज किया है। भारत ने पाकिस्तान के द्विपक्षीय शस्त्र नियंत्रण संधि तथा दक्षिण एशिया को परमाणु शस्त्र निक्षेप क्षेत्र घोषित करने के प्रस्ताव को नहीं माना। पाकिस्तान के इस तथ्यहीन प्रचार का भारतीय प्रतिनिधियों ने कड़ा जबाव दिया। भारतीय प्रतिनिधियों ने स्पष्ट किया है कि सियाचिन विवाद की शुरुआत वर्ष 1976 में वहाँ विदेशी पर्वतारोही भेजकर पाकिस्तान ने ही की। पाक ने ही पहले वहां सुरक्षा चौकी भी बनाई, वहाँ पाक की भूमि दबाये जाने की बात गलत है।

भारतीय सेना कारगिल में स्थायी चौकियों के पक्ष में ?

भारतीय सेना सियाचिन ग्लेशियर की तरह कारगिल सेक्टर में भी सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण चौकियों पर वर्ष भर कब्जा जमाये रखना चाहती है। उधर गुप्तचर सूत्रों ने भी सरकार की सत्रह वर्ष पुरानी नीति की समीक्षा करने की आवश्यकता पर जोर दिया है, जिसके तहत भारतीय टुकड़ियाँ सर्दियों के आगमन पर हर वर्ष नवम्बर में इन ऊँची चोटियों को खाली कर देती हैं। उधर बीस दिनों के घमासान के बाद सेना की परिवर्तित नीति के कारण टाइगर हिल पर कब्जा करने में भारत को उल्लेखनीय सफलता मिली है। दराज गैरीजन के डिप्टी कमान्डेन्ट कर्नल एस. वी. इ. डेविल ने यहाँ प्रेस ट्रस्ट को बताया, "हम वर्ष भर इस सेक्टर की सभी प्रमुख चोटियों को अपने कब्जे में रखें, ताकि भविष्य में घुसपैठ नहीं होने पाये। उन्होंने कहा कि सेना के इतने बलिदान के बाद हम कोई भी मौका नहीं छोड़ सकते हैं।"

हालांकि उन्होंने संदेह व्यक्त किया कि पाकिस्तानी सेना कारगिल सेक्टर की इन चोटियों को अब फिर कभी लक्ष्य नहीं बनायेगी। प्राप्त समाचारों के अनुसार भारतीय सेना अब दराज सब सैक्टर के प्वाइंट 5140, टाइगर हिल, तोलोलिंग, हम्प और मंडल प्वाइंट में पूरे वर्ष भर कब्जे के लिये चौकियाँ स्थापित करेगी जहाँ सर्दियों के मौसम में तापमान सामान्य से साठ डिग्री नीचे चला जाता है। खुफिया सूत्रों ने कहा कि 1982 तक मार्पोला (16,059 फीट), सेंडो (12,804 फीट) तथा अन्य ऊँचे शिखर की चौकियों पर सीमा–सुरक्षा बल के जवान तैनात थे और यह सेना से जुड़े हुये थे। सेना ने 1982 में इन चौकियों को ले लिया और तय किया कि सर्दियों में कारगिल में ऊँचे शिखर वाली चौकियों पर जवान नहीं रहेंगे। सूत्रों ने कहा कि कारगिल क्षेत्र में गत दो वर्षों से लगातार गोलाबारी के कारण यह महसूस किया जाने लगा कि सेना इस क्षेत्र में स्थायी रूप से अपनी चौकियाँ बना ले।

रणनीतिक बदलाव में सफलता ?

इस बीच सेना के एक वरिष्ठ अधिकारी ने कहा कि भारतीय वायुसेना के साथ शानदार तारतम्य से सेना के आर्टिलरी, इनफैन्ट्री एवं एवियेशन कोर ने विजय हासिल करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अधिकारी ने बताया कि हाल के दिनों में सेना के जवानों के भारी मात्रा में हताहत होने का एक कारण यह भी रहा कि घुसपैठियों की सही संख्या, उनके हमले की प्रवृत्ति एवं उनके हथियारों के सन्दर्भ में सेना के जवानों को विस्तृत जानकारी नहीं थी। अधिकारी ने बताया कि मिग लड़ाकू विमान, जिनका प्रयोग दुश्मन के बंकरों पर बमवारी करने तथा आपूर्ति

लाइन को ध्वस्त करने के लिये किया गया था, उस समय तक सफल नहीं रहे, जब तक कि बहुउद्देशीय मिराज विमानों को नहीं लगाया गया। अधिकारी ने बताया कि मिराज विमानों ने दुश्मन के ठिकानों एवं रसद आपूर्ति लाइन पर सटीक निशाना साधा। इसी वक्त दुश्मनों की ताकत तथा उनके आपूर्ति के रास्तों का सही अन्दाजा लग सका। उन्होंने बताया कि परिवर्तित रणनीति के प्रथम चरण में वायुसेना के विमानों ने चौबीसों घंटे हमले जारी रखे और पाकिस्तानी घुसपैठियों को एक क्षण का भी मौका नहीं दिया। अधिकारी के अनुसार लड़ाकू विमानों ने अपना लक्ष्य भेदना जारी रखा। जबकि तोपखाना से भारी गोलाबारी जारी रही। इससे मजबूर होकर घुसपैठियों को बंकर की शरण लेनी पड़ी और भारतीय सेना को अपने ज्यादा जवान खोये बगैर पहाड़ियों पर कब्जा जमाने में मदद मिली।

अधिकारी ने बताया कि यह तय किया गया था कि सेना को अतिरिक्त बोफोर्स तोपें दी जायें और जो निरन्तर गोलाबारी करेंगी खासकर तय ठिकानों पर। उसने बताया कि सिर्फ एक रात इन तोपों से 2000 से 4000 गोले दागे गये। अधिकारी ने बताया कि लगातार हुई बमवारी से दुश्मनों पर घातक प्रभाव पड़ा। दूसरी रणनीति दुश्मनों को भ्रमित करने की थी और यह बहुत कारगर भी रही। सेना ने इसका फायदा उठाकर एक के बाद एक पहाड़ियों पर कब्जा कर लिया। उन्होंने बताया कि उक्त महत्वपूर्ण पहाड़ियों पर कब्जा करने के बाद थल सेना मजबूत स्थिति में आ गई अब वह पहाड़ियों पर से राकेट द्वारा हमला कर दुश्मनों के बंकरों को नष्ट करने लगी है। इन हमलों में तोपखाने और हवाई हमले भी कारगर सिद्ध हुये हैं।[30]

कारगिल लघु युद्ध के पश्चात भी पाकिस्तानी कट्टरपंथी ताकतों ने हार नहीं मानी, जहाँ भारत एकतरफा युद्ध विराम एवं आगरा शिखर सम्मेलन के माध्यम से लगातार शान्ति का प्रयास कर रहा है वही दूसरी ओर पाकिस्तानी कट्टरपंथी ताकतें एवं शासक लगातार आतंकवाद को बढ़ावा दे रहे हैं : आज कश्मीरी आतंकवाद कश्मीर तक सीमित न रहकर सम्पूर्ण देश को अपनी चपेट में ले रहा है। 13 दिसम्बर को भारतीय संसद पर हमला। गोधरा में ट्रेन एवं एक सम्प्रदाय के लोगों पर हमला किया गया जिसकी प्रतिक्रियास्वरूप सम्पूर्ण गुजरात जल उठा। यह घटनायें अचानक घटने वाली घटनायें नहीं है बल्कि पूरी तरह सोच विचार कर किया गया कार्य है। इसमें इन कट्टरपंथी ताकतों को इस क्रिया की प्रतिक्रिया का भी पूरा अनुमान था, परन्तु

---

30. डा. के. के. रत्तू : कारगिल संघर्ष – नियंत्रण रेखा के आर–पार, पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर, पृ. 97

जानबूझकर भारतीय पंथ निरपेक्षता को अन्तर्राष्ट्रीय जनमत के समक्ष तुच्छ साबित करने के लिये ये कृत्य किये गये। 2002 में जम्मू में चुनाव में व्यवधान उत्पन्न कर भारतीय सरकार के निष्पक्ष चुनाव के वादे में दखल देने का पूर्ण प्रयास किया। इन आतंकवादी कृत्यों के अतिरिक्त भी अन्तर्राष्ट्रीय जनमत के समक्ष भारत विरोधी प्रचार कर पाकिस्तान लगातार एक छद्म युद्ध जारी रखे हुये है।

इस सन्दर्भ में रक्षा अध्ययन एवं विश्लेषण संस्थान के उपनिदेशक सी. उदय भास्कर ने कहा कि पाकिस्तान में इतनी हिम्मत नहीं है कि वह भारत के साथ सीधे युद्ध करने की सोचे। कारगिल सहित वह अब तक भारत के साथ चार लड़ाइयाँ लड़ चुका है। इन चारों में उसे मुँह की खानी पड़ी हैं। उसके हौसले पस्त हैं। दरअसल, पाकिस्तान के शासक अपनी जनता को हमेशा यह दिखाना चाहते हैं कि वे भारत के विरुद्ध नरम नहीं है। इसलिये वे कभी सीमा पर छेड़छाड़ करते रहते हैं और कभी भारत के अन्दर आतंकवादी गतिविधियों को अंजाम देते हैं मुझे लगता है कि पाकिस्तान कश्मीर में अपने अघोषित युद्ध को आगे जारी रखेंगे।[31]

कारगिल संघर्ष के सकारात्मक पक्ष के बारे में श्री विश्व मोहन तिवारी एथर वाइस मार्शल (अवकाश प्राप्त) से बातचीत में श्री तिवारी ने कहा कि कारगिल में पाकिस्तानी घुसपैठियों के खिलाफ भारत सरकार की सैन्य कार्यवाही का महत्व इस बात में है कि आजादी के बाद पहली बार एक आक्रामक रणनीति अपनायी गयी है। इससे पहले भी घुसपैठ होती थी और सैनिक मारे जाते रहे हैं लेकिन भारत की रणनीति प्रतिरक्षात्मक ही होती थी और जिसकी बड़ी भारी कीमत चुकानी पड़ती रही है। 1965 के बाद से लगातार और 1971 के बाद तो बड़े पैमाने पर पाकिस्तानी सेना ने वहाँ की सरकार की अनुमति से घुसपैठ की आक्रामक नीति अपनायी हुयी है, पर भारत हमेशा रक्षात्मक मुद्रा में रहा। बीसवीं सदी के अन्त में जब पूरी दुनिया ने यह मान लिया कि आमने सामने का पूर्ण युद्ध सम्भव नहीं है तो हर जगह 'लो इंटेसिटी बार फेयर' की रणनीति अपनायी जाने लगी। चूँकि पाकिस्तान जानता है कि युद्ध में भारत से नहीं जीत सकता, इसलिये उसने भी घुसपैठ और आई. एस. आई. के षडयंत्रों के जरिये यही रणनीति अपना ली है।

भारत को इजराइल से सबक लेना चाहिये। जब भी वहाँ फिलिस्तीनी घुसपैठ होती

31. अमित कुमार मिश्र : पाकिस्तान में भारत से प्रत्यक्ष युद्ध का साहस नहीं, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार, 15 जनवरी 2000, पृ. 3

है, इजरायली सेना सीधे फिलिस्तीनी ठिकानों पर वार करती है। हमारी रक्षा नीति सेना को ऐसा करने की इजाजत नहीं देती। इससे ही पाकिस्तानी घुसपैठिये आते हैं। उन्हें खदेड़ा जाता है किन्तु वे फिर आ जाते हैं। हमें उनके ठिकानों पर आक्रमण करना होगा। सरकार को सेना को यह अनुमति देनी चाहिये कि वह सीमा के उस पार भी जाकर घुसपैठियों को मार सके। इतना ही नहीं आज जिस तरह की आक्रामक सैन्य कार्यवाही हो रही है उसे लगातार और सम्पूर्ण भारतीय सीमा पर लागू करना चाहिये।[32]

---

32. अजित राय : एक ऐतिहासिक पहल, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार 5 जून 1999, पृ. 4

पंचम

अध्याय

अध्याय पंचम

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति एवं कश्मीर समस्या

संयुक्त राष्ट्र संघ एवं कश्मीर समस्या

समस्या की उत्पत्ति के आरम्भिक दौर में ही भारत ने संयुक्त राष्ट्र संघ की शरण ली, अनेक बार संयुक्त राष्ट्र संघ ने समस्या के समाधान के लिये प्रयास किये परन्तु कोई विशेष प्रगति नहीं हुयी। अतः 1964 में संयुक्त राष्ट्र संघ ने प्रस्ताव पास किया कि कश्मीर समस्या को भारत तथा पाकिस्तान परस्पर बातचीत के द्वारा हल करें। तबसे लगातार बातचीत के शीत एवं कटु दौर जारी है परन्तु समस्या ज्यों की त्यों विद्यमान है। इस काल में भारत तथा पाकिस्तान के मध्य तीन युद्ध 1965, 1971 एवं कारगिल संघर्ष भी हो चुके हैं।

पहली जनवरी 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के अनुच्छेद 35 के अन्तर्गत भारत ने संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद के सामने कश्मीर के प्रश्न को प्रस्तुत किया तथा प्रार्थना की कि वह पाकिस्तान को कहे कि वह जम्मू एवं कश्मीर में आक्रमणकारियों को किसी भी तरह की सहायता न दे तथा पाकिस्तान के नागरिक जम्मू तथा कश्मीर की लड़ाई में भाग न लें।(1)

कश्मीर के प्रश्न पर पहले कुछ वाद–विवाद में भारत ने कश्मीर में शामिल होने के औचित्य को सिद्ध किया परन्तु कश्मीर की समस्या के अन्तिम हल के लिये पाकिस्तान को चाहिये कि वह सारे आक्रमणकारियों को वहाँ से निकाले। भारत ने यह स्वीकार किया कि पाकिस्तान के निकल जाने पर वह कश्मीर में अपनी सेनाओं की संख्या कम से कम कर देगा जितनी सारे राज्य की सुरक्षा तथा प्रशासन के लिये पर्याप्त होगी तथा परिस्थितियों के सामान्य हो जाने के बाद वह वहाँ लोकप्रिय सरकार तथा संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रतिनिधियों की देखरेख में मत संग्रह करायेगा ताकि कश्मीर के विलय का प्रश्न हल किया जा सके।(2) संयुक्त राष्ट्र संघ में पाकिस्तान के प्रतिनिधि मि. जफर उल्ला खान ने यह तर्क दिया कि कश्मीर का झगड़ा केवल उपमहाद्वीप के हिन्दुओं तथा मुसलमानों के बीच की गहरी कलह का दर्दनाक पहलू है तथा जिसे केवल मात्र दोनों ही समुदायों के शान्तिपूर्ण पृथक्करण द्वारा कश्मीर पाकिस्तान को देकर हल किया जा

---

1. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 276
2. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 276

सकता है।[3] उसका कहना था कि भारत ने कश्मीर को धोखे से अपने में मिला लिया है। उसने कश्मीर समस्या को भारत तथा पाकिस्तान का झगड़ा कहा और कबायली आक्रमण में पाकिस्तान का हाथ होने से इन्कार किया।

सुरक्षा परिषद ने एक प्रस्ताव पास किया तथा कश्मीर के झगड़े की छानबीन करने के लिये एक आयोग की नियुक्ति कर दी। भारत तथा पाकिस्तान पर संयुक्त राष्ट्र आयोग (UNCIP) नाम के आयोग ने जून 1948 को अपना काम आरम्भ कर दिया। जब जुलाई में यह आयोग उपमहाद्वीप पहुँचा तो पाकिस्तान की सरकार ने इसे सूचना दी कि अभी दो महीने पहले पाकिस्तान की नियमित सेना को कश्मीर में भारत की सैनिक कार्यवाहियों के विरुद्ध भेजा गया है।[4] आयोग ने मामले की छानबीन करने के बाद तथा भारत एवं पाकिस्तान की सरकारों से बातचीत के बाद 3 अगस्त 1948 को अपना पहला प्रस्ताव पेश किया; इस प्रस्ताव को भारत ने स्वीकार कर लिया परन्तु पाकिस्तान ने अस्वीकार कर दिया। इसके बाद आयोग ने फिर बातचीत का सिलसिला आरम्भ किया तथा 11 दिसम्बर 1948 को नये प्रस्ताव जारी किये।[5] इन प्रस्तावों को भारत तथा पाकिस्तान दोनों ने ही स्वीकार किया तथा इसके अन्तर्गत दोनों ही देशों ने 1 जनवरी 1949 से युद्ध विराम स्वीकार किया।

प्रस्तावित समझौता योजना इस प्रकार थी –

1. पाकिस्तान कश्मीर से अपनी सभी सेनाओं को हटा लेगा तथा कबायली लोगों तथा पाकिस्तानियों को हटाने के प्रयत्न करेगा जो वहाँ के सामान्य नागरिक नहीं थे।
2. एक अन्तिम हल से पूर्व पाकिस्तानी सेनाओं द्वारा खाली किये गये क्षेत्र का प्रशासन स्थानीय अधिकारियों द्वारा संयुक्त राष्ट्र आयोग के तत्वावधान में चलाया जायेगा।
3. पहले चरण के पूर्ण हो जाने के बाद आयोग भारत की सरकार को एक सूचना द्वारा कश्मीर से अपनी भारी सेनाओं को धीरे–धीरे हटाने के लिये कहेगा।
4. भारत की सरकार कश्मीर के उन क्षेत्रों में जो युद्ध विराम के समय उसके नियंत्रण में हैं, केवल उतनी ही सेनायें रखेगा जो वहाँ की कानून व्यवस्था को बनाये रखने के लिये आवश्यक हैं।

---

3. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 276
4. ओंकारेश्वर पाण्डेय : विश्वसनीयता खो चुका है संयुक्त राष्ट्रसंघ, राष्ट्रीय सहारा, 5 जून 1999, पृ. 4
5. ओंकारेश्वर पाण्डेय : विश्वसनीयता खो चुका है संयुक्त राष्ट्रसंघ, राष्ट्रीय सहारा, 5 जून 1999, पृ. 4

5. जम्मू तथा कश्मीर की भावी स्थिति लोगों की इच्छाओं के अनुसार ही निश्चित की जायेगी।[6]

सुरक्षा परिषद ने 5 जनवरी 1949 को एक प्रस्ताव पास किया जिसके अनुसार यह निर्धारित किया कि (i) जम्मू तथा कश्मीर की सरकार की देखरेख के अन्तर्गत मत संग्रह करवाया जायेगा। (ii) राज्य की सुरक्षा करने के लिये भारत की सेनाओं को सुनिश्चितता प्रदान की जायेगी तथा (iii) कश्मीर से पाकिस्तानी सेनाओं तथा इसके तत्वों को निकाला जायेगा।

भारत तथा पाकिस्तान दोनों ही इन सुझावों को लागू नहीं कर सके। पाकिस्तान ने स्पष्ट रूप से कश्मीर से अपनी सेनाओं को हटाने से इन्कार कर दिया। पाकिस्तान चाहता था कि दोनों ही देशों की सेनाओं को एक ही समय में हटा लिया जाये परन्तु भारत इस बात पर अड़ा था कि पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर में सेना को हटाया जाना मत संग्रह की पहली शर्त है। भारत तथा पाकिस्तान पर राष्ट्र संघ आयोग इस समस्या को नहीं सुलझा सका। अगस्त 1949 को इसने एक सुझाव दिया कि इन मतभेदों को मध्यस्थता के लिये सौंपा जाये। पाकिस्तान ने इस सुझाव को मान लिया परन्तु भारत ने अस्वीकार कर दिया। 1949 के अन्त तक भारत तथा पाकिस्तान से आयोग ने अपनी हार स्वीकार कर ली तथा 9 दिसम्बर 1949 को इसकी अन्तिम रिपोर्ट में यह सुझाव दिया गया कि इस आयोग के स्थान पर एक मध्यस्थ की नियुक्ति की जाये।[7]

आयोग की सिफारिश पर संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद ने अपने अध्यक्ष जनरल एम. सी. नाहटन को मध्यस्थ नियुक्त किया।[8] उसने भारत तथा पाकिस्तान के सामने कुछ प्रस्ताव रखे परन्तु उनकी स्वीकृति हासिल न कर सका। 12 अप्रैल 1950 को सुरक्षा परिषद ने आस्ट्रेलिया के ओवन डिक्सन को कश्मीर को सेना विहीन करने के लिये प्रस्तुत किया। परन्तु वह अपने उद्देश्य में सफल नहीं हो पाये। 15 सितम्बर 1950 को डिक्सन ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की तथा यह सुझाव दिया कि क्षेत्र के आधार पर मत संग्रह करवाया जाये।[9] इसके विकल्प में उसने यह सुझाव दिया कि मत संग्रह करवाये बिना ही कश्मीर का विभाजन कर दिया जाये।

---

6. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 277
7. जे. एन. दीक्षित : भारतीय विदेश नीति, प्रभात प्रकाशन 4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली, पृ. 323
8. जे. एन. दीक्षित : भारतीय विदेश नीति, प्रभात प्रकाशन 4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली, पृ. 323
9. ओंकारेश्वर पाण्डेय : विश्वसनीयता खो चुका है संयुक्त राष्ट्रसंघ, राष्ट्रीय सहारा, 5 जून 1999, पृ. 4

भारत तथा पाकिस्तान दोनों ने ही यह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया। भारत ने प्रस्ताव को इसलिये स्वीकार नहीं किया क्योंकि इसमें पाकिस्तान को आक्रमणकारी घोषित नहीं किया गया था तथा भारत एवं पाकिस्तान को एक समान ही माना गया था। पाकिस्तान ने इसे इसलिये अस्वीकार कर दिया क्योंकि इसने कश्मीर में पूर्ण मत संग्रह का समर्थन नहीं किया था। डिक्सन के तथ्यपरक विचारों से यद्यपि पश्चिमी दृष्टिकोण मेल खाता था परन्तु इस बात को स्वीकार नहीं किया कि राजनीतिक आधार पर मतसंग्रह न करवाया जाये। इसलिये डिक्सन ने यह सुझाव दिया कि इस झगड़े को बातचीत करने वाले दलों को ही वापिस कर दिया जाये। परन्तु सुरक्षा परिषद के विचार कुछ और ही थे तथा इसलिये इसने एक अन्य अमरीकी फ्रैंक पी. ग्राहम को मध्यस्थ नियुक्त किया।[10]

ग्राहम मिशन दो वर्ष तक चला तथा इसका उस महाद्वीप में कितने अन्य महत्वपूर्ण घटनाओं के साथ संयोग हुआ जैसे जुलाई 1951 में भारत की सेनाओं की पाकिस्तानी सीमा की ओर से हलचल, पाकिस्तान के प्रधानमंत्री लियाकत अली खान की हत्या तथा कश्मीर की संवैधानिक सभा का आयोजन आदि के बाद भी बड़ी सहनशीलता के साथ काम करके ग्राहम भारत तथा पाकिस्तान के बीच मतभेद के क्षेत्रों में कमी करने में सफल हो गये, परन्तु इस काल में उनके द्वारा प्रस्तुत की गयी पाँच रिपोर्टें तथा दो सुरक्षा परिषद के प्रस्ताव दोनों ही देशों की महत्वपूर्ण मांगों की पूर्ति नहीं करते थे।[11] इसलिये भारत तथा पाकिस्तान दोनों ही देशों ने इन्हें अस्वीकार कर दिया। इस प्रकार विद्यमान परिस्थितियों के अन्तर्गत यह मिशन कश्मीर की समस्या को नहीं सुलझा सका। ग्राहम ने यह सुझाव दिया कि झगड़े के निपटारे के लिये भारत तथा पाकिस्तान की द्विपक्षीय बातचीत होनी चाहिये।[12]

1953 की गर्मियों में भारत तथा पाक ने कश्मीर समस्या को सुलझाने के लिये द्विपक्षीय बातचीत आरम्भ की। जून 1953 को क्वीन कारोनेशन के समय पर जो पहली द्विपक्षीय बातचीत आरम्भ हुई, वह जुलाई में कराची तथा अगस्त में दिल्ली में भी जारी रही। बातचीत सद्भावना के वातावरण में आरम्भ हुयी परन्तु शीघ्र ही कुछ एक नकारात्मक बातों के उभरने के कारण इसमें कटुता आ गयी। 9 अगस्त 1953 को शेख अब्दुल्ला को पदच्युत कर दिया गया तथा

---

10. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 278
11. पुष्पेश पंत : अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ, पृ. 218
12. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 278

उसे राष्ट्र विरोधी गतिविधियों के लिये भारत की सरकार द्वारा भारत में ही नजरबन्द कर दिया गया।[13] फरवरी 1954 में कश्मीर की संवैधानिक सभा ने राज्य के भारत में विलय की एकमत होकर पुष्टि कर दी। इन दोनों परिवर्तनों ने वातावरण को बोझिल तथा सन्देहास्पद बना दिया। बातचीत को अधिक क्षति तब पहुँची जब 1954 में अमरीका द्वारा पाकिस्तान को भारी मात्रा में सैनिक साजो सामान देने तथा पाकिस्तान द्वारा अमरीका की दक्षिण पूर्वी एशिया के लिये बनाई गयी सैनिक सन्धि में शामिल होने की घोषणा की गई।[14]

1957 के आरम्भ में ही सुरक्षा परिषद में भारत तथा पाकिस्तान के बीच कश्मीर के विलय के प्रश्न पर तीव्र झड़पें हुई। पाकिस्तान ने अपने विदेशमंत्री फिरोज खान नून द्वारा जम्मू एवं कश्मीर की विधानसभा की पुष्टि तथा जम्मू–कश्मीर के संविधान को अवैध कार्यवाही कहा। मि. नून ने तर्क प्रस्तुत किया क्योंकि कश्मीर के भविष्य का अभी फैसला होना है तथा मत संग्रह अभी शेष है इसलिये इस प्रकार के कार्यों का कोई वैधानिक औचित्य नहीं है। उन्होंने कश्मीर ने भारत की भूमिका पर भी प्रश्न उठाया तथा सुरक्षा परिषद को कहा कि वह भारत को 1948 तथा 1949 के सुरक्षा परिषद के प्रस्तावों को लागू करने के लिये कहे। उसने तो यहाँ तक कहा कि कश्मीर में संयुक्त राष्ट्र की सेनायें रखी जायें। दूसरी तरफ भारत ने इन आरोपो का तथा पाकिस्तान द्वारा उठाये गये प्रश्नों का खण्डन किया। इसने कश्मीर के भारत में विलय तथा साथ–साथ जम्मू कश्मीर की विधानसभा द्वारा तथा संविधान के अनुच्छेद 111 द्वारा इसकी पुष्टि का समर्थन किया। भारत के प्रतिनिधि श्री कृष्णा मेनन ने यह तर्क दिया कि जम्मू कश्मीर का संविधान केवल औपचारिक कार्यवाही है तथा यह कश्मीर को भारत में विलय की पुरानी वास्तविकता का पुनर्कथन मात्र है।[15]

सुरक्षा परिषद ने प्रसिद्ध चार शक्तियों (आस्ट्रेलिया, क्यूबा, इंग्लैण्ड, संयुक्त राज्य अमेरिका) द्वारा एक प्रस्ताव पेश किया गया। Four Power Resolution पर सोवियत संघ द्वारा वीटो हो जाने के बाद एक नया संविधान प्रस्ताव पेश किया गया तथा इसके प्रधान स्वीडन के गुनार जारिंग ने कहा कि "भारत तथा पाकिस्तान की सरकारों के साथ, संयुक्त राष्ट्र के पहले प्रस्ताव के सन्दर्भ में हुये सभी समझौतों पर, जो वे कश्मीर समस्या के हल करने के लिये ठीक

---

13. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 278
14. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 278
15. डॉ. अमरेन्द्र सिंह : U.N.O. एवं कश्मीर समस्या, इण्डिया टुडे, जुलाई 1992, पृ. 73

समझें, बातचीत करें।"[16] 29 अप्रैल 1957 को अपनी रिपोर्ट में गुनार जारिंग ने कहा कि यदि मतसंग्रह करवाया जाता है तो गम्भीर समस्यायें पैदा हो जायेगी। ऐसा लगता था कि वह यथापूर्व स्थिति के ही पक्ष में थे। परन्तु उसने यह सुझाव दिया कि मध्यस्थता के द्वारा यह निश्चय किया जाना चाहिये कि क्या दोनों ही देशों ने सुरक्षा परिषद के प्रस्तावों की प्रथम शर्तों को पूरा कर दिया है जिसमें युद्धविराम तथा मतसंग्रह के बारे में किये जाने वाले प्राथमिक उपायों का विशेष रूप से उल्लेख किया था। भारत ने मध्यस्थता के सुझाव को अस्वीकार कर दिया तथा इस प्रकार जारिंग मिशन समाप्त हो गया।[17]

पाकिस्तान के दबाब के अधीन सितम्बर 1957 को पश्चिमी शक्तियों ने सुरक्षा परिषद से यह प्रार्थना की कि वह फ्रैंक पी. ग्राहम को पुनः अपना प्रतिनिधि नियुक्त करे जो कश्मीर समस्या पर संयुक्त राष्ट्र के प्रस्तावों को लागू करवाने के लिये उचित कदम उठाने के लिये दोनों देशों को सिफारिश करे। भारत तथा पाकिस्तान की सरकारों के साथ बातचीत कर लेने के बाद ग्राहम ने मार्च 1958 में अपनी रिपोर्ट पेश की। उसने कश्मीर की सीमा की पाकिस्तानी ओर संयुक्त राष्ट्र की सेनाओं को ठहराने तथा भारत एवं पाकिस्तान को प्रधानमंत्री स्तर की बैठक करने का सुझाव दिया। पाकिस्तान ने इस सुझाव को स्वीकार कर लिया परन्तु भारत ने अस्वीकार कर दिया। संयुक्त राष्ट्र ने इस पर कोई कार्यवाही नहीं की तथा 1962 तक फिर कश्मीर की समस्या को सुरक्षा परिषद में नहीं उठाया गया।

जनवरी 1962 में पाकिस्तान ने एक बार फिर सुरक्षा परिषद से प्रार्थना की कि कश्मीर में एक गम्भीर परिस्थिति उत्पन्न हो रही है इसलिये वह कश्मीर का मामला अपने हाथों में ले। सुरक्षा परिषद में पाकिस्तान की इस प्रार्थना पर ध्यान नहीं दिया क्योंकि तब भारत ने आने वाले चुनावों को दृष्टि में रखते हुये इसे स्थगित करने की प्रार्थना की। जिस आधार पर सुरक्षा परिषद ने एक बार फिर कश्मीर की समस्या को हाथ में लिया तथा 27 अप्रैल से 4 मई तक तथा फिर 15 जून से 22 जून 1962 तक इस पर बहस हुई। आखिरी दिन आयरलैण्ड द्वारा प्रायोजित प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया। इसमें भारत तथा पाकिस्तान के बीच द्विपक्षीय बातचीत को पुनः आरम्भ करने की बात कहीं थी। परन्तु सोवियत संघ ने इस प्रस्ताव को वीटो कर दिया।

---

16. जे. एन. दीक्षित : भारतीय विदेशनीति, प्रभात प्रकाशन, 4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली, पृ. 323
17. डॉ. राजेश सिंह : संयुक्त राष्ट्र संघ की आरम्भिक सफलता एवं कश्मीर समस्या, दैनिक जागरण, 15 जुलाई 1992

1961 में पाकिस्तान ने एक बार फिर कश्मीर के प्रश्न पर बहस करने के लिये सुरक्षा परिषद को प्रार्थना की। दो असफल विवादों के बाद सुरक्षा परिषद ने 18 मई 1964 को एक प्रस्ताव पास किया जिसके द्वारा उसने यह सुझाव दिया कि कश्मीर की समस्या को भारत तथा पाकिस्तान परस्पर बातचीत द्वारा हल कर लें। इसे हम कश्मीर के प्रश्न पर सुरक्षा परिषद का अन्तिम प्रस्ताव कह सकते हैं। सुरक्षा परिषद की कश्मीर के मामले पर हुये विवादों पर टिप्पणी करते हुये चार्ल्स होमस्थ ने ठीक ही लिखा है "इन वाद विवादों ने भारत तथा पाकिस्तान दोनों ही सरकारों को ये अवसर प्रदान किये कि वे अपनी–अपनी परस्पर विरोधी स्थितियों के प्रचार पर बड़ी शक्तियों की प्रतिक्रियाओं का परीक्षण करें तथा अपने लोगों के सामने अपने राष्ट्रीय हितों की प्राप्ति के अपने कौशल तथा दृढ़ता का प्रदर्शन करें। इससे अधिक की आशा भी नहीं की गई थी और न ही प्राप्त किया जा सका है।[18]

आज U.N.O. में कश्मीर समस्या को मृतप्राय घोषित करने के लिये प्रयास चल रहे हैं।[19]

ताशकन्द समझौता एवं कश्मीर समस्या

अगस्त सितम्बर 1965 में होने वाला भारत–पाक युद्ध 23 सितम्बर 1965 के दिन समाप्त हो गया तथा दोनों देश सुरक्षा परिषद के प्रस्ताव पर विराम करने को सहमत हो गये। लेकिन युद्ध विराम के बाद जो शान्ति हुई वह तनावपूर्ण, अस्थिर तथा जोखिम भरी थी। युद्ध विराम के बाद भी दोनों देशों की सेनायें युद्ध भूमि में एक दूसरे के आमने सामने खड़ी रहीं। कुछ सीमा चौकियों पर इक्का–दुक्का गोलाबारी तथा बड़ी मात्रा में वायु सीमा का उल्लंघन हो रहा था। भारत तथा पाकिस्तान दोनों ही देश एक ऐसी स्थिति में थे जिसको बड़े ध्यानपूर्वक निपटाये जाने की आवश्यकता थी। स्थिति की भयानकता तथा गम्भीरता को अनुभव करते हुये दोनों देशों के नेताओं ने "भारत–पाक" सम्बन्धों पर सम्पूर्णता से विचार विमर्श करने के लिये तथा आपसी मतभेदों तथा झगड़ों को शान्तिपूर्वक निपटाने के लिये सोवियत संघ द्वारा अपनी सेवायें प्रस्तुत करने के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। 4 सितम्बर 1965 को कोसिगिन के प्रस्ताव में कहा गया था कि संयुक्त राष्ट्र चार्टर की भावना तथा बांदुग सिद्धान्तों की भावना में रहकर कार्य करते हुये

---

18. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर
19. दैनिक जागरण, 5 अक्टूबर, 2002

दोनों ही देश अपने बीच पैदा हो रहे मतभेदों को शान्तिपूर्वक दूर करने के लिये बातचीत करें।[20]

भारत ने सोवियत संघ की इस पेशकश को स्वीकार कर लिया क्योंकि यह उनके माननीय मित्र का प्रस्ताव था तथा इसलिये भी क्योंकि यह भारतीय विदेश नीति के मूलभूत सिद्धान्तों पर आधारित था। पाकिस्तान ने जो यद्यपि प्रारम्भ में कुछ हिचकिचा रहा था, इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया क्योंकि इसने महसूस किया कि –

(i) हो सकता है इससे कश्मीर के प्रश्न पर सोवियत संघ का भारत समर्थन निष्प्रभावी हो जाये।

(ii) सोवियत पाक सम्बन्धों में विकास होने से चीन तथा पश्चिमी शक्तियां पाकिस्तान का समर्थन करने तथा इसकी सहायता करने की आवश्यकता को बेहतर प्रकार से अनुभव करने लगेंगी।

(iii) पहले संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा फिर शक्ति द्वारा कश्मीर प्राप्त कर सकने की असफलता के बाद भारत के साथ बातचीत करने का ही एकमात्र मार्ग बचा था।

(iv) कश्मीर में उसके गंवाये हुये क्षेत्रों को वापस लेने तथा कश्मीर के मुद्दे को दोबारा शुरू करने के लिये बातचीत की आवश्यकता थी। इन कारकों के प्रभावाधीन 4 जनवरी 1966 को भारत–पाक वार्ता ताशकन्द में आरम्भ हुयी।

प्रारम्भ में तो दूसरे ही दिन सम्मेलन में कुछ कठिनाइयाँ पेश आयी जब सम्मेलन के औपचारिक कार्य सूची के प्रश्न पर मतभेद उत्पन्न हो गये। पाकिस्तान कश्मीर तथा सेनाओं की वापसी के मुद्दे को प्रथम अधिमान देने के पक्ष में था[21] जबकि भारत विरोध सुलझाव के शान्तिपूर्व साधनों के प्रश्न पर विस्तृत बातचीत करना चाहता था तथा कश्मीर में घुसपैठियों को भेजने के विरुद्ध पाकिस्तान के आश्वासन पर बातचीत करना चाहता था। सम्मेलन के चौथे दिन ही दोनों देशों के बीच कुछ वास्तविक महत्व की बातचीत हुयी। 7 जनवरी 1966 को पाकिस्तान ने यह घोषणा की कि यह अनाक्रमण संधि को स्वीकार नहीं करेगा परन्तु "भविष्य में शक्ति प्रयोग न करने की बात स्वीकार करता है।"[22] 8 जनवरी 1966 को सेनाओं की वापिसी के प्रश्न पर

---

20. Michal Brecher : "Elite Image and Foreign Policies" Pacific Affairs, Spring and Summer - 1967 p.p. 61
21. The Pakistan Times 24 Nov. 1967
22. डॉ. प्रवीण त्रिपाठी : भारत पाक सम्बन्ध एवं ताशकन्द समझौता, दैनिक जागरण, 5 जून 1991, पृ. 4

वास्तविक संकट उत्पन्न हो गया। पाकिस्तान चाहता था कि भारतीय सेनायें 1965 में हुये युद्ध में उनके द्वारा जीती गई नई चौकियों से पीछे हट जाये परन्तु स्वयं छम्ब से हटना नहीं चाहता था। दूसरी तरफ भारत इस बात का समर्थन करता था कि कश्मीर में हथियाये क्षेत्रों को अपने पास रखना उसका अधिकार है तथा उसे छम्ब भी वापस मिल जायेगा। बाद में समझौते के रूप में तथा सद्भावना से प्रेरित होकर भारत पाक अधिकृत कश्मीर के उन क्षेत्रों को छम्ब के बदले में वापस करने को राजी हो गया जो उसने युद्ध के दौरान अधिकार में लिये थे तथा पाकिस्तान ने यह आश्वासन भी दिया कि वह शक्ति प्रयोग का साधन छोड़ देगा। 8 जनवरी की अपरान्ह अयूब–शास्त्री की बैठक ने स्थिति को कुछ बेहतर बना दिया। घोषणा प्रारूप की रूपरेखा पर बातचीत हुई उसे अन्तिम रूप दिया गया तथा 10 जनवरी की सुबह तक उसका आदान–प्रदान किया गया। दोपहर को हस्ताक्षर समारोह हुआ तथा समारोह उस दिन शाम को हुआ।

ताशकन्द घोषणा पत्र

नौ सूत्री ताशकन्द घोषणा पत्र को प्रधानमंत्री शास्त्री जी ने "गुट–निरपेक्ष सरकार तथा दो सैन्य गुटों के साथ जुड़ी हुई सरकार के बीच एक अद्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय कूटनीति" बतलाया। राष्ट्रपति अयूब ने इसे साधारण जनता की जीत कहकर सराहा। सोवियत प्रधानमंत्री श्री कोसिगिन ने कहा कि "यह भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्धों के विकास में एक नया चरण है।"(23)

ताशकन्द घोषणा पत्र की मुख्य धारायें निम्नलिखित हैं –

1. भारत के प्रधानमंत्री तथा पाकिस्तान के राष्ट्रपति यह स्वीकार करते हैं कि दोनों ही देश अच्छे पड़ोसियों जैसे सम्बन्ध बनाने के प्रयत्न करेंगे तथा संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के अन्तर्गत शक्ति का प्रयोग न करने तथा अपने झगड़ों के शांतिपूर्ण निपटारे के अपने उत्तरदायित्व की पुष्टि करते हैं।
2. भारत तथा पाकिस्तान दोनों के सभी सशस्त्र सैनिक 25 फरवरी 1965 तक 5 अगस्त 1965 की पहले वाली स्थिति पर वापिस बुला लिये जायेंगे तथा दोनों देश युद्धविराम की शर्तों का पालन करेंगे।
3. दोनों देशों के द्विपक्षीय सम्बन्ध दोनों ही देशों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने

---

23. अयूब खान : Friend Not Master, लन्दन ऑक्सफोर्ड 1967, पृ. 117

के सिद्धान्त पर आधारित होगा।

4. दोनों ही देश एक दूसरे के विरुद्ध प्रचार को हतोत्साहित करेंगे।

5. दोनों देशों के उच्चायुक्त अपने–अपने पदों पर वापिस चले जायेंगे तथा दोनों देशों के बीच सामान्य कूटनीतिक सम्बन्ध कायम किये जायेंगे।

6. दोनों ही देश आपस में आर्थिक तथा व्यापारिक सम्बन्ध फिर से शुरू करने के लिये तथा संचार तथा सांस्कृतिक आदान–प्रदान के लिये कदम उठायेंगे तथा वर्तमान समझौतों को लागू करेंगे।

7. युद्ध बन्दियों के आदान–प्रदान के लिये सम्बन्धित अधिकारियों को निर्देश जारी किये जायेंगे।

8. दोनों ही देशों के प्रवास को रोकने के लिये कदम उठायेंगे तथा शरणार्थियों तथा अवैध अप्रवासियों को बाहर निकालने की समस्या पर बातचीत जारी रखेंगे। इसके अतिरिक्त वे झगड़े के दौरान अधिकार में ली गई जायदाद तथा अचल सम्पत्ति को वापस करने पर भी दोनों देशों में बातचीत की जायेगी।

9. दोनों ही देशों ने यह बात स्वीकार की कि वे उच्च तथा दूसरे स्तरों पर, एक दूसरे से सीधा सम्पर्क रखने वाले मामलों पर, एक दूसरे से बातचीत जारी रखेंगे।

इसके साथ–साथ दोनों ही देशों ने सोवियत संघ की सरकार तथा उसके नेताओं के प्रति अपना आभार प्रकट किया तथा उनके प्रयत्नों के लिये उनकी सराहना की।

ताशकन्द घोषणा का विभिन्न देशों ने गर्मजोशी से स्वागत किया। केवल चीन ही ऐसा देश था जिसने इसकी प्रशंसा नहीं की। बहुत से दूसरे देशों ने भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्धों में इसे महत्वपूर्ण घटना माना।

भारत में बड़ी संख्या में लोगों ने तथा कांग्रेस दल के सभी नेताओं ने इसका स्वागत किया तथापि जनसंघ के नेताओं तथा प्रजा समाजवादी दल ने इसकी आलोचना की, मुख्यतः इसलिये क्योंकि इसमें हाजीपीर तथा टिथवाल से सेनाओं की वापसी की बात कही गई थी। श्री अटल बिहारी बाजपेयी ने तो यहाँ तक कह दिया था कि "हमारे जवानों ने युद्ध भूमि में जो जीता था हमारे नेताओं ने उसे शान्तिकाल में खो दिया है।"[24] भारत के साम्यवादी दल (CPL) तथा स्वतंत्र पार्टी ने इसका स्वागत किया। सी. राजगोपालाचार्य ने कहा, "दोनों ही देशों में कठोरता

24. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 381

को थोड़ा ढीला करके एक शुरुआत कर दी गई है।"[25] भारत की सरकार ने संसद में इस घोषणा का समर्थन किया इसे शान्ति की प्राप्ति तथा युद्ध के विरुद्ध शान्तिपूर्ण साधनों के प्रयोग की तरह महत्वपूर्ण कदम माना गया तथापि आलोचकों ने 'अनाक्रमण घोषणा से कहीं दूर' कहकर उसकी आलोचना की है।

पाकिस्तान में इस घोषणा के विरुद्ध तीव्र प्रतिक्रिया हुयी। सामान्य भावना यह थी कि यह तो बेचना हुआ। लाहौर के विद्यार्थियों ने इसे "महान धोखा" कहा।[26] पाकिस्तान की बार संघ ने इसे निराशावादी कहा। श्रीमती फातिमा जिन्ना ने कहा कि पाकिस्तान की तरफ से इस घोषणा को स्वीकार करने, इस पर हस्ताक्षर करने तथा इसे जारी करने वालों में दूरदर्शिता, बुद्धिमता, धैर्य तथा दूर–दृष्टि का अभाव माना।"[27] केवल राष्ट्रीय आवामी पार्टी एक अपवाद थी जिसने इसका स्वागत किया, इसके महासचिव मुहम्मद–उल–हक उस्मानी ने इसे "विवेक, तर्क तथा शान्ति की शक्तियों की विजय" कहा।[28] पाकिस्तान की सरकार ने इसका समर्थन किया। परन्तु राष्ट्रपति अयूब को यह स्पष्टीकरण देना पड़ा कि "पाकिस्तान इसे अनाक्रमण सन्धि की तरह स्वीकार नहीं करेगा तथा कश्मीर के लोगों को अपना भविष्य निर्धारण के अहस्तान्तरणीय अधिकार का समर्थन जारी रखेगा।"[29] पाकिस्तान के जनमत को शान्त करने के लिये उन्होंने कहा कि "मुख्य कारण जम्मू तथा कश्मीर से सम्बन्धित झगड़ा है, तथा जब तक इसका निर्णय नहीं हो जाता तब तक भारत तथा पाकिस्तान में शान्ति नहीं हो सकती।"[30] धीरे–धीरे पाकिस्तान की प्रेस तथा शासक ताशकन्द घोषणा को व्यवहारिक रूप से लागू करने के प्रति सन्देह प्रकट करने लगे। 15 नवम्बर, 1966 को एक साक्षात्कार में राष्ट्रपति अयूब खान ने कहा कि "इससे कोई हल नहीं हुआ। इसके द्वारा केवल मात्र दोनों देश एक दूसरे के सामने अपनी–अपनी सेनाओं को हटाने के योग्य हो गये।"[31]

वास्तव में ताशकन्द घोषणा केवल उन्हीं भागों को, जो सेनाओं की वापसी से युद्ध

---

25. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 381
26. The Pakistan observer, 16 August 1967
27. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 382
28. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 382
29. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 382
30. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 382
31. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 382

बन्दियों के आदान–प्रदान तथा कूटनीतिक सम्बन्धों को फिर से शुरू करने से सम्बन्धित थे, ही लागू किया गया। इन धारणाओं को तेजी से लागू किया गया तथा 25 फरवरी 1966 तक इन कार्यों को पूरा कर लिया गया। बाकी की धारायें वैसी ही अक्रियाशील बनी रहीं, ताशकन्द समझौते के विरुद्ध पाकिस्तान में तीव्र प्रतिक्रिया द्वारा इसे "अनाक्रमण समझौता" के रूप में स्वीकार करने से इन्कार कर इसे लागू करने से सम्बन्धित धाराओं की विशिष्टता तथा स्पष्टता का अभाव, धाराओं की व्याख्या करने के सम्बन्ध में मतभेदों, वाद–विवाद को सुलझाने से सम्बन्धित किसी तंत्र के सम्बन्ध में धाराओं का न होना तथा कश्मीर पर पाकिस्तान तथा भारत के दृष्टिकोण में परिवर्तन करने की असफलता ने ताशकन्द समझौते को लागू करना कठिन बना दिया। घोषणा पर हस्ताक्षर करने के फौरन बाद प्रधानमंत्री श्री शास्त्री जी की मृत्यु, भारत की "अनाक्रमण सन्धि" की पेशकश का उत्तर देने में पाकिस्तान की असफलता तथा 1966 तथा 1968 में श्रीमती इन्दिरा गाँधी द्वारा झगड़ों के शांतिपूर्ण निपटारे के लिये एक संयुक्त मशीनरी की स्थापना हेतु पेशकश की। पाकिस्तान द्वारा अस्वीकृति ने सम्बन्धों को सामान्य बनाने के रास्ते में रुकावट खड़ी कर दी जो कि ताशकन्द समझौते के बाद सामान्य बनाये जा सकते थे। पाकिस्तान को सोवियत संघ द्वारा शस्त्रों की आपूर्ति का भारत द्वारा विरोध तथा पाकिस्तान प्रेस द्वारा भारत विरोधी प्रचार की पुनः शुरुआत ने भी ताशकन्द समझौते को लागू करने के अवसरों को धूमिल कर दिया। संयुक्त राष्ट्र संघ में पाकिस्तान द्वारा कश्मीर के प्रश्न को पुनः उठाया जाना तथा घुसपैठियों का उत्तरदायित्व लेने में इसकी असफलता ने ताशकन्द घोषणा की सम्बन्ध सामान्य बनाने की धाराओं के संचालन में कठिनाई पैदा कर दी। यहाँ तक कि 1 और 22 मार्च 1966 को पहली मंत्री स्तरीय बैठक में भी कोई रास्ता नहीं खोजा जा सका।

भारत ने ताशकन्द घोषणा को लागू करने के लिये कई कदम उठाये परन्तु पाकिस्तान के नकारात्मक तथा उदासीन रवैये के कारण ये असफल रहे। श्रीमती गाँधी ने 15 अगस्त, 1968 को पाकिस्तान के साथ "अनाक्रमण संधि" करने की पेशकश की जिसका पाकिस्तानी प्रेस द्वारा उपहास उड़ाया गया तथा इसे ढोंग कहा गया। उसी प्रेस ने 1981–87 में भारत तथा पाकिस्तान के बीच अच्छे पड़ोसियों के सम्बन्धों के लिये अनाक्रमण संधि को आवश्यक तथा आदर्श शर्त माना था।

इसी प्रकार श्रीमती गाँधी का पाकिस्तान को प्रस्तुत प्रस्ताव कि भारत तथा पाकिस्तान के बीच विभिन्न झगड़ों का निपटारा करने के लिये संयुक्त तंत्र का निर्माण किया जाये,

पाकिस्तान ने यह कहकर ठुकरा दिया कि "यह केवल नया प्रचार अभियान है।"[32] ताशकन्द घोषणा को लागू करने की भारतीय इच्छा के विरुद्ध पाकिस्तान ने इसकी आलोचना करने को ही अधिमान दिया तथा इसकी पहली वर्षगांठ पर ताशकन्द विरोधी दिन मनाने का निश्चय किया। यहाँ तक कि राष्ट्रपति अयूब खान ने इस दिन सोवियत प्रधानमंत्री कोर्सिगन को अपने सन्देश में कहा, "कश्मीर समस्या के समाधान के बिना घोषणा को लागू नहीं किया जा सकता है।"[33] यह श्रीमती इन्दिरा गाँधी के सन्देश के काफी विरुद्ध था क्योंकि श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने ताशकन्द घोषणा में अपनी आस्था प्रकट की थी। इस प्रकार 1967 ई. तक पाकिस्तान ने इसकी पूर्णरूप से उपेक्षा कर देने में कोई हिचकिचाहट नहीं दिखाई। इसके शीघ्र ही बाद पाकिस्तान के नेतृत्व में परिवर्तन हो गया। अयूब के विरुद्ध प्रचार तथा आन्दोलन ने अयूब को पद छोड़ने के लिये तथा शासन जनरल याहिया खान के हवाले कर देने को बाध्य कर दिया। यद्यपि राष्ट्रपति याहिया खान ने भारत के साथ शान्ति तथा प्रेम से रहने की इच्छा तुरन्त ही प्रकट कर दी किन्तु उसने ताशकन्द घोषणा को लागू करने के लिये कदम उठाने में कोई विशेष रुचि नहीं दिखाई। इसके अतिरिक्त बांग्लादेश संकट की उत्पत्ति के बाद तो ताशकन्द समझौता कब्र में दफन ही हो गया। वास्तव में ताशकन्द घोषणा थोड़े से काल के लिये भी भारत–पाक सम्बन्ध के संचालन में लाभदायक आधार प्रदान करने में असफल रही।

शिमला समझौता एवं कश्मीर समस्या

प्रधानमंत्री श्रीमती गाँधी तथा राष्ट्रपति श्री भुट्टो के बीच 28 जून, 1972 को शिमला शिखर सम्मेलन हुआ तथा पाँच दिनों की बातचीत के बाद भारत तथा पाकिस्तान के बीच 3 जुलाई, 1972 को शिमला समझौता हुआ।

शिमला समझौते में यह कहा गया कि भारत तथा पाकिस्तान की सरकारों ने तय किया कि वे अब तक के सम्बन्धों के बीच जो झगड़े या विरोध बने रहे थे, उसे वे समाप्त कर देंगे तथा उपमहाद्वीप में शान्ति की स्थापना करेंगे ताकि दोनों ही देश अपने देश के लोगों की आवश्यकताओं को पूरा करने तथा उनके कल्याण की ओर अपना पूरा ध्यान दे सकें।[34] इस समझौते द्वारा संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के उद्देश्यों तथा सिद्धान्तों में पूर्ण विश्वास प्रकट किया गया

32. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 381
33. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 381
34. जे. एन. दीक्षित : भारतीय विदेश नीति, प्रभात प्रकाशन, 4/19, आसफ अली रोड, नई दिल्ली

तथा यह घोषणा की गई कि दोनों देश अपने मतभेदों को परस्पर बातचीत द्वारा शान्तिपूर्ण साधनों से निपटायेंगे। इसके अतिरिक्त उनके बीच किसी भी पुरानी समस्या के समाधान के लिये दोनों में से कोई देश स्वयमेव स्थिति उत्पन्न नहीं करेगा तथा दोनों ही देश शान्ति की स्थापना तथा सद्भावपूर्ण सम्बन्धों के बीच रुकावट बनने वाले सभी कार्यों को हतोत्साहित करेंगे तथा उन्हें रोकेंगे। दोनों ही देशों ने शांतिपूर्ण सह अस्तित्व के सिद्धान्त, एक दूसरे के भू-क्षेत्रीय अखण्डता तथा प्रभुसत्ता के लिये सम्मान तथा एक दूसरे के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने की बात को भी स्वीकार किया। दोनों ही देश इस बात पर सहमत हो गये कि वे एक दूसरे के विरुद्ध शत्रुतापूर्ण प्रचार रोकेंगे तथा ऐसी सभी सूचनाओं का आदान-प्रदान करेंगे जिनसे उनके मध्य मित्रता को बढ़ावा मिले। यह भी तय हुआ कि धीरे-धीरे दोनों देशों के बीच सामाजिक, सांस्कृतिक, व्यापारिक तथा आर्थिक सम्बन्धों को सामान्य बनाया जायेगा। दोनों ही देश अपनी-अपनी सेनाओं को अन्तर्राष्ट्रीय सीमा तक वापिस ले जाने के लिये मान गये। सेनाओं की वापसी 30 दिनों के भीतर पूरी हो जानी थी। जम्मू-कश्मीर में 17 दिसम्बर, 1972 के युद्ध-विराम द्वारा वास्तविक नियंत्रण रेखा को दोनों देशों द्वारा मान्यता देनी थी।

शिमला समझौता ने उपमहाद्वीप के सम्बन्धों के यादगार रूपान्तरण, विरोध से मैत्री की ओर मान लिया। इसके द्वारा लाभदायक द्विपक्षवाद के आधार पर भारत तथा पाकिस्तान के बीच सम्बन्धों को सामान्य बनाने की प्रक्रिया का स्वस्थ्य तथा सुदृढ़ आधार प्रदान किया गया। उससे शान्तिपूर्ण सह अस्तित्व के सिद्धान्त को गम्भीरतापूर्वक मान्यता प्राप्त हुयी। एक-दूसरे की भू क्षेत्रीय अखण्डता के लिये परस्पर सम्मान, अहस्तक्षेप, अच्छा पड़ोसीपन तथा शांति एवं उन्नति के लिये सम्बन्धों को सामान्य बनाने के सिद्धान्तों को पूर्ण सम्मान दिया गया। यद्यपि मि. बाजपेयी ने इसका इस बात के लिये विरोध किया कि इसके द्वारा पाकिस्तान के साथ एकमुश्त समझौता नहीं किया गया, फिर भी भारत तथा विदेशों में इसे उच्चकोटि की राजनीतिज्ञता का विवेकपूर्ण कार्य कहकर सराहा गया। जिसमें भारत एवं पाकिस्तान के सम्बन्धों को सकारात्मक दिशा देने की सामर्थ्य थी। भारत ने कभी भी युद्ध के उपरान्त बनी पाकिस्तान की कमजोर स्थिति को अपने लाभ के लिये प्रयोग करने के प्रयत्न नहीं किये।

शिमला समझौता 1966 ई. के ताशकन्द समझौते से विशिष्ट रूप से सुधरा हुआ था। यह द्विपक्षीय बातचीत के माध्यम से होने वाला सबसे बड़ा समझौता था तथा इस प्रकार भारत तथा पाकिस्तान के बीच द्विपक्षवाद के एक नये युग की शुरुआत हुयी। इस समझौते से दोनों

देशों की समस्याओं को सुलझाने के लिये दूसरे देशों पर निर्भरता की समाप्ति हो गई। जिस भावना से शिमला समझौता किया गया था वह भावना इसकी धाराओं से कहीं अधिक महत्वपूर्ण थी। दोनों ही तरफ से जो भाषण दिये गये विशेषतया मि. भुट्टो ने जो विचार व्यक्त किये उनसे भारत–पाक सम्बन्धों के प्रति पाकिस्तान के दृष्टिकोण में सकारात्मक परिवर्तन का स्पष्ट रूप से पता चला। यह निश्चित लगने लगा कि शिमला बातचीत के बाद तथा इस समझौते के आधार पर भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्ध भविष्य में और सुदृढ़ होंगे।(35)

पारस्परिक सम्बन्धों के संचालन के लिये दोनों देशों भारत तथा पाकिस्तान ने शिमला समझौता स्वीकार किया। दोनों ही देशों ने इसकी पुष्टि की तथा सामान्यीकरण की प्रक्रिया अगस्त 1972 से शुरू हो गई। शुरू–शुरू में सेनाओं की वापिसी का कार्य शुरू हुआ तथा बिना किसी गड़बड़ के सम्पूर्ण हो गया केवल ठाकू–चक पर नियंत्रण के प्रश्न पर कुछ विवाद हुआ। यह रुकावट भी 7 दिसम्बर, 1972 को दूर कर ली गई। चार दिन बाद जम्मू तथा कश्मीर में नियंत्रण रेखा दिखाने वाले मानचित्र, जैसे 17 दिसम्बर 1971 के बाद निश्चित हुआ था, हस्ताक्षरित हुये तथा उनका आदान–प्रदान हुआ। नियंत्रण की इस नई रेखा ने जम्मू–कश्मीर में भारतीय सेनाओं की स्थिति निश्चित रूप से पहले से बेहतर बना दी। इसने संयुक्त राष्ट्र के युद्ध–विराम प्रेक्षकों को भी अनावश्यक बना दिया क्योंकि उन्हें इस नई नियंत्रण रेखा से कोई सरोकार नहीं था। अब युद्ध–विराम रेखा को वास्तविक नियंत्रण रेखा का नाम मिला।

1973 ई. में दोनों देशों युद्धबन्दियों के प्रत्यावर्तन की समस्या को सुलझाने में सफल रहे तथा बंगालियों को पाकिस्तान से बांग्लादेश तथा बिहारी मुसलमानों को बांग्लादेश से पाकिस्तान वापिस भेजने की समस्या भी सुलझ गई। 195 पाकिस्तानी युद्धबन्दियों, जिन पर युद्ध अपराधों तथा नरसंहार का दोष था, पर मुकदमें चलाने की समस्या को बुद्धिमता से सुलझाया गया। इस दिशा में शुरुआत भारत तथा पाकिस्तान के बीच 28 अगस्त, 1973 में दिल्ली समझौते के अन्तर्गत हुयी, जिसे बाद में बांग्लादेश ने भी स्वीकार कर लिया। इस प्रबन्ध के अनुसार पाकिस्तान युद्धबन्दियों तथा शहरियों की वापसी संभारतन्त्रीय समझौते के पूरा होते ही तत्काल शुरू हो जानी थी या उस तिथि से जो दोनों देशों द्वारा परस्पर समझौते से निश्चित होनी थी। इसके साथ–साथ ही पाकिस्तान से सभी बंगालियों तथा बांग्लादेश से सभी पाकिस्तानियों की स्वदेश वापसी शुरू हो जानी थी। पाकिस्तान की सरकार ने बांग्लादेश के लोगों में से गैर

35. Mohammad Ayub : India, Pakistan and Bangladesh, Delhi, 1975, p.p. 173

बंगालियों को जिन्होंने देश प्रत्यावर्तन की इच्छा व्यक्त की थी, उन्हें पाकिस्तान में रखना स्वीकार किया। बांग्लादेश ने तय किया कि जब तक देश प्रत्यावर्तन का यह सिलसिला चलता रहेगा 195 युद्धबन्दियों पर मुकदमा नहीं चलाया जायेगा तथा किसी समझौते पर पहुँचने तक ये युद्धबन्दी भारत में ही रहेंगे। मुकद्मे के मामले पर किसी अन्य तिथि को बातचीत की जायेगी तथा तब ही सुलझाया जायेगा। इस स्थिति में बांग्लादेश ने यह घोषणा की कि वह भविष्य में किसी बातचीत में केवल प्रभुसत्ता की समानता के आधार पर ही भाग लेगा।

फरवरी 1974 में लाहौर में इस्लामी शिखर सम्मेलन के दौरान पाकिस्तान ने मुस्लिम राष्ट्रों की सलाह मानकर 22 फरवरी, 1974 को बांग्लादेश को मान्यता दे दी। इस बात से 195 युद्धबन्दियों के मुकद्दमे की समस्या को सुलझाने के लिये बातचीत का कार्य सम्भव हो गया। अप्रैल 1974 में भारत, पाकिस्तान तथा बांग्लादेश के बीच त्रिपक्षीय बातचीत नई दिल्ली में शुरू हुयी तथा एक समझौता किया गया जिसके अनुसार बांग्लादेश इन युद्धबन्दियों पर नरसंहार का मुकद्मा न चलाने के लिये तथा इनका पाकिस्तान को प्रत्यावर्तन करने के लिये मान गया। उसके बाद प्रत्यावर्तन का कार्य 30 अप्रैल, 1974 तक पूरा हो गया इस प्रकार भारत, पाकिस्तान तथा बांग्लादेश के बीच 1971 के बाद सम्बन्धों की एक गम्भीर समस्या की समाप्ति हो गई।[36]

यह आशा की गई कि इसके बाद दूसरे क्षेत्रों में भी सम्बन्धों को सामान्य करने लिये तुरन्त कदम उठाये जायेंगे। एक नकारात्मक घटना ने इसके आरम्भ में विघ्न डाल दिया। 18 मई, 1974 को भारत द्वारा किये गये शान्तिपूर्ण परमाणु विस्फोट के विरुद्ध पाकिस्तान ने तीव्र प्रतिक्रिया व्यक्त की। भारत ने यह स्पष्ट कर दिया कि शान्तिपूर्ण परमाणु विस्फोट किया जाना मात्र एक तकनीकी विकास था जो नितान्त असैनिक उद्देश्यों के विकासार्थ किया गया था। पाकिस्तान ने इसके विपरीत धारणा बनाई तथा 1 जून, 1974 को भारत को एक संदेश भेजा जिसके अनुसार जून में पाकिस्तानी तथा भारतीय प्रतिनिधियों के बीच होने वाली उस बैठक को स्थगित कर दिया गया जो दोनों देशों के बीच डाक तथा तार–संचार सम्पर्क तथा यात्रा सुविधायें पुनः शुरू करने के लिये की जानी थी।[37]

---

36. Z. A. Bhutto : Myth of Independence (London 1988) or Ministory of External Affairs, Bangladesh Documents (Delhi 1971)
37. Z. A. Bhutto : Myth of Independence (London 1988) or Ministory of External Affairs, Bangladesh Documents (Delhi 1971)

सितम्बर 1974 को फिर यह बातचीत इस्लामाबाद में हो सकी, जिसमें डाक वस्तुओं के आदान–प्रदान तार–संचार की सुविधायें तथा धार्मिक स्थानों की यात्रा, इनके सम्बन्ध में समझौते किये गये।[38]

30 नवम्बर, 1974 को एक द्विपक्षीय व्यापार समझौता किया गया तथा 7 दिसम्बर को 9 वर्ष पुराना व्यापार प्रतिरोध उठा लिया गया। इसके तुरन्त बाद ही 23 जनवरी 1975 को एक विस्तृत व्यापार समझौता किया गया 14 जनवरी 1976 को पाकिस्तान ने 5000 टन कच्चा लोहा तथा 200 टन बीड़ी के पत्ते खरीदना स्वीकार किया। मई 1976 को भारत के विदेश सचिव ने इस्लामाबाद का दौरा किया तथा पाकिस्तान के प्रतिनिधि से महत्वपूर्ण बातचीत की। इसमें भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्धों को सामान्य बनाने का रास्ता और साफ हो गया।[39]

1974 के आसपास पाकिस्तान ने आजाद कश्मीर के पाकिस्तान के साथ राजनीतिक एकीकरण के लिये कदम उठाने शुरू कर दिये। पाकिस्तान पीपुल्स पार्टी को आजाद कश्मीर में भड़काऊ कार्यवाही के लिये उत्तेजित किया तथा पाकिस्तान के प्रधानमंत्री की अध्यक्षता तथा आजाद कश्मीर के पदेन अध्यक्ष की उप अध्यक्षता में एक 14 सदस्यीय समन्वयन कमेटी का गठन किया गया। यह कदम "आजाद कश्मीर" के गुप्त रूप से पाकिस्तान में विलय के लिये उठाये गये। श्रीमती गाँधी ने अपनी तरफ से यह उचित समझा कि वह शेख अब्दुल्ला के साथ समझौता करके कश्मीर समस्या का काँटा निकाल फेंके।[40] फरवरी 1975 में इन्दिरा–शेख समझौता 20 वर्ष पुराना गतिरोध समाप्त करने के लिये किया गया। श्रीमती गाँधी का यह कार्य बड़ा निर्भीक तथा बुद्धिमत्तापूर्ण था क्योंकि शेख द्वारा कश्मीर की भारत में खुली तथा प्रत्यक्ष स्वीकृति ने जम्मू–कश्मीर में पाकिस्तान द्वारा उठाये गये कदमों को निरर्थक कर दिया। पाकिस्तान ने इस समझौते पर प्रत्यक्ष रूप से कड़ी प्रतिकूल प्रतिक्रिया की, परन्तु अन्दर से इसने पाकिस्तान को 'आजाद–कश्मीर' के साथ विलय के लिये आवश्यक आधार प्रदान कर दिया।

1972 से 1977 तक के काल में पाकिस्तान तथा भारत के बीच सम्बन्धों का सामान्यीकरण धीरे–धीरे किन्तु क्रमिक रूप से होता रहा। तथापि उतार चढ़ाव आते रहे। फरवरी

---

38. Z. A. Bhutto : Myth of Independence (London 1988) or Ministry of External Affairs, Bangladesh Documents (Delhi 1971)
39. जे. एन. दीक्षित : भारतीय विदेश नीति, प्रभात प्रकाशन 4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली पृ. 233–245
40. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 399

1975 को अमरीका द्वारा भारत तथा पाकिस्तान पर से शस्त्र प्रतिरोध को उठा लेने से यह संभावना एक बार फिर से बढ़ गई कि अमरीका पाकिस्तान को बड़ी संख्या में हथियार बेचेगा। भारत ने इसे खतरनाक घटना माना। चीन तथा पाकिस्तान की भारत विरोधी धुरी की निरन्तर प्रगति ने भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्धों को तनावपूर्ण बना दिया। सिक्किम के भारत में विलय के विरुद्ध चीन तथा पाकिस्तान की कड़ी प्रतिक्रिया, पाकिस्तान द्वारा अधिक से अधिक शस्त्रों की प्राप्ति की इच्छा, भुट्टो द्वारा इस्लामी बम की बात, बांग्लादेश में अगस्त 1975 में आकस्मिक शासन परिवर्तन के परिणामस्वरूप शेख मुजीब की हत्या तथा भारत तथा सोवियत संघ के बढ़ते सहयोग के कारण उत्पन्न पाकिस्तान के भय आदि ने भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्धों को धीमा तथा अनियंत्रित कर दिया।(41)

1977 ई. में भारत तथा पाकिस्तान के आन्तरिक राजनीतिक वातावरण में कुछ दूरस्थ परिवर्तन हुये जो शुरू–शुरू में ऐसे लगते थे कि अब भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्धों की गति को और धीमा कर देंगे या इनमें नकारात्मक प्रवृति पैदा कर देंगे। 1 जनवरी 1977 को पाकिस्तान में आम चुनावों की घोषणा हुयी। चुनाव प्रसार के दौरान यह बात सामने आई कि भुट्टो के शासन ने पाकिस्तान में अपना समर्थन खो दिया है परन्तु चुनाव के परिणामों ने भुट्टो की पीपुल्स पार्टी को शानदार विजय दिलाई। विरोधी दल ने यह आरोप लगाया कि चुनावों के दौरान बड़े पैमाने पर हेराफेरी हुयी है। इसने भुट्टो की विजय को गहरे वाद–विवाद का मुद्दा बना दिया तथा इसका परिणाम यह हुआ कि पाकिस्तान में राजनीतिक अस्थिरता आ गई। इस स्थिति को समाप्त करने के लिये 5 जुलाई, 1977 को जनरल जिया ने सरकार का तख्ता पलट दिया तथा एक बार फिर पाकिस्तान में असैनिक शासन समाप्त कर दिया गया। पाकिस्तान में सैनिक तानाशाही का पुनः सत्ता में आना भारत के लिये तनाव का कारण बन गया भारतीय नेतृत्व ने इस परिवर्तन को बड़ी शान्ति से लिया तथा बिना किसी टिप्पणी के स्वीकार किया क्योंकि यह परिवर्तन पाकिस्तान के आन्तरिक मामलों से सम्बन्धित था।

भारत में मार्च 1977 में आम चुनाव हुये तथा परिणामस्वरूप भारत में 30 वर्षों से चली आ रही कांग्रेस पार्टी का शासन समाप्त हो गया। कांग्रेस के स्थान पर अब सत्ता में जनता पार्टी आई। सन् 1977 से पहले कुछ एक जनता नेताओं विशेषतया अटल बिहारी बाजपेई ने जो कि

---

41. पुष्पेश पंत : अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ, 1995–97, पृ. 457

जनता शासन में विदेशमंत्री बने, कांग्रेस युग की विदेशनीति के कुछ एक तत्वों को गम्भीर चुनौती दी तथा इसलिये अब यह आशा की गई कि राजनीतिक परिवर्तन के साथ–साथ इस बार भारत की विदेशनीति में विशेषतः पाकिस्तान के साथ सम्बन्धों में कुछ परिवर्तन आयेगा। तथापि इसके कुछ समय पश्चात ही यह स्पष्ट हो गया कि जनता सरकार विदेशनीति के पूर्व स्थापित सिद्धान्तों तथा उद्देश्यों को ही अपनायेगी।

पाकिस्तान के प्रति जनता सरकार ने अधिक खुले दिल से कार्य करने का निश्चय किया। ऐसा उन्होंने अपने पड़ोसियों विशेषतया पाकिस्तान के साथ सम्बन्धों को सुधारने की नीति के अनुसार किया। जनरल जिया ने भी भारत तथा पाकिस्तान के बीच सम्बन्धों को तेजी से सुधारने की इच्छा प्रकट की। अगस्त 1977 को जनरल जिया ने करीब 200 भारतीय बन्दियों को छोड़ने की घोषणाा की जो कि पाकिस्तान की जेलों में सड़ रहे थे। भारत ने प्रत्युत्तर में भारतीय जेलों में बन्द 200 पाकिस्तानी बन्दियों को छोड़ दिया।[42]

फरवरी 1978 को भारत के विदेशमंत्री श्री बाजपेयी ने पाकिस्तान का दौरा किया तथा भारतीय महाद्वीप में और अधिक सौहार्दपूर्ण तथा आशावादी वातावरण पैदा करने की कोशिश की। उन्होंने घोषणा की कि भारत पूरी तरह से पाकिस्तान की प्रभुसत्ता तथा अखण्डता का सम्मान करता है। उन्होंने एक पत्रकार सम्मेलन में फिर कहा, "यद्यपि भारत एक बड़ा तथा विशाल देश है फिर भी इसने दक्षिण एशिया में कभी भी बड़े भाई की भूमिका न तो अदा की है तथा न ही भविष्य में करेगा।"[43] श्री बाजपेयी पाकिस्तानी नेताओं के साथ अच्छा नाता जोड़ने में सफल हो गये।

भारत की परमाणु नीति पर जनता सरकार ने जो संयमित रुख अपनाया उसका भी पाकिस्तान पर प्रभाव पड़ा। अप्रैल 1978 को पाकिस्तान के विदेश सचिव मि. आगाशाही भारत आये। 12 अप्रैल, 1978 को दिल्ली में हुयी बातचीत के फलस्वरूप सलाल बाँध परियोजना पर एक समझौता हुआ, इससे 30 वर्ष पुराना झगड़ा समाप्त हो गया। इस समझौते द्वारा भारत को जम्मू–कश्मीर में चुनाव नदी पर सलाल बाँध बनाने तथा विद्युत परियोजना बनाने का अधिकार मिल गया तथा बदले में इसने डिजाइन तथा स्वरूप के बारे में पाकिस्तानी विचारों का सम्मान करना स्वीकार किया। दिल्ली बातचीत ने द्विपक्षीय सम्बन्धों को बढ़ावा देने के लिये पारस्परिक

---

42. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर
43. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर

बातचीत की प्रक्रिया को और अधिक सुदृढ़ता प्रदान की। इससे दोनों देशों के बीच "लाभकारी द्विपक्षवाद" की अवधारणा को बल मिला।[44]

13 अप्रैल, 1978 को प्रधानमंत्री श्री देसाई ने एक पाकिस्तानी पत्रकार से साक्षात्कार में, पाकिस्तान के साथ कश्मीर सहित सभी समस्याओं की उचित ढंग से सुलझाने के लिये भारत की तत्परता व्यक्त की। सितम्बर, 1978 में नैरोबी में देसाई जिया की बैठक ने भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्धों के वातावरण को और सुधार दिया। अक्टूबर 1978 में भारत तथा पाकिस्तान ने पारस्परिक आधार पर बम्बई तथा कराची में अपने–अपने वाणिज्य दूतावास खोलने के प्रस्ताव को स्वीकार किया। नवम्बर 1978 में भारत की क्रिकेट टीम ने पाकिस्तान का दौरा किया तथा दोनों देशों के बीच संस्कृति तथा खेलकूद सम्बन्धों में प्रगति होनी शुरू हो गई।

इन सभी को हम भारत–पाक सम्बन्धों के सुखद परिवर्तन कह सकते हैं। परन्तु बहुत कुछ करना बाकी रह गया। जनवरी 1980 में जनता सरकार की समय से पूर्व समाप्ति तथा अफगानिस्तान से संकट पर भारत तथा पाकिस्तान के बीच मतभेदों ने 1950 के दशक में दोनों देशों के सम्बन्धों को मोड़ दिया।

28 जून 1972 को प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी तथा राष्ट्रपति भुट्टो के बीच ऐतिहासिक शिखर सम्मेलन सद्भावना तथा समझौते की भावना में शिमला में आरम्भ हुआ।

शिमला शिखर सम्मेलन मेल मिलाप की भावना से आरम्भ हुआ और इसी कारण पाकिस्तानी युद्ध बन्दियों की देश प्रत्यावर्तन के मामले पर प्रारम्भिक मतभेदों, जम्मू कश्मीर सेक्टर में सेनाओं की वापसी तथा बांग्लादेश की मान्यता की समस्या तथा कश्मीर समस्या के बावजूद इसे सफलतापूर्वक निपटाया गया तथा इन्हें शिमला समझौता पर हस्ताक्षर करने में रुकावट नहीं बनने दिया गया। दोनों देशों के सरकारी प्रतिनिधियों की बातचीत तथा प्रधानमंत्री श्रीमती गाँधी तथा राष्ट्रपति भुट्टो के मध्य अन्तिम बातचीत द्वारा 3 जुलाई 1972 को ऐतिहासिक शिमला समझौता सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

---

44. ब्लैक और थाम्पसन : फारेन पॉलिसीज इन ए वर्ड आफ चेन्ज में इश्तियाक हुसैन कुरैशी" पाकिस्तानी विदेश नीति, पृ. 463

शिमला समझौते की धारायें

भारत तथा पाकिस्तान की सरकारें दृढ प्रतिज्ञ हैं कि अब तक जिन झगड़ों के कारण दोनों देशों के सम्बन्धों में कटुता उत्पन्न होती रही उन्हें समाप्त कर दिया जाये तथा मैत्रीपूर्ण तथा सद्भावनापूर्ण सम्बन्धों तथा उपमहाद्वीप में स्थायी शांति की स्थापना के लिये कार्य आरम्भ किया जाये ताकि दोनों देश अब से अपने संसाधनों तथा शक्तियों को अपने लोगों के कल्याण के लिये प्रयुक्त कर सकें।(45)

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये भारत की सरकार तथा पाकिस्तान की सरकार ने निम्नलिखित बातें स्वीकार की –

1. संयुक्त राष्ट्र संघ चार्टर के सिद्धान्तों तथा उद्देश्यों को दोनों देशों के सम्बन्धों का आधार बनाया जायेगा।
2. दोनों देश इस बात के लिये दृढ़ प्रतिज्ञ हैं कि वे अपने मतभेद पारस्परिक बातचीत द्वारा शान्तिपूर्ण रूप से सुलझायेंगे या दोनों के बीच परस्पर स्वीकृति किसी भी अन्य शान्तिपूर्ण साधन द्वारा होगी। दोनों देशों के बीच यदि किसी समस्या का अन्तिम समाधान अभी बाकी है तो दोनों में से कोई भी एक देश एकतरफा ही स्थिति नहीं बदलेगा तथा दोनों ही देश किसी भी ऐसे संगठन संस्था अथवा मुहिम को दबायेंगे जो उनके मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों के मार्ग में अवरोध बनने का प्रयत्न करेगा।
3. समझौते की आधारभूत धारणायें अच्छा पड़ोसीपन तथा दोनों के बीच स्थायी शांति के लिये प्रतिबद्धता, दोनों देश शान्तिपूर्ण सह अस्तित्व, एक दूसरे की भू क्षेत्रीय अखण्डता के प्रति सम्मान, समानता, सम्प्रभुता, आन्तरिक सम्बन्धों में अहस्तक्षेप तथा परस्पर लाभ के आधार पर कार्य करने के लिये प्रतिबद्धता।
4. 20 वर्षों से दोनों देशों के सम्बन्धों में कटुता पैदा करने वाली मूल समस्यायें तथा मामले शांतिपूर्ण साधनों द्वारा सुलझाये जायेंगे।
5. दोनों ही देश एक दूसरे की राष्ट्रीय एकता भू क्षेत्रीय अखण्डता, राजनीतिक स्वतंत्रता तथा प्रभुसत्तात्मक समानता का सदैव सम्मान करेंगे।
6. संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के अनुसार दोनों देश एक दूसरे की भू क्षेत्रीय अखण्डता तथा

45. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट जालन्धर, पृ. 396

राजनीतिक स्वतंत्रता के विरुद्ध किसी प्रकार की शक्ति प्रयोग की धमकी तथा वास्तविक शक्ति प्रयोग से परहेज करेंगे।

7. दोनों देशों की सरकारें एक दूसरे के देश के प्रति शत्रुतापूर्ण प्रचार को रोकने का यथा सम्भव प्रयास करेंगी। दोनों ही देश ऐसी किसी भी सूचना को देने को प्रोत्साहन देंगे जो उनके बीच में मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों को बढ़ावा देगी।

8. धीरे–धीरे दोनों देशों के बीच के सम्बन्धों को सामान्य बनाने तथा क्रमिक रूप से आगे बढ़ाने के लिये यह तय हुआ कि :–

    (i) संचार डाक एवं तार सामुदायिक सीमान्त चौकियों समेत भूमि तथा एक दूसरे के देश के ऊपर से उड़ानों के साथ वायु सम्बन्ध फिर से आरम्भ करने के लिये कदम उठाये जायेंगे।

    (ii) दूसरे देश के नागरिकों के लिये यात्रा सुविधायें देने के लिये उचित कदम उठाये जायेंगे।

    (iii) आर्थिक तथा अन्य सहमति के क्षेत्रों में जहाँ तक सम्भव होगा व्यापार तथा सहयोग की स्थापना की जायेगी।

    (iv) वैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक आदान प्रदान किया जायेगा इस सन्दर्भ में दोनों देशों के प्रतिनिधि समय–समय पर आवश्यक मुद्दों पर बातचीत करने के लिये मिलते रहेंगे।[46]

9. स्थायी शांति की स्थापना के लिये दोनों सरकारों ने यह तय किया कि वे –

    (i) भारतीय तथा पाकिस्तानी सेनायें अन्तर्राष्ट्रीय सीमा तक वापिस बुला ली जायेगी।

    (ii) जम्मू तथा कश्मीर में 17 दिसम्बर 1971 के युद्ध विराम के बाद बनी सीमा नियंत्रण रेखा का दोनों ही देश अपनी–अपनी मान्य स्थितियों का विचार किये बिना आदर करेंगे। दोनों में से कोई भी देश इसे परस्पर मतभेदों तथा कानूनी व्याख्याओं के बावजूद एकतरफा परिवर्तित करने की नहीं सोचेगा। दोनों ही देश यह बात स्वीकार करते हैं कि वे इस रेखा के उल्लंघन हेतु न तो शक्ति प्रयोग की धमकी ही देंगे तथा न ही शक्ति प्रयोग करेंगे।

---

46. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट जालन्धर, पृ. 397

(iii) सेनाओं की वापिसी इस समझौते के लागू होने के तुरन्त बाद ही आरम्भ होगी तथा उसे 30 दिन के अन्दर ही पूर्ण कर लिया जायेगा।

इस समझौते की दोनों ही देश अपनी–अपनी संवैधानिक प्रक्रिया के अनुसार पुष्टि करेंगे तथा उस दिन से लागू माना जायेगा जिस दिन से पुष्टि के दस्तावेजों का आदान–प्रदान होगा।

दोनों ही सरकारें इस बात पर सहमत हैं कि दोनों ही देशों के अध्यक्ष सुविधानुसार भविष्य में मिलेंगे तथा तब तक उनके प्रतिनिधि युद्ध बन्दियों की वापिसी नागरिकों की स्वदेश वापसी जम्मू तथा कश्मीर का अन्तिम हल तथा कूटनीतिक सम्बन्धों को पुनः स्थापित करना जैसे प्रश्नों समेत सम्बन्धों के सामान्यीकरण तथा स्थायी शान्ति की स्थापना के लिये प्रबन्ध करने के लिये मिलेंगे तथा उपाय खोजेंगे एवं इस पर बातचीत करेंगे।[47]

इन धाराओं के साथ जिस सद्भावना तथा मेल मिलाप की भावना से शिमला समझौता हुआ उस हिसाब से हम इसे अत्यन्त महत्व का ऐतिहासिक दस्तावेज कह सकते हैं। यह शीत युद्ध तथा युद्धों की समाप्ति के लिये तथा भारत पाक सम्बन्धों में द्विपक्षवाद, सद्भावना, सहयोग तथा मित्रता के नये युग में भारत पाकिस्तान सम्बन्धों के प्रवेश की ओर सामाजिक तथा स्वस्थ प्रयत्न था। यह तनावपूर्ण सम्बन्धों की समाप्ति की दिशा में निर्भीक तथा मैत्रीपूर्ण और सहयोगात्मक सम्बन्धों की स्थापना की ओर साहसिक प्रश्न था। इस प्रकार इसे भारत–पाक का चार्टर कहा जा सकता है।[48]

यह इसलिये भी प्रशंसनीय बना चूँकि इसके द्वारा भारत तथा पाकिस्तान के बीच सभी समस्याओं तथा झगड़ों को द्विपक्षीय बातचीत या किन्हीं अन्य परस्पर स्वीकृत शान्तिपूर्ण साधनों द्वारा हल करने का प्रावधान था। इसके द्वारा दक्षिण एशिया में स्थायी शान्ति की स्थापना को प्राप्त करने हेतु संरचनात्मक सम्बन्धों के नये युग का आरम्भ किया गया। झगड़ों के निपटारे के लिये शक्ति प्रयोग की भर्त्सना, झगड़ों तथा विरोधों के युग को समाप्त करने के दृढ़ निश्चय, एक प्रकार से "अनाक्रमण सन्धि" के समान ही था। आर्थिक व्यापार तथा सांस्कृतिक सम्बन्धों की पुनः स्थापना की धारा आने वाले वर्षों में सामान्यीकरण लाने के लिये सकारात्मक प्रयत्न था। सेनाओं की वापसी तथा युद्धों में जीते गये क्षेत्रों के आदान प्रदान सम्बन्धी धारा इस प्रकार बनाई गयी

---

47. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट जालन्धर, पृ. 397
48. द हिन्दू, मद्रास, 21 सितम्बर 1975

ताकि सीमाओं पर सैनिकों को मुक्ति प्रदान की जा सके। इसके अतिरिक्त भारत ने बड़ी सफलतापूर्वक आजाद कश्मीर के उन भागों को जो उसने 1971 के युद्ध में जीते थे अपने पास रखने का अपना अधिकार जताया। वास्तविक नियंत्रण रेखा तथा युद्ध विराम ने कश्मीर में संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रतिनिधियों को निष्फल कर दिया। दोनों देशों द्वारा इस समझौतों की पुष्टि की धारा ने इसे सुदृढ़ वैधानिक आधार प्रदान किया तथा इस प्रकार यह ताशकन्द समझौते से निश्चित ही अधिक लाभदायक था।

प्रत्यक्ष द्विपक्षीय बातचीत द्वारा ही किसी निर्णय पर पहुँचना अत्यधिक सन्तोष एवं श्रेय की बात थी जबकि ताशकन्द समझौता सोवियत मध्यस्थता के द्वारा किया गया था वहाँ शिमला समझौता बिना किसी बाहरी दबाब से किया गया था। यह प्रक्रिया अत्यन्त महत्वपूर्ण थी क्योंकि इसके द्वारा ही अपने सम्बन्धों में नये सिरे से शुरूआत करने के लिये दूसरे देशों पर निर्भरता के युग से बाहर आने के लिये दोनों देशों की इच्छा तथा दृढ़ निश्चय का पता चलता है। निश्चय ही शिमला समझौता भारत तथा पाकिस्तान के लोगों की भावना का ही परिणाम था तथा यह श्रीमती इन्दिरा गाँधी और श्री भुट्टो की राजनीतिक परिवक्वता का परिचायक था।

भारत में प्रेस तथा लोगों ने शिमला समझौते की कुछ सीमाओं के बावजूद शांति तथा मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों की ओर महत्वपूर्ण कदम मानकर प्रशंसा की। भारत के प्रायः सभी राजनीतिक दलों ने यह स्वीकार किया कि शिमला समझौता पाकिस्तान के साथ अच्छे पड़ोसियों जैसे सम्बन्धों तथा शान्ति की ओर सकारात्मक कदम है। तथापि जनसंघ के अध्यक्ष श्री अटल बिहारी बाजपेयी ने इसे भारत की ओर से एक 'सौदा' कहा क्योंकि भारत एकमुश्त सौदा नहीं कर सका तथा कुछ एक समस्याओं जैसे कश्मीर से पाकिस्तानी आक्रमणकारियों को खदेड़ना युद्ध द्वारा हुई शान्ति, सरकारी ऋणों का प्रबन्ध, छोड़ी गयी सम्पत्ति तथा बांग्लादेश के शरणार्थियों के बोझ के लिये मुआवजा आदि का हल करने के लिये अपनी क्षेत्रीय लाभदायक स्थिति का लाभ नहीं उठा सका। समाजवादी नेता मि. समर गुहा द्वारा विरोध में एक बात यह भी कही गई कि इसके द्वारा ऐसा कोई आश्वासन नहीं दिया गया कि पाकिस्तान अपने सैनिक व्यय को कम कर देगा। तथापि बहुमत का यह विचार था कि ऐसी आशा करना व्यर्थ है कि भारत तथा पाकिस्तान के सभी झगड़े एक ही झटके में एक ही समझौते द्वारा निपटाये जा सकते हैं। निश्चय ही भारत ने पाकिस्तान के साथ मेल–मिलाप की भावना का प्रदर्शन किया तथा इसने अपनी स्थिति का अनुचित रूप से

लाभ प्राप्त करने का भी प्रयत्न नहीं किया।(49)

पाकिस्तान में भी जनता तथा प्रेस ने शिमला समझौते को एक ऐतिहासिक समझौता कहकर स्वागत किया। ताशकन्द समझौते का जो विपरीत तथा उग्र स्वागत हुआ था उसके विपरीत शिमला समझौते को सकारात्मक तथा परिपक्व समर्थन प्राप्त हुआ। पाकिस्तान टाइम्स ने इसे गतिरोध की समाप्ति कहकर इसका स्वागत किया तथा डान ने इसे दोनों देशों के सम्बन्धों के नये स्वरूप की स्थापना के प्रयत्न कहकर इसकी सराहना की। पाकिस्तान के राजनीतिक दलों ने भी इसी प्रकार की भावनायें प्रकट की थी। तथापि कुछ एक ने इसकी आलोचना इस आधार पर की कि इसमें पाकिस्तानी युद्ध बन्दियों के देश प्रत्यावर्तन के लिये कुछ नहीं दिया गया है।

विश्व प्रेस तथा राजनायिकों के भारत तथा पाकिस्तान द्वारा अपने झगड़ों को पारस्परिक बातचीत के आधार पर सुलझाने के लिये दोनों द्वारा किये गये इस साहसिक प्रयत्न की सराहना की। सोवियत संघ के राष्ट्रपति ने भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्धों को सामान्य बनाने की ओर इसे एक महत्वपूर्ण कदम बताया। अमरीका तथा चीन ने भारत–पाक समस्याओं को शान्तिपूर्ण ढंग से सुलझाने के भुट्टो के प्रयत्नों की सराहना तथा प्रशंसा की। संयुक्त राष्ट्र के महासचिव मि. कुर्ट वालडेल ने इस समझौते को उपमहाद्वीप में लम्बी तथा कठिन राह पर शान्ति की ओर प्रथम कदम बताया। बांग्लादेश के विदेशमंत्री श्री अब्दुल समद ने इसे अधिक सफलता प्राप्त करने के लिये सफलता कहा। विश्व प्रेस ने भी इस समझौते का स्वागत करते हुये कुछ इसी प्रकार के उद्गार व्यक्त किये। शिमला सम्मेलन को मैत्रीपूर्ण कूटनीति का आदर्श कहा गया तथा इस समझौते को दक्षिण एशियाई उपमहाद्वीप में शान्ति की ओर आवश्यक कदम बताया।

शिमला समझौते में जिन मामलों का समाधान नहीं हो सका वे थे

(i) पाकिस्तानी युद्ध बन्दियों का देश प्रत्यावर्तन

(ii) कश्मीर मुद्दे का अन्तिम समाधान

(iii) प्रत्यक्ष अनाक्रमण समझौता

(iv) भारत–पाक सम्बन्धों को चलाने के लिये संयुक्त मशीनरी

---

49. Amitabh Mattoo : India, Pakistan and the Kashmir Issue, World focus monthly discussion journal, Oct. Nov. Dec. 2001

(v) दक्षिण एशिया में शस्त्र दौड़ पर रोक।

परन्तु शिमला भावना ने दोनों देशों के लिये यह सम्भव बना दिया कि वे अपनी समस्याओं का समाधान सीधी बातचीत से सफलतापूर्वक कर सके तथा इसी के परिणामस्वरूप दिल्ली समझौता हुआ तथा 1974 में त्रिदलीय समझौता हुआ।

लाहौर बस यात्रा और कश्मीर समस्या

भारत पाकिस्तान सम्बन्धों को सुधारने की दिशा में एक नई पहल बस कूटनीति के द्वारा आरम्भ हुई, जब 19 फरवरी 1999 को भारत के प्रधानमंत्री श्री बाजपेयी ने बाघा बार्डर के सड़क मार्ग से पाकिस्तान की यात्रा की तथा प्रधानमंत्री नवाज शरीफ से मुलाकात की। श्री बाजपेयी के साथ सरकारी नेताओं/अधिकारियों के साथ 22 प्रसिद्ध व्यक्तियों का समूह भी पाकिस्तान गया। उत्तर पोखरन–चगाई काल में दोनों देशों ने इस दृढ़ कदम के द्वारा आपसी सम्बन्धों को एक अच्छी तथा उच्च सकारात्मक तथा प्रगतिशील दिशा और स्वस्थता देने का प्रयास किया। एक अच्छे वातावरण में वार्तालापों तथा बैठकों के बाद दोनों देशों ने तीन महत्वपूर्ण दस्तावेजों–लाहौर घोषणा, संयुक्त वक्तव्य तथा आपसी समझ के यादपत्र (Lahore Declaration, The Joint Statement and Memorandum of Understanding) पर हस्ताक्षर किये तथा द्विपक्षीय सम्बन्धों को एक अच्छा प्रारम्भ और आधार देने का प्रयास किया। दोनों देशों के नेताओं ने आपसी सम्बन्धों, शांति तथा सुरक्षा के मुद्दे, परमाणु विषय से सम्बन्धित मुद्दों पर बातचीत की तथा सहमति बनाई कि क्षेत्र में शस्त्र दौड़ न चलाई जाये तथा परमाणु तथा परम्परागत विश्वास निर्माण पगों को उठाया जाये ताकि परमाणु क्षेत्र में संयम तथा स्थायित्व पैदा किया जा सके।

भारत और पाकिस्तान द्वारा जिन तीन दस्तावेजों पर प्रधानमंत्री श्री बाजपेई की लाहौर यात्रा के दौरान हस्ताक्षर किये गये उनकी समीक्षा करने पर यह बात स्पष्ट दिखाई दी (विशेषकर लाहौर) कि दोनों देशों ने जम्मू तथा कश्मीर सहित आपसी सभी समस्याओं का समाधान करने के लिये प्रयासों को दृढ़ तथा तेज करने तथा एक दूसरे के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने के निर्णय लिये। दोनों ने यह माना कि परमाणु शस्त्रों के दुर्घटनावश तथा अनाधिकृत प्रयोग पर रोक लगाने के लिये तत्काल कदम उठाये जायेंगे तथा उन धारणाओं और सिद्धान्तों पर विचार किया जायेगा जिनका उद्देश्य होगा विरोध को रोकना तथा परमाणु और परम्परागत क्षेत्रों में विश्वास उत्पन्न करने वाले विस्तृत उपायों को अपनाना। दोनों देशों ने

शिमला समझौते के प्रावधानों तथा भावना को लागू करने के निश्चय को, पूर्ण सार्वभौमिक परमाणु निःशस्त्रीकरण तथा परमाणु अप्रसार के उद्देश्यों की ओर प्रतिबद्धता की तथा सार्क के उद्देश्यों तथा लक्ष्यों के प्रति वचनबद्धता को दोहराया। दोनों पक्षों द्वारा सभी रूपों में आतंकवाद की आलोचना की गई तथा इस बुराई की समाप्ति के लिये संघर्ष करने के निश्चय को प्रकट किया।

प्रधानमंत्री श्री बाजपेयी की पाकिस्तान यात्रा के बाद जो संयुक्त वक्तव्य जारी किया गया उसमें सभी तथ्यों को लिखा गया तथा यह कहा गया कि समय–समय पर दोनों देशों के विदेशमंत्री बैठक किया करेंगे तथा आपसी रुचि के सभी मुद्दे पर चर्चा करेंगे। दोनों देश विश्व व्यापार संगठन से सम्बन्धित मुद्दों पर परामर्श करेंगे, बीजा तथा यात्रा व्यवस्थाओं को उदार बनाने पर विचार विमर्श किया जायेगा, सूचना टेक्नालोजी, विशेषकर Y2K समस्या पर नियंत्रण पाने के लिये सहयोग के क्षेत्रों का निर्धारण करने के लिये सहयोग किया जायेगा तथा मंत्री स्तर पर एक दो सदस्यीय समिति को नियुक्त किया जायेगा ताकि हिरासत में लिये गये नागरिकों तथा गुमशुदा युद्धबन्दियों से सम्बन्धित मानववादी मुद्दों का परीक्षण किया जा सके।[(50)]

इस यात्रा के दौरान भारत तथा पाकिस्तान के विदेश सचिव द्वारा जिस समझ के यादपत्र पर हस्ताक्षर किये उसकी मुख्य विशेषतायें निम्न हैं –

1. सुरक्षा धाराओं तथा परमाणु सिद्धान्तों पर दोनों पक्षों द्वारा द्विपक्षीय विचार विमर्श किया जायेगा ताकि परमाणु तथा परम्परागत क्षेत्रों में विश्वास निर्माण के लिये उपायों को विकसित किया जाये तथा विरोध से दूर रहा जाये।
2. दोनों पक्ष मिसाइल उड्डयन परीक्षणों की पूर्व सूचना एक दूसरे को देंगे।
3. अपने–अपने नियंत्रण आधीन परमाणु शस्त्रों के दुर्घटनावश या गैर अधिकृत प्रयोग के खतरे को कम करने के लिये अपने–अपने राष्ट्रीय स्तर पर कदम उठायेंगे।
4. बहुपक्षीय मंच पर हो रहे वार्तालाप के सन्दर्भ में दोनों देश सुरक्षा निःशस्त्रीकरण तथा परमाणु अप्रसार के मुद्दों पर द्विपक्षी विचार विमर्श करेंगे।

इन तीनों दस्तावेजों तथा श्री बाजपेयी की यात्रा के दौरान प्रदर्शित व्यवहार में यह आशा बँधाई कि आने वाले समय में भारत–पाकिस्तान सम्बन्धों में एक विशाल तथा सकारात्मक प्रगति होगी तथा दोनों देशों के लोग आपसी विश्वास तथा सहयोग के नये युग का प्रारम्भ होते

---

50. डॉ. प्रभात कुमार सिंह : लाहौर यात्रा से अभिप्राय, परीक्षा मंथन, Vol. III

देखेंगे। परन्तु ऐसा हुआ नहीं अथवा ऐसा नहीं हो सका क्योंकि पाकिस्तान ने लाहौर सद्भावना की पीठ में छुरा घोंपने की प्रक्रिया पहले ही आरम्भ कर रखी थी। इसने जम्मू तथा कश्मीर में नियंत्रण रेखा के भारतीय भाग पर अपने सैनिकों तथा घुसपैठियों द्वारा अवैध कब्जा करने की योजना को व्यवहारिक रूप देना आरम्भ कर रखा था तथा इस कार्यवाही का परिणाम दोनों देशों के मध्य कारगिल युद्ध (जून–जुलाई 1999) के रूप में सामने आया।

लाहौर से कारगिल युद्ध तक

श्री बाजपेयी की लाहौर यात्रा के कुछ दिनों तक 19 मार्च 1999 को दोनों देशों के विदेश मंत्रियों ने लाहौर घोषणा को लागू करने के लिये द्विपक्षीय प्रयासों का एक दो मास का कार्यक्रम घोषित किया। स्वीकृत योजना के अन्तर्गत यह कहा गया कि दोनों देशों के विदेश सचिव कश्मीर तथा शान्ति और सुरक्षा से सम्बन्धित मुद्दों पर वार्तालाप के लिये नई दिल्ली में एक बैठक करेंगे; दोनों देशों के अधिकारी सियाचिन, सरक्रीक, आर्थिक सहयोग सांस्कृतिक आदान प्रदान तथा लोगों के साथ सम्बन्धों के मुद्दों पर वार्तालाप के लिये इस्लामाबाद में बैठक करेंगे तथा विशेषज्ञ समूह परमाणु दुर्घटनाओं के खतरों को कम करने तथा लोगों की सुरक्षा के लिये उपयुक्त यंत्रों की स्थापना के लिये आवश्यक विश्वास निर्माण उपायों को निश्चित करने की प्रक्रिया में लग जायेंगे। तीनों दस्तावेजों में शामिल बिन्दुओं पर कार्यवाही करने के सम्बन्ध में एक छः सूत्रीय योजना को निर्मित एवं घोषित किया गया।

25 मार्च 1999 को भारत ने पाकिस्तान नागरिकों की नौ–श्रेणियों जजों, ए.जी., सालिसीटर जनरल, सुप्रीमकोर्ट की बार एसोसियेशन के प्रधान, समाचार पत्रों के मुख्य सम्पादकों, क्रिकेट तथा हाकी की राष्ट्रीय टीमों के सदस्य, संसद सदस्यों, सीनेटरों, उप कुलपतियों, पाकिस्तान के संघीय सरकार सचिवों तथा इन श्रेणी के सदस्यों की पत्नियों, आश्रित वृद्धों तथा अविवाहित पुत्रियों के लिये वीजा तथा यात्रा प्रतिबन्धों को सरल तथा सुविधापूर्ण बना दिया। 16 मार्च 1999 को लाहौर से पहली बस ने भारत में प्रवेश किया तथा दोनों देशों में बस यात्रा सेवा आरम्भ हो गई।[51]

22 मार्च 1999 को पाकिस्तान ने 14 भारतीय कैदियों तथा भारत ने 46 पाकिस्तान कैदियों को रिहा किया और वह अपने देश लौट गये। 10 अप्रैल 1999 को भारत पाकिस्तान साझे

---

51. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 327

वाणिज्य चैम्बर की स्थापना पाकिस्तान के चेम्बर आफ कामर्स तथा इण्डस्ट्री और फैडरेशन आफ इण्डियन चेम्बर आफ कामर्स ने की तथा इसका उद्घाटन नई दिल्ली में हुआ।

यह सब कुछ लाहौर भावना के अधीन किया गया। परन्तु शीघ्र ही पाकिस्तान के द्वारा की गई कारगिल घुसपैठ तथा आक्रामक कार्यवाही ने सारा खेल बिगाड़ दिया तथा भारतीय एवं पाकिस्तानी सेनाओं में कारगिल युद्ध प्रारम्भ हो गया।

कारगिल युद्ध

मई 1999 में भारत तथा पाकिस्तान के सम्बन्ध उस समय अत्यन्त बिगड़ गये जब यहं पता चला कि पाकिस्तानी सेना के संरक्षण तथा कार्यवाही के अधीन पाकिस्तान घुसपैठियों ने भारत के कारगिल क्षेत्र की कुछ पहाड़ी चोटियों पर अवैध रूप में कब्जा करके सैनिक चौकी स्थापित कर ली थीं। कश्मीर में नियंत्रण रेखा के भारतीय क्षेत्र में पाकिस्तान ने अवैध कब्जा जमाकर अतिक्रमण किया था तथा लाहौर घोषणा की आड़ लेकर कश्मीर में अपनी स्थिति दृढ़ करने तथा भारत पर सैनिक आतंकवादी दबाव बढ़ाने के लिये पाकिस्तान ने यह कार्यवाही की थी। भारतीय सरकार ने स्वाभाविक रूप में अपनी सेना को यह आदेश दिया कि घुसपैठ को समाप्त करके अपने क्षेत्र को स्वतंत्र करवाकर नियंत्रण रेखा की मौलिक स्थिति की बहाली की जाये।

मई 1999 में भारतीय सेना ने सैनिक कार्यवाही प्रारम्भ की तथा कुछ समय के भीतर ही नियंत्रण रेखा के 1–3 किलोमीटर के समीप पहुँच गई। भारतीय सेना ने इस कार्यवाही में हवाई हमलों का भी प्रयोग किया। सैनिक कार्यवाही ने कारगिल युद्ध का रूप ले लिया तथा भारत–पाक युद्ध की सम्भावना पैदा हो गई।(52)

भारत ने यह माँग की कि पाकिस्तान अपने घुसपैठियों, जिन्हें पाकिस्तानी सेना का पूर्ण सहयोग प्राप्त था तथा जो वास्तव में एक अलग वर्दी में पाकिस्तानी सैनिक ही थे, को वापिस बुलाये तथा नियंत्रण रेखा का सम्मान पुनः स्थापित करे। पाकिस्तान ने इस बात से इन्कार किया कि उसके सैनिक इस कार्यवाही में शामिल हो उसने घुसपैठियों को मुजाहिदीन बतलाया और यह भी कहा कि नियंत्रण रेखा न तो निश्चित थी और न ही जमीन पर निर्धारित थी। इसका अस्तित्व केवल कागज पर ही था। इस प्रकार पाकिस्तान ने नियंत्रण रेखा के अस्तित्व को ही

---

52. डॉ. कृष्ण कुमार रत्तू : कारगिल संघर्ष, नियंत्रण रेखा के आर–पार, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर पृ. 27

स्वीकार करने से इन्कार कर दिया और ऐसा करते समय यह भूल गया कि शिमला समझौते 1992 के समय नियंत्रण रेखा का निर्धारण भी हुआ था तथा इसे मान्यता भी दी गई थी। वास्तव में पाकिस्तान की कारगिल अतिक्रमण की खेल योजना निम्नलिखित थी –

1. कारगिल में युद्ध स्थिति पैदा करके कश्मीर मुद्दे का अन्तर्राष्ट्रीयकरण करना तथा नियंत्रण रेखा को चुनौती देना।
2. दूसरें देशों को इस झगड़े में शामिल करना तथा भारत पर दबाव बनाना।
3. लाहौर घोषणा को आड़ के रूप में प्रयोग करके अपने आपको एक शान्तिप्रिय देश के रूप में प्रस्तुत करना तथा भारत को कश्मीर मुद्दे पर अड़ियल रवैया अपनाने का दोषी करार देना।
4. भारत के साथ मुद्दे पर द्विपक्षीय बातचीत की पेशकश करके अपने आप को शान्तिप्रिय तथा कूटनीतिक प्रयासों में विश्वास रखने वाले देश के रूप में पेश करना।

11 जून 1999 को भारत सरकार ने पाकिस्तान के सेना प्रमुख परवेज मुशर्रफ तथा उसके जनरल स्टाफ प्रमुख ले. जनरल मोहम्मद अजीर की बातचीत (जो 26 तथा 29 मई 1999 को टेलीफोन पर हुई थी) का ब्यौरा प्रकाशित करके यह स्पष्ट सिद्ध कर दिया कि कारगिल में घुसपैठ तथा अतिक्रमण में प्रत्यक्ष रूप से पाकिस्तानी सेना शामिल थी तथा इसका उद्देश्य भारतीय कारगिल क्षेत्र की उच्च चोटियों पर कब्जा करके नियंत्रण रेखा को पाकिस्तान के पक्ष में परिवर्तित कर देना था।[53]

12 जून 1999 को पाकिस्तान के विदेशमंत्री श्री सरताज अजीज, चीन के दौरा करने के बाद भारत पहुँचे और भारत के विदेशमंत्री श्री जसवन्त सिंह से वार्तालाप किया। परन्तु इससे कोई प्रगति न हो सकी जैसा कि आशा थी। भारत और पाकिस्तान ने अपनी–अपनी नीतियों को स्पष्ट घोषित किया तथा कारगिल युद्ध पहले की तरह चलता रहा।

भारत ने एक ओर तो अपनी सेनाओं को आदेश दिये कि वह अपना क्षेत्र अतिक्रमण करने वालों से खाली करवाकर नियंत्रण रेखा के स्वरूप को पहले की ही तरह बहाल करें, तो दूसरी ओर विशेष कूटनीति प्रयास प्रारम्भ किये ताकि पाकिस्तानी चाल, धोखे तथा अतिक्रमण को सबके सामने लाया जा सके। विदेशमंत्री श्री जसवन्त सिंह ने चीन समेत कई देशों के दौरे किये

---

53. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 328

तथा भारतीय नीति तथा कार्यवाही के बारे में उन्हें सूचना दी तथा पाकिस्तानी अवैध कार्यवाही के सम्बन्ध में तथ्यों की जानकारी दी। अमरीका, रूस, जर्मनी, जापान, इंग्लैण्ड, जी–7 के अन्य देशों, यूरोपीय संघ के अनेक देशों अर्थात अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के सभी प्रमुख कर्त्ताओं ने यह माना कि पाकिस्तान को नियंत्रण रेखा का सम्मान करना चाहिये तथा उसकी ओर से हो रहे घुसपैठ तथा अतिक्रमण को रोका जाना चाहिये। भारतीय प्रधानमंत्री ने भी 20 जून 1999 को स्पष्ट रूप से घोषणा की कि जब तक अतिक्रमण करने वालों को भारतीय क्षेत्र से खदेड़ नहीं दिया जाता तब तक पाकिस्तान के साथ कोई बातचीत नहीं की जायेगी। भारतीय सेना द्वारा चलाया जा रहा विजय अभियान अपने लक्ष्य की ओर निरन्तर प्रगति करता करता अब तक काफी अच्छी स्थिति में पहुँच चुका था तथा कारगिल, बटालिक तथा द्रास के बहुत से क्षेत्रों पर फिर से भारतीय नियंत्रण स्थापित हो गया था। 9 जुलाई 1999 को भारतीय सैनिक कार्यवाही के बढ़ते दबाव तथा अमरीका द्वारा पाकिस्तान पर डाले गये कूटनीतिक दबाव के कारण पाकिस्तान के सत्ताधारियों ने घुसपैठियों को वापिस बुलाने का निर्णय लिया। 11 जुलाई 1999 के दिन भारत तथा पाकिस्तान के सैनिक कार्यवाहियों के निर्देशक जनरलों के मध्य अटारी सीमा पर बैठक हुई तथा सैनिक कार्यवाही को बन्द करने तथा पाकिस्तान द्वारा घुसपैठियों को निश्चित समय सीमा के अन्दर वापस बुलाने के निर्णय पर सहमति हुई। शीघ्र ही इस निर्णय को व्यवहारिक रूप भी दे दिया जाने लगा। परन्तु कारगिल, द्रास बटालिक क्षेत्रों में छिटपुट गोलाबारी होती ही रही।(54)

कारगिल युद्ध में पाकिस्तान को सैनिक तथा कूटनीतिक पराजय का मुँह देखना पड़ा। भारतीय सेना का विजय अभियान सफल रहा। भारतीय कूटनीति भी विश्व स्तर पर पाकिस्तानी साजिश एवं कूटनीतियों को सामने लाने में सफल रही।

लगभग सभी देशों ने पाकिस्तान को ही कारगिल युद्ध तथा लाहौर भावना को गम्भीर हानि पहुँचाने का दोषी माना। कारगिल युद्ध ने लाहौर प्रक्रिया को एक उलट दिशा देकर इसे समाप्त ही कर दिया तथा इस सबके लिये स्पष्ट तौर पर पाकिस्तान ही दोषी था।

भारत पाकिस्तान सम्बन्ध तनावपूर्ण हो गये तथा इनमें एक भारी रुकावट पैदा हो गई। जम्मू तथा कश्मीर में नियंत्रण रेखा पर वातावरण गर्म ही बना रहा। भारत ने स्पष्ट रूप में यह घोषणा की कि जब तक पाकिस्तान सीमा पार आतंकवाद को समर्थन, सहयोग तथा संरक्षण

---

54. डॉ. अम्बरीश खरे : कारगिल घुसपैठ एवं भारतीय सेना, यूथ कम्पटीशन टाइम, अक्टूबर 1999, पृ. 176

देना बन्द नहीं करता तब तक उसके साथ कोई भी वार्तालाप नहीं किया जा सकता।

अगस्त 1999 में एक और घटना ने भारत और पाकिस्ताान सम्बन्धों के वातावरण को और खराब कर दिया, जब पाकिस्तान के नौ–सैनिक टोही विमान ने रनकच्छ में भारतीय भू क्षेत्रीय प्रभुसत्ता का उल्लंघन किया तो भारतीय वायुसेना ने इस विमान को मार गिराया। इसके फलस्वरूप पाकिस्तान ने भारत को गम्भीर परिणाम भुगतने की धमकी दी तथा संयुक्त राष्ट्र तथां इस्लामिक देशों के संगठन से भारत की निन्दा तथा दण्ड देने की बात की। भारत ने इस कार्यवाही को अपनी भू क्षेत्रीय सुरक्षा के लिये की गई एक वैध कार्यवाही बतलाया। अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय ने भारत तथा पाकिस्तान को संयम बरतने को कहा। अमरीका तथा चीन ने दोनों देशों को द्विपक्षीय वार्तालाप तथा लाहौर भावना की पुनर्स्थापना के लिये कहा ताकि बिगड़ रहे सम्बन्धों को और बिगड़ने से रोका जा सके।

कारगिल युद्ध में पराजय के बाद पाकिस्तान की आन्तरिक राजनीति में सरकार तथा सैनिक जनरलों में विवाद बढ़ गया क्योंकि प्रत्येक ने एक दूसरे को कारगिल कार्यवाही का दोषी बतलाना आरम्भ कर दिया। फिर इस्लामिक कट्टरपंथियों की भूमिका भी और उग्र हो गई। प्रधानमंत्री नवाज शरीफ तथा सेना प्रमुख जनरल परवेज मुशर्रफ में गतिरोध बन गया। जब प्रधानमंत्री ने जनरल मुशर्रफ को पद से अलग करने का आदेश जारी किया तो जनरल ने प्रधानमंत्री नवाज शरीफ को सत्ता से हटाकर सत्ता अपने हाथ में ले ली तथा पाकिस्तान में लोकतंत्र की हत्या करके 12 अक्टूबर 1999 को सैनिक तानाशाही की स्थापना हो गई। इसके विपरीत भारत में 13 अक्टूबर 1999 के दिन 13वीं लोकसभा के विधिवत चुनावों के बाद एक लोकतंत्रीय सरकार प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी के नेतृत्व में राष्ट्रीय गठबन्धन की सरकार की स्थापना हुई जिसने भारत के सफल तथा विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र होने का प्रमाण दिया।

पाकिस्तानी राजनीति में सैनिक शासन की स्थापना से भारत पाकिस्तान के मध्य द्विपक्षीय वार्तालाप होने की आशा को बिल्कुल ही कमजोर कर दिया। भारत ने सेना द्वारा शासित पाकिस्तान के साथ सम्बन्धों के क्षेत्र में धीरे–धीरे और सावधानीपूर्वक चलने का निर्णय लिया। यद्यपि भारत ने पाकिस्तान में उत्पन्न सैनिक शासन को उसका एक आन्तरिक मामला माना तथापि भारत ने यह कामना की कि पाकिस्तान में लोकतंत्र बहाल होना चाहिये। इस नये वातावरण में भारत–पाकिस्तान सम्बन्ध पहले के समान तनावपूर्ण तथा दिशाहीन बने रहे।

दिसम्बर 1999 में इस्लामिक आतंकवादियों (जिनका सम्बन्ध निश्चित रूप से पाकिस्तान

के साथ था) ने भारतीय हवाई सेवा के एक विमान 9C-814 का उस समय अपहरण कर लिया जब यह विमान काठमाण्डू (नेपाल) से भारत आ रहा था। अपहरणकर्त्ता विमान को कन्धार (अफगानिस्तान) ले गये। भारत को भारतीय जेलों में कैद कुछ आतंकवादियों को रिहा करके इस विमान तथा इसके 189 यात्रियों को अपहरणकर्त्ताओं से मुक्त करवाना पड़ा। इस सारे प्रकरण में पाकिस्तान के हाथ स्पष्ट रूप से संलिप्त थे और ये तथ्य बिल्कुल स्पष्ट हो गये जब सभी अपहर्त्ता रिहा किये गये तो आतंकवादी पाकिस्तान पहुँच गये तथा उनके विरुद्ध पाकिस्तान ने कोई कार्यवाही नहीं की बल्कि उनको पूर्ण संरक्षण और सुरक्षा भी दी। इस प्रकरण ने भारत–पाकिस्तान सम्बन्धों को और भी ठंडा कर दिया।

पाकिस्तान के सैनिक शासक जनरल मुशर्रफ ने भारत के साथ द्विपक्षीय वार्तालाप आरम्भ किये जाने की माँग और वकालत तो की परन्तु पाकिस्तान द्वारा किये जाने वाले आतंकवाद तथा इस्लामिक कट्टरपंथियों को समर्थन तथा सहायता को समाप्त करने की बात नहीं की। कश्मीर को हथियाना उनकी नीति है तथा इस्लामिक कट्टरवाद तथा आतंकवाद इस नीति के लागू करने के उपकरण हैं।

पाकिस्तान लगातार भारत विरोधी देश बना रहा है और आज भी ऐसा ही है। यह अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद को संगठित, प्रशिक्षित तथा सहायता देने का एक केन्द्र भी बना हुआ है।

भारत की यह दृढ़ नीति है कि जब तक पाकिस्तान आतंकवाद को समर्थन (संरक्षण व सहायता) देना बन्द नहीं करता तब तक इसके साथ कोई भी वार्तालाप नहीं किया जा सकता। भारत यह भी चाहता है कि सैनिक शासनों के अधीन, पाकिस्तान सहित सभी देशों में लोकतंत्रीय शासन व्यवस्थाओं की पुनः स्थापना होनी चाहिये क्योंकि सैनिक तानाशाह सदैव सैन्यवाद तथा उग्र राष्ट्रवाद एवं कट्टरवाद को उपकरण बनाकर शासन करते हैं तथा लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था वाले देश ही अपने सम्बन्धों को शान्ति एंव सुरक्षा के हितों में अच्छा मोड़ दे सकते हैं। भारत यह भी चाहता है कि सैनिक शासन के अधीन देशों को गुट निरपेक्ष तथा राष्ट्र मण्डल जैसे संगठनों से तब तक निलम्बित रखा जाना चाहिये जब तक वे फिर लोकतंत्रीय व्यवस्था को न अपना लें।[55] अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद, पार–सीमा आतंकवाद तथा नशीले पदार्थों का तस्करी पर आधारित आतंकवाद की समाप्ति के लिये सभी स्तरों विश्व स्तर, क्षेत्रीय स्तर तथा द्विपक्षीय स्तर

---

55. डॉ. पंकज कुमार गुप्ता : कश्मीर में आतंकवाद एवं पाकिस्तान, परीक्षा मंथन, Vol. IV, पृ. 141

पर सहयोग और कार्यवाही करना भारतीय विदेशनीति का एक अभिन्न भाग है। भारत पाकिस्तान को आतंकवाद का समर्थन, सहायता और संरक्षण करने वाला देश मानता है। विश्व के कई देशों रूस, सूडान, केन्द्रीय एशिया, दक्षिण एशिया आदि क्षेत्रों में सक्रिय आतंकवादियों के पाकिस्तान के साथ सम्बन्ध अब सबको विदित हो चुके हैं तथा विश्व के सभी देशों को इसे ऐसा करने से रोकने के लिये सहयोग की नीति पर चल रहा है। भारतीय कूटनीति पाकिस्तान की नीतियों के हानिकारक तथा नकारात्मक पहलुओं को विश्व के सामने लाने में सक्रिय है। पाकिस्तान भी भारत विरोधी रुख अपनाये हुये है तथा चीन एवं उत्तरी कोरिया से इसके सम्बन्ध भारत विरोधी आवश्यकता से निर्धारित हैं। यह भारत में सीमापार आतंकवाद का स्रोत है तथा भारत पर हर प्रकार का दबाव बनाने का प्रयास करना इसकी नीति की एक प्रमुख विशेषता है।

भारत पाकिस्तान सम्बन्धों का वातावरण अभी भी काफी खराब ही बना हुआ है। दोनों में अच्छे सम्बन्धों की स्थापना होने के कारण काफी धूमिल ही दिखाई दे रहे हैं। दोनों देशों के लोग तो आपस में मित्रता, सहयोग तथा आपसी प्रेम के साथ रहना चाहते हैं, परन्तु राजनीतिक तत्व, विशेष रूप में पाकिस्तान में विद्यमान सैनिक सत्ताधारी, धार्मिक कट्टरवादी तथा आतंकवादी तत्वों की विद्यमानता, दोनों देशों के सम्बन्धों के वातावरण पर सदैव हावी रहते हैं। फिर कश्मीर के मुद्दे पर पाकिस्तान में विद्यमान निरन्तर उन्माद ने भी भारत पाकिस्तान सम्बन्धों को सीमित तथा तनावपूर्ण रखा है। आज भी स्थिति ऐसी ही है।

लाहौर घोषणा

प्रधानमंत्री श्री बाजपेयी की बस यात्रा के दौरान यह घोषणा 21 फरवरी 1999 को दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों ने हस्ताक्षरबद्ध की। इसमें लिखा गया कि दोनों देशों में शांति तथा स्थायित्व तथा अपने लोगों की उन्नति तथा समृद्धि के लिये एक साझे दृष्टिकोण के आधार पर भारत तथा पाकिस्तान के प्रधानमंत्रियों को यह विश्वास था कि स्थायी शान्ति तथा मित्रतापूर्ण सहयोगी एवं समरूप सम्बन्ध विकसित करने के द्वारा ही दोनों देशों के प्रमुख हितों की रक्षा की जा सकती थी तथा उन्हें अच्छे भविष्य की ओर अपनी शक्ति लगाने के योग्य बनाया जा सकता था।

दोनों नेताओं ने यह स्वीकार किया कि दोनों देशों में सुरक्षा वातावरण के परमाणु पहलू ने उनके दोनों देशों में विरोध को दूर करने के उत्तरदायित्व को बढ़ा दिया है।

संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के सिद्धान्तों तथा उद्देश्यों के प्रति तथा सार्वभौमिक रूप में स्वीकृत शान्तिपूर्ण सह–अस्तित्व के सिद्धान्तों के प्रति प्रतिबद्धता के साथ दोनों देश यह निश्चय दोहराते हैं कि शिमला समझौतों को इसके अक्षरों तथा भावना के साथ पूर्ण रूप में दृढ़ता से लागू करेंगे। दोनों देश सार्वभौमिक परमाणु निःशस्त्रीकरण तथा परमाणु अप्रसार के उद्देश्य को स्वीकार करते हैं तथा दोनों आपसी विश्वास निर्माण करने वाले कदमों, जो कि सुरक्षा वातावरण को सुधारने के लिये आवश्यक है, की महत्ता को स्वीकार करते हैं। अपने 23 सितम्बर 1998 के समझौते को याद करते हुये कि शान्ति और सुरक्षा दोनों देशों के सर्वोच्च हित में है तथा जम्मू और कश्मीर के साथ सभी आपसी मुद्दों का सुलझाव आवश्यक है तथा इसलिये यह स्वीकार किया जाता है कि दोनों देशों की सरकारें जम्मू तथा कश्मीर के मुद्दों सहित सभी मुद्दों के समाधान के लिये प्रयासों को तेज और गम्भीर करेंगे, एक दूसरे के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेंगे, अपनी द्विपक्षीय वार्तालाप की समुचित प्रक्रिया को तेज करेंगे, परमाणु शस्त्रों के दुर्घटनावश तथा गैर अधिकृत प्रयोग के खतरे को कम करने के लिये एकदम कदम उठायेंगे तथा परमाणु एवं परम्परागत क्षेत्रों में विरोध का निवारण करने तथा विश्वास पैदा करने के लिये विभिन्न धारणाओं तथा सिद्धान्तों पर विचार–विमर्श करेंगे। दोनों देश सार्क के प्रति प्रतिबद्धता प्रकट करते हैं तथा इसके उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये इकट्ठे प्रयत्न करने की बात को फिर स्वीकार करते हैं ताकि दक्षिण एशिया के लोग तेज आर्थिक विकास सामाजिक प्रगति तथा सांस्कृतिक विकास के द्वारा अपने जीवन स्तर को सुधार सकें; सभी प्रकार के आतंकवाद की निन्दा करते हैं तथा इनका सामना करने का निश्चय प्रकट करते हैं तथा मानव अधिकारों और भौतिक स्वतंत्रताओं की रक्षा करेंगे तथा उनको बढ़ावा देंगे।

इस घोषणा में दोनों देशों ने अपनी सम्बन्धों के विकास के उचित और सकारात्मक विकास के लिये दिशा–निर्देश तथा स्वीकृत सिद्धान्त अपनाने का प्रयास किया तथा नये परमाणु स्तर को देखते हुये परमाणु दुर्घटनाओं तथा परमाणु शस्त्रों के अनाधिकृत प्रयोगों को रोकने का निर्णय लिया। यह एक महत्वपूर्ण निर्णय था तथा लाहौर घोषणा ने भारत–पाक सम्बन्धों को एक नया आधार देने का प्रयास किया।

संयुक्त वक्तव्य

प्रधानमंत्री श्री बाजपेयी की दो दिवसीय पाकिस्तान यात्रा के अन्त में 21 फरवरी 1999

को एक संयुक्त वक्तव्य जारी किया गया जिसमें कहा गया कि दोनों नेताओं ने द्विपक्षीय सम्बन्धों, सार्क के अन्तर्गत क्षेत्रीय सहयोग तथा अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दों पर बातचीत के द्वारा निर्णय लिया कि–

(अ) दोनों देशों के विदेशमंत्री समय–समय पर मिलेंगे तथा परमाणु मुद्दों सहित महत्वपूर्ण मुद्दों पर विचार करेंगे।

(ब) दोनों देश WTO से सम्बन्धित मुद्दों पर सलाह करेंगे ताकि दोनों की स्थितियों में तालमेल रहे।

(स) सूचना टेक्नालोजी, विशेषकर Y2K समस्या का सामना करने के क्षेत्र में सहयोग के क्षेत्रों को दोनों देश निश्चित करेंगे।

(द) वीजा तथा यातायात सम्बन्धी व्यवस्था को और उदार बनाने के लिये दोनों देश सलाह मशविरा करेंगे।

(य) लापता युद्धबन्दियों तथा अन्य हिरासत में रह रहे नागरिकों के मानवतावादी मुद्दों के सम्बन्ध में दोनों देश दो सदस्यीय समिति का गठन मंत्री स्तर पर करेंगे। दोनों नेताओं ने लाहौर और नई दिल्ली के मध्य बस सेवा शुरू करने, मछुआरों तथा अन्य नागरिक बन्दियों की रिहाई तथा खेल क्षेत्र में पुनः स्थापित सम्बन्धों पर सन्तोष व्यक्त किया, दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों के निर्देशन पर दोनों के विदेश सचिवों ने एक स्मरण पत्र पर 21 फरवरी 1999 को हस्ताक्षर किये जिसमें दोनों देशों द्वारा शान्ति और व्यवस्था के वातावरण को उत्साहित करने के लिये आवश्यक कदमों को निश्चित किया गया तथा दोनों नेताओं ने लाहौर घोषणा पर हस्ताक्षर किये।(56)

इस संयुक्त वक्तव्य में दोनों देशों ने जहाँ इस यात्रा पर सन्तोष व्यक्त किया वहीं भविष्य के सम्बन्धों के सम्बन्ध में भी कुछ सिद्धान्त (विचार) अपनाये।

समय का स्मरण–पत्र

21 फरवरी 1999 को दोनों देशों के विदेश सचिवों ने एक स्मरण पत्र पर हस्ताक्षर किये। लाहौर घोषणा की कुछ विशेषताओं को दोहराया गया तथा यह सहमतिपूर्ण निर्णय लिया गया कि –

---

56. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 331–332

1. परमाणु एवं परम्परागत क्षेत्रों में विश्वास निर्माण के लिये कदम उठाने तथा विरोध को दूर करने के लिये दोनों देश सुरक्षा धारणाओं के सम्बन्ध में व्यापक वार्तालाप करेंगे।
2. अपने–अपने बैलिस्टिक मिसायलों के परीक्षण के बारे में दोनों देश एक दूसरे को पूर्व सूचना देंगे।
3. परमाणु दुर्घटनाओं तथा अनाधिकृत परमाणु प्रयोगों के खतरे को रोकने के लिये दोनों देश राष्ट्रीय स्तर पर कदम उठायेंगे।
4. दोनों देशों ने भविष्य में परमाणु परीक्षण न करने का जो निर्णय लिया है उसे बनाये रखेंगे लेकिन प्रभुसत्तात्मक आवश्यकताओं के उभरने पर इस निर्णय को बदला भी जा सकता है।
5. समुद्री यातायात में दुर्घटना को रोकने के लिये दोनों देश एक समझौता करेंगे।
6. समय–समय पर दोनों देश विश्वास–निर्माण के सम्बन्ध में उठाये गये कदमों की समीक्षा करेंगे तथा जहाँ आवश्यकता होगी वहाँ सलाहकारी तंत्रों की स्थापना करेंगे।
7. दोनों देश दोनों डी. जी. मिलिटरी–आपरेशन्स के मध्य संचार व्यवस्था को और सुरक्षित उच्चस्तरीय बनाने के कार्य की समीक्षा करेंगे।
8. सुरक्षा, निःशस्त्रीकरण तथा परमाणु अप्रसार के मुद्दों पर द्विपक्षीय परामर्श करेंगे।

यह भी लिखा गया कि जहाँ कही भी जरूरी होगा इन कदमों के तकनीकी विवरण को स्पष्ट करने के लिये दोनों देशों के विशेषज्ञों की बैठकें की जायेगी तथा सन् 1999 के मध्य तक द्विपक्षीय समझौते किये जायेंगे।

इस प्रकार फरवरी 1999 में भारत तथा पाकिस्तान के मध्य उच्च स्तरीय सम्पर्क स्थापित किये गये तथा वार्तालाप हुआ तथा तीन महत्वपूर्ण दस्तावेजों पर हस्ताक्षर भी किये गये। इससे यह आशा बनी कि भारत–पाक सम्बन्ध अब आगे से बेहतर हो जायेंगे। परन्तु ऐसा हुआ नहीं। इसके कारण निम्नलिखित तत्व रहे हैं –

1. पाकिस्तान द्वारा कारगिल क्षेत्र में घुसपैठ तथा मई 1999 में कारगिल युद्ध आरम्भ होना।
2. पाकिस्तान द्वारा जम्मू तथा कश्मीर के वास्तविक नियंत्रण रेखा (कारगिल–क्षेत्र) की निश्चित स्थिति को स्वीकार करने से इन्कार।
3. एक नये भारत–पाक युद्ध की संभावना।
4. पाकिस्तान का यह अड़ियल मत कि सबसे पहले कश्मीर का मुद्दा हल किया जाये तभी

भारत–पाकिस्तान सम्बन्ध अच्छे और विकसित हो सकते हैं।

5. पाकिस्तान द्वारा कश्मीर घाटी में चल रहा अप्रत्यक्ष युद्ध जारी रखना।

6. पाकिस्तान द्वारा भारत को सर्वाधिक वरीयता प्राप्त राष्ट्र का दर्जा न दिया जाना।

7. पाकिस्तान द्वारा चीन के माध्यम से भारतीय सुरक्षा पर दबाब बढ़ाने के प्रयास। प्रधानंमत्री श्री बाजपेयी की पाकिस्तान यात्रा के दौरान ही चीन के विदेशमंत्री भी पाकिस्तान की यात्रा कर रहे थे। इस अवसर पर पाकिस्तानी प्रेस तथा कुछ नेताओं ने अपने भारत विरोधी विचारों को प्रकट करने में कोई संकोच नहीं किया था।

8. पाकिस्तान द्वारा कश्मीर मुद्दे का अन्तर्राष्ट्रीयकरण किये जाने का प्रयास।

9. भारत में विद्यमान राजनैतिक उथल–पुतल तथा एक काम चलाऊ सरकार की उपाधि।

10. पाकिस्तान की घरेलू राजनीति की आवश्यकतायें।

11. दोनों देशों द्वारा मिसायल शस्त्र निर्माण की होड़।

12. पाकिस्तान में कुछ कट्टरपंथी संस्थायें जैसे जमायते इस्लामी भारत के साथ सम्बन्धों के समन्वय में सदैव नकारात्मक और विरोधी रुख अपनाती रही है और आज भी स्थिति ऐसी ही है। ऐसे संगठनों ने भी बाजपेयी की सद्भावना यात्रा का भी पूर्ण विरोध किया था। ऐसे तत्व पाकिस्तान की सरकार को भारत विरोधी नीति अपनाने के लिये मजबूर करते रहे हैं। ऐसे ही तत्व पाकिस्तान को कश्मीर कारगिल, पंजाब आदि क्षेत्रों में घुसपैठ करने वाले आतंकवादियों को सैनिक संरक्षण, सहायता तथा निर्देशन देने के लिये विवश करते रहे हैं।

✦✦✦

षष्ठ अध्याय

अध्याय षष्ठ

क्षेत्रीय समीकरण, महाशक्तियाँ एवं कश्मीर समस्या

सार्क एवं कश्मीर समस्या

भारत ने क्षेत्रीय सहयोग के दक्षिण एशियाई संगठन SAARC बनाने में, ताकि यह संस्था गत्यात्मक संगठन बन सके जो दक्षिण एशियाई देशों के बीच सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक सहयोग का विकास करने के लिये प्रतिबद्ध हो, सकारात्मक तथा ठोस भूमिका निभाई है। सार्क के अध्यक्ष के नाते भारत ने सार्क का प्रयोग न केवल इसकी प्रारम्भिक कठिनाइयों से छुटकारा पाने में बल्कि सार्क के सदस्यों के बीच अधिक सहयोग बढ़ाने के लिये नये उदाहरणों तथा लक्ष्यों को अपनाने में किया।

निश्चय ही सार्क की स्थापना बांग्लादेश द्वारा 2 मई 1980 को किये गये उपक्रमों का अंतिम परिणाम थी। किन्तु केवल अगस्त 1983 में ही सात देशों के विदेश मंत्रियों की नई दिल्ली में हुई बैठक में दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग का घोषणा पत्र अपनाया गया। सार्क की विधिवत् स्थापना दिसम्बर 1985 में हुई जबकि सार्क देशों का पहला शिखर सम्मेलन बांग्लादेश की राजधानी ढाका में सम्पन्न हुआ।

सार्क के उद्भव ने निश्चित ही प्रत्यक्ष रूप से भारत पाक सम्बन्धों के राजनीतिक विस्तार तथा कश्मीर समस्या पर प्रभाव न डाला हो परन्तु अप्रत्यक्ष रूप से व्यापारिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्धों के माध्यम से प्रभावित किया है।

भारत और पाकिस्तान के बीच आर्थिक सम्बन्धों के विकास की संभावना को उस समय कुछ बढ़ावा मिला जब जनवरी 1986 में दोनों देशों के वित्तमंत्रियों ने द्विपक्षीय निजी व्यापार को बढ़ावा देने के लिये एक आपसी मेल–मिलाप के शासन पत्र पर हस्ताक्षर किये। इस समझौते से पाकिस्तान के निजी क्षेत्र को यह आज्ञा मिल गई कि वह भारत से 42 वस्तुओं का आयात कर सकता था। सार्वजनिक क्षेत्र में दोनों ही देशों ने यह तय किया कि वे 1986 के दौरान व्यापार की मात्रा को दुगना कर देंगे। यह व्यापार समझौता दोनों देशों के बीच उपयोगी द्विपक्षवाद का एक ढाँचा तैयार करने की ओर एक महत्वपूर्ण कदम था। तथापि वास्तव में समझौता करने के बावजूद भी इस क्षेत्र में उन्नति बहुत सीमित ही रही।[1]

---

1. डॉ. राजकुमार सिंह : सार्क की उपयोगिता, प्रतियोगिता दर्पण, मई 1986, पृ. 183

1986 के दौरान भारत तथा पाकिस्तान के बीच सम्बन्ध धीमी गति से विकसित होते रहे। सार्क ने दोनों देशों के लिये द्विपक्षीय सम्बन्धों को ठीक देखने के लिये एक अवसर प्रदान किया। भारत पाकिस्तान के साथ सम्बन्ध सुधारने के लिये धीरे–धीरे कार्यशील रहा दिसम्बर 1986 में भारत के गृहमंत्री एक प्रतिनिधिमंडल को लेकर पाकिस्तान पहुँचे तथा लाभदायक बातचीत की। दोनों ही देशों ने शिमला समझौता के प्रति अपनी प्रतिबद्धता प्रकट की तथा कुछ समस्याओं – अवैध रूप से सीमा पार करना, आतंकवाद की समस्या तथा सीमा पार से शस्त्रों तथा नशीले पदार्थों की तस्करी आदि का समाधान खोजने, के बारे में विचार विमर्श किया। दोनों ही पक्षों ने यह भी तय किया कि अपने–अपने सीमा सुरक्षा बलों को मजबूत करेंगे तथा पारस्परिक आधार पर सीमा की संयुक्त निगरानी करेंगे तथा एक संयुक्त तंत्र की स्थापना करेंगे, जिसको गम्भीरता से तथा बाध्यकारी दायित्व के रूप में प्रयोग किया जायेगा। इससे यह सुनिश्चित बनाया जायेगा कि उसके भू क्षेत्रों को किन्हीं ऐसे कार्यों तथा गतिविधियों के लिये प्रयुक्त न होने दिया जायेगा जिससे आन्तरिक शान्ति, स्थिरता तथा क्षेत्रीय अखण्डता को आघात पहुँचता हो। तथापि दोनों देशों के विदेश सचिव अपनी दिसम्बर 1986 की बातचीत के दौरान अनाक्रमण समझौता शान्ति, मैत्री तथा सहयोग की सन्धि के विषय में मतभेदों को दूर नहीं कर सके।

इस्लामाबाद में दिसम्बर 1988 में हुये चौथे सार्क शिखर सम्मेलन ने भारत तथा पाकिस्तान को अपने सम्बन्धों को पुनः गरिमा प्रदान करने की आवश्यकता का अवसर प्रदान किया। तात्कालिक प्रधानमंत्री राजीव गाँधी तथा तात्कालिक प्रधानमंत्री बेनजीर भुट्टो ने भारत पाक सम्बन्धों को सकारात्मक दिशा प्रदान करने के लिये अत्यधिक सद्भावना भरे वातावरण में अत्यन्त लाभदायक बातचीत के फलस्वरूप तीन समझौते किये।

प्रथम समझौते के अनुसार एक दूसरे के परमाणु प्रतिष्ठानों पर आक्रमण करने की मनाही की गई तथा उस मौखिक समझौते का औपचारिक रूप दिया गया जो कि दिसम्बर 85 में किया गया था। इस समझौते के अनुसार यह अनुबन्ध किया गया कि दोनों देश प्रत्येक वर्ष एक जनवरी को अपने परमाणु प्रतिष्ठानों के भौगोलिक निर्देशकों तथा सुविधाओं के विषय में सूचित करेंगे।

कला, संस्कृति, पुरातत्व, शिक्षा, जन संचार माध्यम तथा खेलों के क्षेत्रों में द्विपक्षीय सहयोग को प्रोत्साहन देने के लिये दोनों देशों ने एक तीन वर्षीय समझौते पर हस्ताक्षर किये। इसके अधीन दोनों देशों में सांस्कृतिक केन्द्र स्थापित करने के साथ–साथ कलाकारों, लेखकों

तथा संगीतकारों की यात्राओं के आदान प्रदान तथा कलात्मक एवं अन्य प्रकार की प्रदर्शनियों का आदान प्रदान तथा एक दूसरे के फिल्म मेलों में भाग लेना तथा खेल दलों, यात्राओं को प्रोत्साहन देने पर विचार किया गया। इसके अतिरिक्त समझौते ने दोनों देशों का आवाहन किया कि वे इस बात को सुनिश्चित करें कि उनकी शैक्षणिक संस्थाओं में निर्धारित पुस्तकों में विशेषतया इतिहास तथा भूगोल में, एक दूसरे से सम्बन्धित तथ्यों का मिथ्या निरूपण न किया गया हो।[2]

भारत–पाक संयुक्त आयोग को यह जिम्मेदारी सौंपी गई कि वह सांस्कृतिक तथा शैक्षणिक आदान–प्रदान के प्रोग्रामों को बनायें तथा समझौते को लागू करने के कार्य का पर्यवेक्षण करें। इस समझौते में यह भी प्रावधान था कि यदि दोनों में से कोई पक्ष इसे समाप्त नहीं करना चाहता तो इसका नवीनीकरण स्वयं तीन वर्ष के पश्चात हो जायेगा।

तीसरा समझौता भारत तथा पाकिस्तान में द्विपक्षीय व्यापार से सम्बन्धित था जिसके अन्तर्गत दोहरा कर लगाने से बचने का प्रावधान था।

इन तीनों समझौतों के द्वारा शिमला भावना पुनः लौट आई तथा भारत तथा पाकिस्तान के मध्य लाभदायक द्विपक्षवाद का सिद्धान्त पुनः क्रियाशील हो गया। इन समझौतों द्वारा नये पाकिस्तानी नेतृत्व द्वारा भारत की इस माँग के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण भी प्रकट किया जो कि पारस्परिक संदेह एवं अविश्वास को समाप्त करने के विषय में हुआ था जिसने भूतकाल में भारत–पाक सम्बन्धों के सामान्यीकरण के मार्ग में अवरोध उत्पन्न किये थे। श्रीमती बेनजीर भुट्टो के नेतृत्व में पाकिस्तान में पुनः लोकतंत्र की वापसी कर भारत ने प्रसन्नता व्यक्त की। भारत ने, लोकतांत्रिक रूप से निर्वाचित तथा जिसे लोगों का बहुमत तथा वैधता प्राप्त थी, पाकिस्तान की सरकार के साथ चिरकाल तक लाभदायक रहने वाले समझौते करने की अपनी इच्छा का प्रदर्शन किया। पाकिस्तान ने अपनी ओर से यह विश्वास दिलाया कि वह पंजाब में आतंकवादियों की सहायता करने से तथा भारत के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करने से परहेज करेगा।

मूलतः सार्क एक क्षेत्रीय व्यापारिक संगठन के रूप में उदय हुआ था, सार्क के चार्टर में ही यह बात निहित थी कि कोई भी देश अपनी राजनैतिक समस्याओं को सार्क के मंच पर नहीं रखेगा। अतः कश्मीर समस्या के सन्दर्भ में प्रत्यक्ष रूप से इसका कोई प्रभाव नहीं रहा परन्तु

2. यू. आर. घई : भारतीय विदेशनीति, न्यू एकेडमिक पब्लिशिंग कम्पनी, भाई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 619

व्यापारिक संगठन होने के नाते कहीं न कहीं से कश्मीर समस्या पर अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव डाला है।

अमेरिका एवं कश्मीर समस्या

कश्मीर के मुद्दे पर अमरीका के पक्षपातपूर्ण रवैये, विशेषकर 1947–98 के समय में, का भारत ने हमेशा ही विरोध किया है। कश्मीर पर पहले पाकिस्तानी आक्रमण के बाद भारत ने जनवरी 1948 में भारत तथा पाकिस्तान के बीच कश्मीर की समस्या को शांतिपूर्ण निपटारे के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ में पेश किया। भारत को आशा थी कि अमरीका कश्मीर, जिसका वैध रूप से भारत में विलय हुआ था, के प्रश्न पर भारत का समर्थन करेगा। इसके विपरीत अमरीका ने कुछ कारणों से पाकिस्तान का समर्थन करना अच्छा समझा। अमरीका का पाकिस्तान को समर्थन उस समय खुलकर स्पष्ट रूप से सामने आया जब सन् 1954 में पाकिस्तान अमरीका की सुरक्षित संधियों 'सीटो' तथा सैंटो' में शामिल हो गया। परिणामस्वरूप 1957, 1962 तथा फिर 1964 में पाकिस्तान द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद में कश्मीर समस्या को फिर से उठाने के प्रश्न पर अमरीका का पूर्ण समर्थन मिला। पाकिस्तान का समर्थन करते हुये अमरीका ने इसके पक्ष में कुछ तर्क भी दिये जो पूर्णरूप से भारत की विचारधारा के तथा भारतीय लोकतंत्र के कुछ मूलभूत सिद्धान्तों के विरुद्ध थे। अमरीका ने हिन्दू भारत तथा मुस्लिम पाकिस्तान आदि शब्दों का प्रयोग किया तथा उसका विश्वास था कि कश्मीर में क्योंकि मुसलमानों का बहुमत है इसलिये उन्हें आत्मनिर्णय का अधिकार दिया जाना चाहिये। यह मत भारतीय धर्म निरपेक्षता के तथा इस भारतीय मत के थे, कि भारत के राज्य प्राप्ति दस्तावेज पर हस्ताक्षर करने के बाद कश्मीर भारत का एक हिस्सा बन चुका था, के विरुद्ध था। इस प्रकार कश्मीर समस्या पर मतभेदों ने भारत–अमरीका सम्बन्धों को गम्भीर रूप से प्रभावित किया।

वर्तमान समय में कश्मीर के सम्बन्ध में अमरीका के विचारों में कुछ परिवर्तन तो हुआ है परन्तु यह काफी नहीं। अभी भी अमेरिका कश्मीर को एक झगड़े का स्थान मानता है तथा वह कश्मीर को भारत का अंग मानने को तैयार नहीं है। वह यह भी सोचता है कि उसकी मध्यस्थता का उपयोग समस्या के हल के लिये किया जा सकता है। वह अब शिमला समझौते को व्यवहार में लागू करने की बात करके भारत तथा पाकिस्तान में द्विपक्षीय स्तर पर बातचीत की बात करता है। वह पाकिस्तान की आलोचना तो करता है कि वह भारत में उग्रवाद को समर्थन दे रहा है

परन्तु अमरीका पाकिस्तान के विरुद्ध कार्यवाही की बात टालता है। वह पाकिस्तान के नागरिक अधिकारों के हनन के प्रति भी नरम रुख अपनाये हुये है।[3]

कारगिल युद्ध के बाद अमरीका की कश्मीर मुद्दे के सम्बन्ध में सोच में कुछ परिवर्तन हुआ। लेकिन अभी अमरीका कश्मीर के मुद्दे को एक बड़ा झगड़ा तथा एक सम्भावित युद्ध केन्द्र मानता है। यह अब कश्मीर में वास्तविक नियंत्रण रेखा के सम्मान की बात करता है तथा कश्मीर में चल रहे आतंकवाद के पीछे इस्लामिक आतंकवादियों का हाथ स्वीकार करता है परन्तु पाकिस्तान के विरुद्ध पग उठाने के लिये तैयार नहीं हैं। भारत तथा अमरीका में अभी भी कश्मीर के मुद्दे तथा भारत पाकिस्तान के सम्बन्धों के बारे में कुछ मतभेद है।

कारगिल पर हमला करने वाले जनरल मुशर्रफ ने मियाँ नवाज शरीफ की सरकार का तख्ता पलट दिया था तो इसलिये कि मियाँ नवाज शरीफ और अटल बिहारी बाजपेयी ने शिमला समझौते के अनुसार कश्मीर सहित अन्य विवादास्पद मसले आपस में बातचीत के द्वारा हल करने का फैसला कर लिया था। लाहौर घोषणा पत्र में आतंकवाद को खत्म करने की शपथ ली गई थी। अमेरिका ने इस घोषणा पत्र का स्वागत किया था और अमेरिका के दबाव पर जनरल मुशर्रफ को नियंत्रण रेखा के पार से सेना और तथाकथित मुजाहिदीन को हटाना पड़ा। अमरीका के राष्ट्रपति क्लिंटन ने कहा था कि वह स्वयं कश्मीर समस्या हल करने में रुचि लेंगे। अभी हाल में अमरीकी सूत्रों ने संकेत दिया है कि अमरीका कश्मीर का मसला हल करने के लिये भारत और पाकिस्तान के मध्य बातचीत करवायेगा।

यद्यपि भारत–पाक विभाजन के पश्चात् अमरीका ने जो रुख अपनाया था वह अब काफी हद तक बदला हुआ प्रतीत होता है परन्तु इस बात को नजरन्दाज नहीं किया जा सकता कि 1948 में कश्मीर पर पाकिस्तान के हमले पर पाकिस्तान के खिलाफ कार्यवाही करने की बजाय अमरीका, ब्रिटेन और फ्रांस आदि ने कई तरीकों से पाकिस्तान का साथ दिया था इसका कारण यह था कि ये ताकतें सोवियत संघ और चीन के खिलाफ पाकिस्तान का प्रयोग करना चाहती थी। गिलगित में महाराजा के राज्यपाल के खिलाफ बगावत कराकर उसे कैद करा देने के साथ ही मेजर ब्राउन ने यह प्रान्त पाकिस्तानी सेना के हवाले कर दिया था। अमेरिकन बिग्रेडियर रन्सल हेट ने कोटली पर हमला करने वालों की कमान संभाली थी राष्ट्र संघ ने एक

---

3. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडमिक पब्लिशिंग कम्पनी, भाई हीरा गेट, जालन्धर पृ. 209

अमरीकी एडमिरल निमिटज को कश्मीर में जनमत गणना के लिये मुखिया नियुक्त करने की घोषणा कर दी थी। भारत ने यह चाल विफल कर दी। इसके बाद पाकिस्तान ने अमरीकी हथियारों का ही इस्तेमाल करके कश्मीर पर हमले किये बांग्लादेश में पाकिस्तानी सेना के बुरी तरह पराजित हो जाने पर भुट्टो ने इन्दिरा जी के साथ शिमला में समझौता किया और विश्वास दिलाया कि अब कश्मीर पर हमला नहीं होगा और पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर को पाँचवा प्रांत करार देकर झगड़ा खत्म कर दिया जायेगा। परन्तु उस पर अमल नहीं हुआ।(4) अमरीका को सोवियत संघ के खिलाफ पाकिस्तान और अफगानिस्तान के कट्टरपंथियों को इस्तेमाल करने की आवश्यकता थी। इससे फायदा उठाकर पाकिस्तान ने कश्मीर, अफगान और अरब आतंकवादियों को मुजाहिद करार देकर भारत के खिलाफ अघोषित युद्ध आरम्भ कर दिया। इस वातावरण में अमरीका को अपने हित के लिये भी खतरे दिखायी दिये और उसने जब भारत और पाकिस्तान में गैर सरकारी तौर पर बातचीत का सिलसिला आरम्भ किया तो जेहाद के नारे लगाने वालों ने दुष्प्रचार किया कि अमरीका कश्मीर को भारत के हवाले कर देने की साजिश कर रहा है। पत्रकार हबीबुर रहमान और मियां मुजीद ने लिखा है कि अमरीका ने यह प्लान बनाया है कि गिलगित को अमरीका के संरक्षण में आजाद देश करार दिया जाये। जम्मू और लद्दाख को भारत के पास रहने दिया जाये और शेष कश्मीर को किसी न किसी तरह आजाद देश बना दिया जाये जिसे अमरीका अपने लाभ के लिये प्रयोग कर सके।

लियाकत अली के बाद पाकिस्तानी गवर्नर जनरल गुलाम मुहम्मद ने दिल्ली आकर नेहरू मंत्रिमण्डल के सदस्य अजित प्रसाद जैन से बातचीत करके समझौते का यह प्लान तैयार किया था कि गिलगित सहित पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर पाकिस्तान के पास रहने दिया जाये ओर कश्मीर घाटी में पुंछ, राजौरी आदि कुछ क्षेत्र भी पाकिस्तान के हवाले कर दिया जायें। परन्तु इस समझौते पर हस्ताक्षर किये बिना ही वह पाकिस्तान लौट गये और कहा कि मैं नहीं चाहता कि मेरी हत्या हो जाये।

चीनी हमले के बाद दिल्ली में अमरीकी सूचना कार्यालय ने यह प्लान प्रकाशित किया कि लद्दाख और जम्मू भारत में रहे और अधिकृत कश्मीर पाकिस्तान के पास रहे। भारत को अपनी रक्षा के लिये जम्मू से कश्मीर के रास्ते लद्दाख में सेना ले जाने की आज्ञा दी जाये और

---

4. राजेश सिंह : भारत अमेरिका सम्बन्ध, प्रतियोगिता दर्पण, अक्टूबर 1996, पृ. 145

कश्मीर घाटी को ऐसा आजाद क्षेत्र करार दिया जाये। जिसकी सुरक्षा की गारंटी भारत और पाकिस्तान दोनों दें। एक वरिष्ठ पत्रकार जार्ज और दैनिक समाचार पत्रों ने भी इसकी हिमायत की।

गत दो तीन वर्षों से पाकिस्तान में दुष्प्रचार हो रहा है और "जंग" समूह के समाचार पत्रों में लिखा है कि अमरीका कश्मीर का विभाजन करके इसके तीन हिस्से करना चाहता है। वह जम्मू और लद्दाख को भारत के हवाले करके अधिकृत कश्मीर को पाकिस्तान के हवाले कर देना चाहता है। परन्तु भारत के अधीन भी लद्दाख चीन के खिलाफ अमेरिका का अड्डा बनेगा अमरीका कश्मीर में लोगों को अधिक अधिकार देकर चीन के खिलाफ इस्तेमाल करना चाहता है। अधिकृत कश्मीर के पूर्व राष्ट्रपति सरदार अब्दुल कयूम ने अमरीका का दौरा करने के बाद कहा था कि जनमत गणना में कश्मीर को "आजाद देश" का दर्जा देने का सवाल भी पूछा जा सकता है। भारत का विरोध करने वाले मेजर अमान उल्ला का लिबरेशन फ्रंट इस मांग की हिमायत करता है। इस लिये पाकिस्तान ने उसकी मदद करना बन्द कर दिया है। अमरीका अब क्या करेगा ? इसका जबाव वही दे सकता है परन्तु इस बात को नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता कि अब चीन और पाकिस्तान एक दूसरे के निकट आ गये हैं। पाकिस्तान के कठपुतली राष्ट्रपति रफीक तरार ने गत सप्ताह कहा कि नई शताब्दी में पाकिस्तान और चीन सामरिक स्तर पर एक दूसरे के साथी बनेंगे। नई दिल्ली में पाकिस्तानी उच्चायुक्त श्री काजी ने भी एक ब्यान में कहा है कि अब पाकिस्तान एक परमाणु ताकत वाला देश है। उसका सम्बन्ध खाड़ी देशों, मध्य एशिया तमाम इस्लामी दुनिया से है और उसका सामरिक और विश्वसनीय सम्बन्ध चीन से है। इसका अर्थ यह कि पाकिस्तान अमरीकी दबाव में आने वाला नहीं।

अमरीका निःसन्देह पाकिस्तान और अफगानिस्तान के रास्ते मध्य एशिया में कदम रखना चाहता है। पाकिस्तान इस मैदान में उसका मुकाबला कर रहा है। वह अपने आप को इस्लामी दुनिया का नेता समझता है। अमरीका यह नहीं चाहेगा कि पाकिस्तान इस्लाम के नारे बुलन्द करके मध्य एशिया पर नियंत्रण करे और कश्मीर को भी अपना अड्डा बनाकर चीन से याराना कायम करे। इन हालात में जब कि कश्मीर का महत्व बहुत बढ़ गया है और भारत अमरीका के लिये किसी तरह का खतरा नहीं है।

अब भारत को यह चाहिये कि वह अमरीका को इस दिशा में विचार मन्थन के लिये विवश करे कि इस्लामिक आतंकवाद के चलते समस्त विश्व आतंकवाद से जूझ रहा है एवं

पाकिस्तान इन इस्लामिक राष्ट्रों के नेतृत्व की आकांक्षा रखता है परन्तु भारत ऐसा कोई भी कार्य सम्पादित नहीं करता है अतः अमेरिका अपनी रक्षा की अग्रिम चौकी पाकिस्तान को समझता है इस पर अमरीका को दोबारा विचार मन्थन करना चाहिये एवं भारत के विकल्प पर भी ध्यान देना चाहिये।[5]

अमरीका की नजर में आज भारत की स्थिति

- ✦ भारत एक बड़ा विश्व बाजार है। अमरीकी उपभोक्ता सामग्रियों की खपत इस बाजार में धड़ल्ले से हो सकती है। चीन की तुलना में भारत का बाजार अमरीका के लिये उपयुक्त होगा।
- ✦ परमाणु शक्ति होने के कारण विश्व मानचित्र पर भारत ने अपनी उपस्थिति दर्ज की है। उसकी एक निश्चित भूमिका तय है "नो फर्स्ट यूज नो फर्दर टेस्ट' की घोषणा अमरीका को अच्छी लगी है।
- ✦ अमरीका में भारतीयों की संख्या लाखों में है। ये भारतीय भविष्य में अमरीकी समाज को प्रभावित करने की क्षमता में होंगे।
- ✦ विशाल आबादी वाले देश होने के बावजूद भारत में प्रौद्योगिकी आधारित विकास की असीम संभावनायें हैं। अमरीका भारत को अपनी अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी का उपयोगी बाजार मानता है।
- ✦ प्रौद्योगिकी प्रशिक्षण प्राप्त कुशल लोगो की एक बड़ी तादाद उसे भारत में काफी कम कीमत पर उपलब्ध हो सकती है।
- ✦ भारत की धर्म निरपेक्ष बहुलवादी और अपेक्षाकृत स्थिर लोकतांत्रिक राजनीति अमरीका को पसन्द आती है। सभ्यताओं के संघर्ष की बजाय उसे भारत में सामंजस्य की छवि दिखाई देती है।
- ✦ अमरीका और भारत के सामरिक रणनीतिक हित परस्पर मिलते जुलते हैं। दक्षिण एशिया की एक शक्ति बतौर भारत अमरीका की मदद कर सकता है।
- ✦ बहुभाषीय बहुधार्मिक भारतीय समाज अमरीकियों के आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है। भारत के 15–20 करोड़ अंग्रेजी बोलने समझने वाले मध्य वर्ग को वह अपना स्वाभाविक दोस्त

---

5. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, भाई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 164

समझता है।

- रूस की खस्ता हालत के कारण चीन भविष्य में अति महाशक्ति बन सकता है। शक्ति संतुलन के लिये भारत से दोस्ती करना अमरीका की लगभग मजबूरी है।
- अमरीका एक ऐसा देश है जिसकी अपनी कोई प्राचीन परम्परा नहीं है। भारत अतिप्राचीन परम्पराओं का धनी है। एक नौजवान राष्ट्र प्राचीन सभ्यता से सीधा साक्षात्कार चाहता है।

भारत की नजर में अमरीका की स्थिति

- सोवियत संघ के विखण्डन के बाद एक ध्रुवीय विश्व का एकमात्र नेता अमरीका है। विश्व महाशक्ति के नाते अमरीका से दोस्ती भारत के लिये हर दृष्टि से लाभप्रद होगी।
- भारत को अपने यहाँ पूंजी निवेश की अति आवश्यकता है। अमरीका के पास अकूत पूँजी है। निवेश के लिये अमरीका पर भारत की नजर टिकी है। भारत को लगता है कि बेहतर सम्बन्ध होने से भारी पूँजी निवेश हो सकता है।
- अमरीका प्रौद्योगिकी की भूमि है। प्रौद्योगिकी प्रशिक्षित लोगों के जरिये भारत अमरीका से बहुत कुछ हासिल कर सकता है।
- अमरीका एक ऐसा देश है जहाँ व्यापार से लेकर ज्ञान विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों की दृष्टि से अपार अवसर विद्यमान हैं। भारत इस अवसर का लाभ लेना चाहता है।
- अमरीका का धर्मनिरपेक्ष, बहुराष्ट्रीय और लोकतांत्रिक देश होना भारत के लिये उपयुक्त है क्योंकि कमोवेश भारतीय समाज भी वैसा ही है।
- भारत और अमरीका के सामरिक एवं रणनीतिक हित परस्पर एक जैसे है।
- अमरीका में लाखों की संख्या में भारतीयों की उपस्थिति भारत सरकार पर अमरीका से सम्बन्ध बनाने के लिये एक अप्रत्यक्ष दबाव बना चुकी है।
- आतंकवाद के विरुद्ध लड़ने के लिये जितनी दिक्कतों का सामना भारत को करना पड़ रहा है लगभग उतनी ही दिक्कतों को अमरीका भी झेल रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद पर दोनों देशों के हित समान है।
- भारत को लगता है कि पाकिस्तान को अलग–थलग करने के लिये अमरीका से मित्रता आवश्यक है।
- अमरीकी जीवन शैली भारतीय मध्यम वर्ग के एक बड़े हिस्से का आदर्श बनती जा रही है।

इस वर्ग के कारण भी भारत सरकार अमरीका से मित्रता को उत्सुक है।

1991—92 से अमरीका भारत का सबसे बड़ा निवेशकर्त्ता है। 1991 में अमेरिका ने 158.8 करोड़ रुपये का निवेश किया था। 1995 में उसके द्वारा किये गये निवेश में भारी वृद्धि हुयी और यह राशि बढ़कर 7054.3 करोड़ रुपये हो गयी। अमरीकी निवेश में वृद्धि का क्रम जारी रहा और 1997 में यह 13569.8 करोड़ रुपये का हुआ। 1997 में भारत में कुल विदेशी निवेश में अमेरिका का हिस्सा 24.7 प्रतिशत था। लेकिन 1998 के नौ महीनों में अमरीकी निवेश में कमी आयी।

भारत में अमेरिकी निवेश मुख्यतः बिजली, इलैक्ट्रानिक्स, औद्योगिक मशीनरी, रसायन, शोध एवं विकास यांत्रिक इन्जीनियरिंग एवं साफ्टवेयर आदि क्षेत्रों में होता है।

भारत विदेशी निवेशकों के लिये वैसे भी आकर्षण का केन्द्र है। भारत में नीतियों में भी काफी बदलाव आया है और विदेशी निवेशकों को सरकार तमाम तरह की सुविधायें उपलब्ध करा रही है। दूसरे भारत के पास बड़ा बाजार है। यहाँ कुशल श्रमिक सस्ती दरों पर उपलब्ध है यह सही है कि भारत अभी अपेक्षित विदेशी निवेश पाने में सफल नहीं हो पाया है लेकिन जो स्थितियाँ हैं उनमें भविष्य में भारत द्वारा अमरीका से निवेश जुटाने की भरपूर संभावना दिखती है।

अमरीकी आयात—निर्यात में भारत का हिस्सा (प्रतिशत में)

वर्ष	आयात	निर्यात
1980—81	.37	.85
1984—85	.46	.77
1988—89	.56	.69
1989—90	.52	.74
1991—92	.58	.48
1992—93	.63	.48
1993—94	.66	.59
1994—95	.74	.56
1995—96	.72	.66
1996—97	.77	.67
1997—98	.72	.65

स्रोत : आर्थिक सर्वेक्षण 1999–2000 भारत सरकार

नोट : अमरीका ने भारत को 1980–81 में 17.07 और 1985–86 में 3.84 करोड़ डालर का ऋण भी दिया था।

अमेरीकी नीतियों के कार्यकलाप से यह प्रतीत होता है कि अमेरिका भारत के साथ दोस्ताना सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास कर रहा है। अब अमेरिका की रुचि पाकिस्तान की अपेक्षा भारत के साथ अच्छे सम्बन्धों को आगे बढ़ने की रणनीति बना रहा है। किन्तु पाकिस्तान को अमेरिका अपनी रक्षा के लिये अग्रिम सीमा चौकी मानता है और यह स्थिति अभी समाप्त नहीं हुयी है।

यदि ब्रिटेन जैसा देश पाकिस्तान को आतंकवादी राष्ट्र घोषित करने से इनकार करता है तो इस पर ताज्जुब नहीं करना चाहिये और न तो इस बात पर किसी को आश्चर्य होना चाहिये कि ओसामा बिन लादेन से परेशान अमरीकी राष्ट्रपति बिल क्लिंटन इस मुद्दे पर चुप्पी साधे हुये है ? इन राष्ट्रों के लिये भारत महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि अपने हित और पाकिस्तान से उसके कूटनीतिक, राजनीतिक, वैदेशिक और आर्थिक रिश्ते खास अहमियत रखते हैं। मेरे विचार से भारत को अमरीकी दृष्टिकोण से नाराज भी नहीं होना चाहिये क्योंकि कोई भी देश अपने हितों की बलि चढ़ाकर दूसरों की मदद क्यों करेगा। जो अमरीका अब तक हर स्तर पर पाकिस्तान को मदद करता रहा है वह अचानक उसके विरुद्ध इतना कड़ा रुख अख्तियार नहीं कर सकता।[6]

सोवियत संघ एवं कश्मीर समस्या

आरम्भ में भारत तथा सोवियत रूस के मित्रता एवं सहयोग के सम्बन्ध सीधे थे परन्तु बाद में विशेषतया 1953–84 की अवधि में ये अत्याधिक तेजी से बढ़े जिसमें कश्मीर समस्या को कहीं न कहीं से प्रभावित अवश्य किया। प्रत्यक्षतः तो सोवियत संघ ने स्पष्ट रूप से कश्मीर समस्या में हस्तक्षेप नहीं किया परन्तु भारत का मित्र होने के नाते कहीं न कहीं उसका प्रभाव कश्मीर समस्या पर दिखने लगता है चाहे वह ताशकन्द समझौते के समक्ष हो या शीतयुद्ध के दौरान कहीं न कहीं स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है।

7 दिसम्बर 1946 को अपनी नीति समबन्धी प्रथम वक्तव्य में श्री जवाहरलाल नेहरू

---

6. जे. एन. दीक्षित (पूर्व विदेश सचिव भारत सरकार) : पाकिस्तान का आतंकवादी राष्ट्र घोषित करा पाना मुश्किल, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार, 15 जनवरी 2002 हस्तक्षेप पृ. 1

ने सोवियत संघ के साथ भविष्य में होने वाले सम्बन्धों का हवाला दिया तथा कहा था, "आधुनिक विश्व के उस दूसरे बड़े राष्ट्र सोवियत संघ को, जिसके कन्धों पर भी विश्व घटनाओं को आकार देने का उत्तरदायित्व है, हम अपनी शुभ इच्छायें भेजते हैं कि एशिया में हमारे पड़ोसी हैं तथा हमें निश्चित रूप से कई काम इकट्ठे मिलकर करने पड़ेंगे तथा एक दूसरे के साथ सम्पर्क में आयेंगे।"[7]

1949 ई. में श्री नेहरू ने फिर कहा था "सोवियत संघ तथा भारत को अच्छे पड़ोसियों की तरह रहना चाहिये जिनमें बहुत कम मनमुटाव हो।"[8] निश्चय ही नेहरू की यह इच्छा यह भविष्यवाणी बाद में सच हो गयी तथा जब भारत और सोवियत संघ के बीच बहुत कम वैमनस्य के साथ अत्याधिक सहयोगी पड़ोसियों तथा अच्छे मित्रों की तरह सम्बन्ध स्थापित हो गये। तथापि इस शीघ्र आरम्भ के बावजूद भारत तथा सोवियत संघ के सम्बन्धों में 1950 के दशक के मध्य तक कोई विशेष सार्थक तथा लाभदायक प्रगति नहीं हुयी। ऐसा 1955 से पूर्व के समय के कुछ नकारात्मक तथा अवरोधी तत्वों के कारण हुआ। 1954–55 ई. के आसपास भारत तथा सोवियत संघ दोनों एक दूसरे को बेहतर समझने की स्थिति में हो सके तथा एक दूसरे के साथ सम्बन्धों के महत्व को समझ सके। सम्बन्ध कायम करने का पहला सार्थक प्रयत्न 1955 ई. में किया गया जब दोनों देशों के नेताओं ने एक दूसरे के देश का दौरा किया। तब से लेकर 1991 तक भारत तथा सोवियत संघ के सम्बन्धों में लगातार विकास हुआ तथा दोनों देशों के बीच सहयोग तथा मित्रता निरन्तर बढ़ती रही।

1954 में पाकिस्तान अमरीका की सन्धि व्यवस्था में शामिल हो गया था तथा वहाँ से बड़ी संख्या में शस्त्र तथा सैनिक सामग्री प्राप्त करने लगा था। इससे भारत की सुरक्षा को काफी खतरा पैदा हो गया। भारत अमरीका से नाराज हो गया था क्योंकि अमरीका पाकिस्तान को शस्त्र भेज रहा था। इसके साथ–साथ, अपने ओधोगिक प्रतिष्ठानों की स्थापना के लिये अमरीका की सहायता प्राप्त कर सकने में भारत की असफलता ने एक ऐसी स्थिति पैदा कर दी, जिसमें भारत सोवियत संघ की सहायता समर्थन तथा सहयोग लेने के लिये उत्सुक हो उठा। भारत की गुटनिरपेक्षता की कड़ी आलोचना के विपरीत भारत की स्टालिन के युग के बाद सोवियत संघ एक देश मिल गया जो भारत की गुटनिरपेक्षता तथा पंचशील को सही अर्थों में समझ सकने वाला

---

7. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, भाई हीरा गेट, जालन्धर पृ. 189
8. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, भाई हीरा गेट, जालन्धर पृ. 190

उसकी सराहना करने के लिये तैयार था। परिणामस्वरूप भारत ने सोवियत संघ तथा चीन के साथ नजदीकी सम्बन्ध स्थापित करने की इच्छा प्रकट करनी आरम्भ कर दी। इस प्रकार की इच्छा का सबसे महत्वपूर्ण संकेत 1954 ई. में नेहरू द्वारा पीकिंग यात्रा तथा सोवियत संघ की यात्रा के निमंत्रण को स्वीकार कर लेने से मिला।

इस प्रकार भारत सोवियत संघ सम्बन्धों के इस दूसरे चरण में भारत तथा सोवियत संघ दोनों ने ही अपने पारस्परिक सम्बन्धों तथा सहयोग के महत्व को महसूस करना आरम्भ कर दिया तथा इससे दोनों देशों में मैत्री एवं सहयोग के एक नये युग के सूत्रपात के लिये मार्ग प्रशस्त हो गया।(9)

परिणामस्वरूप 1955–1965 ई. के दस वर्ष भारत एवं सोवियत संघ के सम्बन्धों पर पारस्परिक लाभदायक तथा अत्याधिक स्नेहपूर्ण सम्बन्धों का समय बना। दोनों ही देश विश्व की मुख्य समस्याओं पर प्रायः एकमत थे। 1955 में दोनों ही देशों ने विशिष्ठ समस्याओं के प्रति स्पष्ट तथा सकारात्मक नीतियों का निर्माण कर लिया था तथा दोनों ही देश परस्पर सहयोग बढ़ाने की आवश्यकता के प्रति पूर्ण सचेत थे। भारत सोवियत संघ द्वारा दी जाने वाली आर्थिक सहायता तथा राजनीतिक एवं कूटनीतिक समर्थन के महत्व को पूरी तरह महसूस करता था। 1954 ई. के बाद अमरीका की विदेशनीति में पाकिस्तान के समर्थन के प्रति झुकाव के अविर्भाव ने भी भारत को इस बात के लिये बाध्य कर दिया कि वह सोवियत संघ के साथ अपना सम्बन्ध जोड़े। इस समय तक सोवियत संघ ने भी यह निर्णय लिया था कि वह अपनी दक्षिण एशिया की नीति भारत के इर्द गिर्द ही बनायेगा। उसने यह महसूस किया कि पाकिस्तान की गुटबन्दी के सामने तथा चीन के साथ सम्भावित कठिनाइयों के भय से, भारत की गुटनिरपेक्षता का सिद्धान्त महत्वपूर्ण था। सोवियत संघ भारत की, विश्व में प्रभावशाली राज्य होने के नाते, महत्वपूर्ण स्थिति को स्वीकार करता था तथा उसने भारत के साथ द्विपक्षीय सम्बन्धों की ओर बहुत उपयोगी ध्यान देना शुरू कर दिया।

चीन भारत युद्ध के समय अवश्य भारत सोवियत संघ सम्बन्धों मे ठहराव का दौर आया परन्तु 1965 में भारत तथा पाकिस्तान में युद्ध आरम्भ हुआ तो मास्को ने इसे सीमित करने के लिये महत्वपूर्ण कदम उठाये। भारत तथा पाकिस्तान को चेतावनी दी। सोवियत संघ ने चीन

9. डॉ. प्रभात कुमार सिंह : कश्मीर समस्या एवं सोवियत संघ, क्रानिकल मासिक पत्रिका, जुलाई 1992 पृ. 132

को भी चेतावनी दी कि वह भारत तथा पाकिस्तान के मध्य युद्ध में संलिप्त न हो। 20 सितम्बर 1965 को सोवियत संघ ने भारत तथा पाकिस्तान के बीच तनावपूर्ण तथा आक्रामक सम्बन्धों को समाप्त करने के लिये अपनी सेवायें प्रस्तुत की। इससे सोवियत संघ ने इन दोनों देशों को सोवियत संघ की धरती पर इकट्ठे करने का उचित अवसर माना। सोवियत संघ ने दोनों की बैठक के लिये ताशकन्द शहर की सेवायें प्रस्तुत की। यह दक्षिण एशिया में बढ़ती अपनी रुचि तथा प्रभाव को सिद्ध करने की सोवियत संघ की महत्वपूर्ण चाल थी। कुछ प्रारम्भिक हिचकिचाहट के बाद भारत तथा पाकिस्तान ने ताशकन्द में मिलने की सोवियत संघ की सेवाओं को स्वीकार कर लिया। भारत अपने लिये सोवियत संघ की उस सद्भावना को खोना नहीं चाहता था जो कि संयुक्त राष्ट्र संघ में सोवियत संघ ने प्रदर्शित की तथा पाकिस्तान, कश्मीर के मामले में तथा दूसरे भारत पाक समस्याओं पर सोवियत संघ की तटस्थता की संभावनाओं के अवसर खोना नहीं चाहता था।

भारत तथा पाकिस्तान के मध्य ताशकन्द सम्मेलन जनवरी 1966 के पहले सप्ताह में आरम्भ हुआ टी. एन. कौल लिखते है "पश्चिम द्वारा इस सम्मेलन की असफलता की भविष्यवाणी के बावजूद दोनों ही देश 10 जनवरी 1966 को ताशकन्द समझौते पर हस्ताक्षर करने के लिये तैयार हो गये। यह भारत तथा पाकिस्तान के बीच मध्यवर्गीय समझौता तथा सोवियत कूटनीति तथा उसकी सेवाओं की सफलता भी सोवियत नेता दक्षिण एशिया में अपनी नई नीति के प्रति आश्वस्त हो गये तथा पाकिस्तान को चीन तथा अमरीका से दूर हटाने के अन्य सार्थक उपाय सोचने लगे।[10]

परन्तु ताशकन्द में ही 11 जनवरी 1966 को प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री की अचानक मृत्यु ने ताशकन्द सफलता को कम कर दिया। एक बार फिर सोवियत संघ भारत के आगामी नेतृत्व के बारे में सोचने लगा तथापि भारत के प्रधानमंत्री के रूप में श्रीमती इन्दिरा गाँधी के चुनाव ने सोवियत संघ को प्रसन्न कर दिया क्योंकि वे इस नई नेता को श्री नेहरू की बेटी होने के अतिरिक्त स्वयं अपने अधिकार से प्रगतिशील मानते थे।

ताशकन्द समझौते के उत्तरकाल में दक्षिण एशिया के प्रति सोवियत विदेशनीति में तब परिवर्तन आया जब सोवियत संघ ने "भारत के साथ विशेष सम्बन्धों के पूर्ण समर्थन से

---

10. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडमिक पब्लिशिंग कम्पनी, भाई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 265

अधिक संतुलित स्थिति के पक्ष में हो जाने का निर्णय लिया।[11] एवं नई सोवियत नीति भारत में अपने हितों का निरन्तर समर्थन तथा पाकिस्तान के साथ नये सम्बन्धों की स्थापना वाली नीति थी।" सितम्बर 1966 में श्रीमती गाँधी ने मास्को की यात्रा की तथा सोवियत संघ के साथ विशेष सम्बन्ध स्थापित करने की चेष्टा की। उस समय तक मास्को ने भारत तथा पाकिस्तान के प्रति अपनी नीति में परिवर्तन करने का निश्चय कर लिया था तथा परिणामस्वरूप श्रीमती गाँधी की इस यात्रा से कोई इच्छित लाभ नहीं हुये। 1967 ई. के अन्तिम महीनों में सोवियत संघ तथा पाकिस्तान के मध्य शस्त्र सौदे के आसार नजर आने लगे। 1968 ई. को अप्रैल में सोवियत नेता कोसिगिन पाकिस्तान की यात्रा पर गये। उनकी यात्रा के कुछ दिन पहले पाकिस्तान ने पेशावर में अमरीका के सैनिक अड्डों को बन्द करने की विज्ञप्ति जारी की थी। इससे सोवियत नेता प्रसन्न हो गये तथा पाकिस्तान को शस्त्रों की आपूर्ति के अवसर अधिक उज्जवल हो गये। जुलाई 1968 में सोवियत संघ ने पाकिस्तान को शस्त्र देने की घोषणा कर दी। भारत की जनता ने इसके विरुद्ध प्रतिक्रिया व्यक्त की लेकिन भारत की सरकार ने इसका विरोध नहीं किया। भारत को सोवियत संघ की ओर से निरन्तर आर्थिक तथा सैनिक सहयोग दिया जा रहा था तथा सोवियत शस्त्रों पर भारत की निर्भरता के कारण भी भारत सरकार ने सोवियत संघ के निर्णय पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की। श्रीमती गाँधी ने साधारण रूप से कहा "हम सोवियत संघ के निर्णय से खुश नहीं है।" तथापि उन्होंने यह स्पष्ट किया" भारत की विदेशनीति में कोई परिवर्तन नहीं होगा।"[12]

भारत और पाकिस्तान के साथ संतुलित सम्बन्ध स्थापित करने के निर्णय के बावजूद सोवियत संघ ने 1965 युद्ध के बाद भी भारत को टैकों, बमवर्षक विमानों तोपों तथा राडार उपकरणों की आपूर्ति जारी रखी। 1966–67 ई. में 2,2690 लाख रुपये का व्यापार हुआ तथा 1968 ई. के अन्त तक 49,700 लाख रुपये का व्यापार हुआ। 1967 ई. तक सोवियत संघ का भारत को कुल ऋण 10 अरब रुपये हो गया, जिससे भारत सोवियत संघ की ओर से दी जाने वाली अधिक आर्थिक सहायता प्राप्त करने वाला देश बन गया। सोवियत संघ ने भारत की

---

11. डा. प्रभात कुमार सिंह : कश्मीर समस्या एवं सोवियत संघ, क्रानिकल मासिक पत्रिका, जुलाई 1992 पृ. 133
12. डा. प्रभात कुमार सिंह : कश्मीर समस्या एवं सोवियत संघ, क्रानिकल मासिक पत्रिका, जुलाई 1992 पृ. 133

आर्थिक विकास योजनाओं के लिये सहायता देना जारी रखा। इस प्रकार ताशकन्द के बाद के समय में भारत तथा सोवियत संघ के सम्बन्ध विकसित होते रहे परन्तु इसमें पाँचवे दशक के मध्य वाली गरिमा तथा मैत्री नहीं थी।

1969 से 70 ई. के बीच दक्षिण एशिया में घटी कुछ घटनाओं ने इसे भारत–सोवियत संघ सहयोग तथा मैत्री के बारे में सोचने के लिये बाध्य कर दिया। भारत तथा सोवियत संघ के बीच मैत्रीपूर्ण सहयोग को सुदृढ़ करने की आवश्यकता के अहसास ने दोनों देशों के बीच और अधिक कूटनीतिक सम्पर्कों तथा और अधिक लाभदायक आर्थिक तथा व्यापारिक सम्बन्धों को जन्म दिया। दक्षिण एशिया में पूर्वी पाकिस्तान में गड़बड़ी के परिणामस्वरूप पैदा हुई समस्या ने भारत तथा सोवियत संघ के लिये यह आवश्यक बना दिया कि वे अपनी मित्रता को सुदृढ़ता प्रदान करें। भारत तथा सोवियत संघ के पारस्परिक हितों ने दोनों देशों के बीच 9 अगस्त 1971 को शांति, मित्रता तथा सहयोग की सन्धि को सम्भव बना दिया।

इस सन्धि ने भारत तथा सोवियत संघ के मध्य मैत्री तथा सहयोग के नये युग का सूत्रपात किया। यह सन्धि दोनों देशों के सम्बन्धों में एक मील का पत्थर साबित हुई तथा इसने भारत तथा सोवियत संघ के राजनीतिक, सांस्कृतिक, तकनीकी तथा वैज्ञानिक क्षेत्रों में सहयोग को कानूनी तथा राजनीतिक आधार दिया। एक प्रस्तावना तथा 12 अनुच्छेदों वाली इस सन्धि द्वारा भारत तथा सोवियत संघ के बीच मित्रता के वर्तमान सम्बन्धों को सुदृढ़ करने तथा उनका विस्तार करने की परस्पर इच्छा में विश्वास प्रकट किया गया। इस सन्धि में अन्तर्राष्ट्रीय शांति तथा सुरक्षा प्राप्ति की ओर भारत–सोवियत सहयोग तथा इसके साथ–साथ परस्पर व्यापार तथा तकनीकी सहयोग का विस्तार के लिये धारायें शामिल की गई। इस सन्धि से पंचशील में भी विश्वास प्रकट किया गया तथा इसमें सोवियत संघ ने भारत की गुटनिरपेक्षता के प्रति अपने विश्वास को पुनः व्यक्त किया। भारत तथा सोवियत संघ दोनों ने ही संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्यों तथा सिद्धान्तों को मानने के लिये अपना दृढ़ निश्चय व्यक्त किया।

इस प्रकार इस सन्धि से आने वाले समय में भारत तथा सोवियत संघ में सहयोग तथा मित्रता के विकास के लिये ठोस आधार प्रदान किया गया। यह सन्धि निष्ठा, मैत्री, सम्मान, परस्पर विश्वास तथा विभिन्न समझौतों का परिणाम था। जो 1953 ई. से लेकर 1971 तक भारत तथा सोवियत संघ के बीच उनके सम्बन्ध को लेकर बने थे। इससे दोनों देशों के बीच मैत्री तथा सहयोग के अवसरों को और भी उज्जवल बना दिया।

इस सन्धि का तात्कालिक उद्देश्य भारत की सुरक्षा को पाकिस्तान की ओर से किसी भी खतरे की दशा में अंकुश की तरह प्रयुक्त करना था इसे भारत के विरुद्ध चीन तथा पाकिस्तान के आपस में मिलने से रोकने के लिये भी तैयार किया गया था। वह वाशिंगटन–पिंटी–बीजिंग के बीच बढ़ती संधि जो कि अपने आप में भारत की सुरक्षा आवश्यकताओं के लिये बहुत बड़े खतरे को लिये हुये था, को बेकार करने का भी एक महत्वपूर्ण साधन बनी। इसके द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ में भारत को सोवियत संघ के समर्थन की भी निश्चितता हो गई। यह सन्धि ऐसे समय में की गई थी जब पूर्वी पाकिस्तान में हलचल मची हुयी थी तथा बांग्लादेश के निर्माण में इसने भारत द्वारा निर्णायक योगदान देने के लिये प्रत्यक्ष रूप से सहायता की। दिसम्बर 1971 के बांग्लादेश युद्ध में भारत को सोवियत संघ का पूरा समर्थन मिला तथा पाकिस्तान के पक्ष में उसने चीन तथा अमरीका के संभावित हस्तक्षेप को भी रोका। सोवियत संघ ने संयुक्त राष्ट्र संघ में भी भारत का पूरा समर्थन किया तथा संयुक्त राष्ट्र संघ में अमरीका चीन द्वारा किसी भी प्रायोजित भारत विरोधी प्रस्तावों को भी रोकने में सहायता की।

भारतीय संविधान के 42वें संविधान संशोधन से स्पष्ट था कि भारत ने प्रस्तावना में समाजवादी शब्द स्पष्ट उल्लेख कर राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर समाजवादी विचारधारा में आस्था दर्शायी तथा मैत्री एवं सहयोग एवं शाति की सन्धि नाम से सोवियत संघ में एक व्यापारिक सन्धि की पर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इस सन्धि की कड़ी आलोचना हुयी कि भारत ने अपनी गुटनिरपेक्षता की नीति को त्यागकर शीत युद्ध के एक ध्रुव में सम्मिलित होने की घोषणा कर दी है। इस तरह एक महाशक्ति के नाते सोवियत संघ ने भारत तथा पाकिस्तान के साथ लगातार शीत युद्ध के अन्तर्गत अपने सम्बन्धों का सम्पादन किया एक बार पाकिस्तान को अपने निकट लाने का प्रयास किया तथा अपने व्यापारिक हितों को साधने का प्रयास किया परन्तु देखा कि पाकिस्तान अमेरिका के पूर्व प्रभाव में है अतः सोवियत संघ ने दक्षिण एशिया में पुनः भारत को अपना मोहरा बनाया।

इसके अतिरिक्त 1970 में बांग्लादेश समस्या पैदा हो जाने से भारत की सुरक्षा तथा हितों पर और अधिक दबाव पड़ा था। भारत में बांग्लादेश के शरणार्थियों की उपस्थिति ने न केवल भारत पर आर्थिक बोझ बढ़ा दिया बल्कि भारत की सुरक्षा के लिये भी खतरा पैदा कर दिया था। भारत के सामने सहसा आर्थिक तथा सुरक्षा समस्या पैदा हो गई थी। अब भारत की सुरक्षा आवश्यकता को सोवियत संघ का भी निश्चित तथा पूर्ण समर्थन चाहिये। अमरीका तथा चीन का

पाकिस्तान समर्थन नीतियों ने भारत के लिये सोवियत संघ के साथ सम्बन्धों को सुदृढ़ करना आवश्यक बना दिया। इस समय तक सोवियत संघ को यह विश्वास हो गया था कि एशिया में उसके हितों की रक्षा भारत के साथ सशक्त सहयोग स्थापित करके ही हो सकती है।

सन्धि के पश्चात लगातार भारत तथा सोवियत संघ में मैत्री सम्बन्ध रहे जो कभी प्रगाढ़ तो कभी शिथिल बने रहे। यह कहीं न कहीं कश्मीर समस्या एवं भारत–पाक सम्बन्धों को प्रभावित करते रहे परन्तु स्पष्ट तौर पर सोवियत संघ ने कश्मीर समस्या में कोई विशेष भूमिका अदा नहीं की। शीत युद्ध के दौरान अपने पक्ष तथा विचारधारा के विस्तार के लिये सोवियत संघ को भारत की आवश्यकता थी तथा भारत को भी चीन तथा पाकिस्तान से अपने बचाव के लिये एक महाशक्ति की ओर झुकना पड़ा तथा 9 अगस्त 1971 को शान्ति, मित्रता तथा सहयोग की सन्धि की जो कि बाद के वर्षों में लगातार 1991 तक भारत सोवियत सम्बन्धों की आधार भूमि रही।

स्पष्ट है कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कश्मीर समस्या मसले पर सोवियत संघ ने भारत के पक्ष का समर्थन करते हुये अपनी भूमिका का निर्वाह किया। परन्तु दिसम्बर 1991 सोवियत संघ के पूर्ण विघटन होने के बाद 9 सोवियत गठतंत्रों द्वारा स्वतंत्र राष्ट्रों का एक राष्ट्रमण्डल स्थापित किया गया। कानूनी रूप से रूस भू. पू. सोवियत संघ का उत्तराधिकारी बना तथा संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद में विशेषाधिकार तथा स्थायी सदस्यता रूस को दे दी गयी। सोवियत संघ परमाणु शस्त्र भण्डार की चाबी भी भू. पू. सोवियत संघ के राष्ट्रपति गोर्बाच्योव द्वारा रूस के राष्ट्रपति बोरिस येल्तसिन को सौंप दी गई। सोवियत संघ के विघटन से भारत को बहुत हानि हुई क्योंकि इसकी समाप्ति का इसके लिये अर्थ था उच्चकोटि के व्यापारिक, औद्योगिक तथा तकनीकी सम्बन्धों और सुरक्षा शस्त्रों की आपूर्ति के युग का अन्त। भारत के लिये अपनी सुरक्षा मशीनरी तथा विमानों के पुर्जों की प्राप्ति का विषय एक सिरदर्द बन गया। सोवियत संघ जैसी महाशक्ति की प्रगाढ़ मित्रता तथा सहयोग के अन्त से, वह भी एक ऐसे समय में जब पाकिस्तान जम्मू–कश्मीर तथा पंजाब में युद्ध जैसी स्थिति बनाये हुये था जो किसी भी समय वास्तविक युद्ध में परिवर्तित हो सकती थी, सुरक्षा साधनों की आपूर्ति की समस्या ने भारत के विदेश सम्बन्धों को सीमित कर दिया। 1989–91 में भारत सोवियत संघ की दुर्बलताओं तथा अस्थिरता से उत्पन्न समस्या को भलीभाँति भाँप गया था तभी इसने रूस के राष्ट्रपति बोरिस येल्तसिन से घनिष्ठता स्थापित करने का प्रयत्न आरम्भ कर दिया।

जनवरी 1991 में भारत तथा भू. पू. सोवियत संघ ने सोवियत अन्तरिक्ष संस्था ग्लावकोसमोस द्वारा भारत को क्रायोजेनिक राकेट इंजनों की आपूर्ति के लिये एक समझौते पर हस्ताक्षर किये थे। भारत को इन इंजनों का प्रयोग अन्तरिक्ष में उपग्रह छोड़ने के लिये करना था। रूस ने समझौते को बनाये रखना स्वीकार कर लिया। रूस द्वारा भारत भेजे जाने वाले सुरक्षा कलपुर्जों की आपूर्ति जारी रही। भारत के भू. पू. रक्षामंत्री शरद पवार ने यहाँ तक घोषणा की थी कि भारत की सुरक्षा तैयारी सुरक्षा कार्यों के लिये प्रयुक्त होने वाली मशीनों के कलपुर्जों की आपूर्ति की ओर अधिक तेज करके तथा रूस से तकनीकी सहायता प्राप्त करके बनाये रखी जायेगी भारत को 40 करोड़ डालर के कर्जे के अन्तर्गत देनी थी।

भारत की स्थल, जल तथा नौसेना द्वारा रक्षा कार्यों में प्रयुक्त होने वाले प्रमुख रूसी सैनिक साजो–सामान, मशीनों के कलपुर्जों, प्रतिरक्षा के उपकरणों, उत्पादन सहायता, हथियारों के आधुनिकीकरण की सेवाओं की आपूर्ति को निर्विघ्न बनाये रखने के लिये दोनों देशों ने एक विस्तृत समझौता किया। यह लम्बा–चौड़ा समझौता साउथ ब्लाक में दोनों देशों के विदेश मंत्रियों तथा उनके प्रतिनिधियों के बीच 75 मिनट की बाचतीत के बाद किया गया।

मि. येल्तसिन ने घोषणा की कि रूस कश्मीर मुद्दे पर संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद में भारत का समर्थन करेगा। जब श्री राव ने रूस के राष्ट्रपति को बताया कि कश्मीर भारत का एक अभिन्न अंग है, तो श्री येल्तसिन ने भारत की एकता तथा भू क्षेत्रीय अखण्डता के लिये अपने देश के समर्थन की घोषणा की द्विपक्षीय व्यापार को बढ़ाने की घोषणा की गई तथा यह व्यापार 1993 तक 2.5 अरब डालर तथा 1994 तक 3.5 अरब डालर तक पहुँच सकता है।[13]

जून 1996 में भारत में संयुक्त मोर्चा की सरकार बनी तथा श्री एच. डी. देवगौड़ा के काल में 30 नवम्बर 1996 को दोनों देशों ने $108 विलियन मूल्य का समझौता किया जिसके अन्तर्गत रूस ने अति आधुनिक SU 30 MKS विमानों की दो एक्वॉड्रन भारत को बेच दी।

मई 1998 में जब भारत ने पाँच परमाणु विस्फोट किये तो रूसी नेताओं ने कहा कि इससे वे निराश हुये थे। लेकिन रूस ने भारत के विरुद्ध न तो आर्थिक प्रतिबन्ध लगाये तथा न ही इस बात पर सहमति प्रकट की कि जी–8 देशों को मिलकर ऐसा करना चाहिये। जून 1998 में श्री बृजेश मिश्र की रूसी यात्रा के बाद यह आशा दृढ़ रूप से उभरकर सामने आई कि शीघ्र

---

13. ज्योति स्वरूप शुक्ला : भारत रूस सम्बन्धों में नये आयाम, प्रतियोगिता दर्पण, मई 1995

ही भारत तथा रूस के सामरिक महत्व के सम्बन्धों का व्यवस्थित विकास होगा। दोनों देशों ने अमरीकी दबाव की परवाह न करते हुये एक दीर्घकालीन सन् 2010 तक का सैनिक तकनीकी सहयोग समझौता किया। आर्थिक औद्योगिक तथा राजनीतिक सहयोग के क्षेत्रों को अधिक विकसित करने के लिये भी समझौते किये गये। रूस ने भारत के इस दावे का समर्थन किया कि इसे संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद का स्थाई सदस्य बना दिया जाना चाहिये। रूसी विमान वाहक युद्ध–पोत एडमिरल गोशकोव की भारत द्वारा खरीदने की संभावना के मुद्दे पर भी एक याद–पत्र पर हस्ताक्षर किये।

1999 में रूस ने भारत को SU 30 MKS लड़ाकू हवाई जहाजों की खेप भेजी। भारत पाक कारगिल युद्ध के सम्बन्ध में रूस ने स्पष्ट रूप से पाकिस्तान को दोषी माना तथा भारतीय सैनिक कार्यवाही को आवश्यक माना।

अक्टूबर 2000 रूस के राष्ट्रपति पुतिन ने भारत की यात्रा की। यात्रा के दौरान भारत तथा रूस ने आपसी सम्बन्धों के विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाने के लिये 10 समझौते किये। विज्ञान तथा टैक्नोलोजी में सहयोग का समुचित दीर्घकालीन समझौता, कृषि क्षेत्र में सहयोग का अर्ध सरकारी समझौता, डाक संचार समझौता, नागरिक एवं वाणिज्यक विषय में आपसी कानूनी सहायता की सन्धि, कानून, न्याय तथा कम्पनी मामलों के मंत्रालयों के 2000–02 कार्यकाल के लिये सांस्कृतिक सुरक्षा या समझौता भारत तथा रूस की कम्पनियों में सहयोग के दो समझौते तथा भारतीय प्रान्तों एवं संघीय क्षेत्रों तथा रूसी संघ इकाइयों में सहयोग के सिद्धान्तों पर दोनों देशों में समझौता।[14]

कश्मीर मुद्दे पर रूसी नेताओं ने भारतीय मत का समर्थन किया तथा यह कहा कि इस मुद्दे का समाधान द्विपक्षीय प्रयासों द्वारा बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप के किया जाना चाहिये।

उपरोक्त समस्त क्रियाओं एवं समझौतों के माध्यम से कहा जा सकता है कि सोवियत रूस ने यह स्पष्ट कर दिया कि वह प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष दोनों ही रूप में एक बड़े भाई की तरह अपने सम्मान के साथ भारत का पूरी तरह से साथ देता है एवं इन सम्बन्धों का भविष्य भी उज्जवल जान पड़ता है।

---

14. यूनुस खान : भारत रूस सम्बन्ध, परीक्षा मंथन भाग 3, पृ. 143

चीन और कश्मीर समस्या

24 दिसम्बर 1949 को लेकर जब भारत ने चीन को लगभग दो माह पूर्व मान्यता दी थी, तीन दशकों तक भारत तथा चीन के सम्बन्धों में सौम्य तथा अशुभ दोनों प्रकार के चरण विद्यमान रहे हैं एवं कश्मीर समस्या के सन्दर्भ में चीन ने लगातार भारत विरोध का रूप अख्तियार किया। प्रारम्भिक वर्षों में चीन के साथ मित्रता एवं सहयोग के भारत के यत्नों को चीन ने अनदेखा किया क्योंकि चीन भारत को पूँजीवाद का उपांग और जवाहर लाल नेहरू तथा दूसरे भारतीय नेताओं को पूंजीवाद का पिछलग्गू अथवा साम्राज्यवाद के भागते कुत्ते कहता रहा।

भारत चीन सम्बन्धों में एक समय ऐसा भी था जिसमें हिन्दी–चीनी भाई भाई के नारे भी गूँजे थे परन्तु 1962 के भारत चीन युद्ध ने इन सभी नारों को एक ओर कर एक कटुता उत्पन्न कर दी। चीन के आक्रमण से न केवल भारत–चीन सम्बन्धों को भारी धक्का लगा अपितु अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत की साख भी गिर गई। कई पश्चिमी प्रेक्षकों ने महसूस किया कि चीन के साथ सीमा विवाद भारत के विदेशी सम्बन्धों तथा स्थिति निर्धारण के लिये गत्यारोधात्मक प्रमाणित हुये। इस हार से अफ्रीकी एशियाई राष्ट्रों की नजर में भारत का गौरव कम हो गया। इस हार से पाकिस्तान भी यह सोचने को उत्साहित हुआ कि वह कश्मीर का सैनिक समाधान भारत पर लाद सकता है। इसी विचार से पाकिस्तान ने 1965 में भारत पर आक्रमण कर दिया परन्तु तब भारत ने करारा उत्तर दिया। आर्थिक दृष्टि से भी चीन के युद्ध ने भारत को हानि पहुँचाई। विकास की सभी योजनायें पीछे पड़ गई। भारत को अपना सैनिक व्यय बढ़ाने पर मजबूर होना पड़ा। वैसे इस आक्रमण ने भारतीय सुरक्षा हितों के प्रति अधिक चौकस और संगठित कर दिया। इस आक्रमण से भारत जाग उठा, उसने अपनी सुरक्षा को परिष्कृत किया, लोगों को सुसंगठित किया और अपने स्रोतों को उचित रूप से प्रयोग में लाने का उपक्रम किया।

1962 ई. के उत्तर युद्धकाल में सम्पर्क की कमी के कारण भारत चीन सम्बन्ध टूटे रहे जो 1970–71 तक ऐसे ही बने रहे। युद्ध के बाद दोनों देशों में से किसी ने भी राजदूतों की नियुक्ति नहीं की और दोनों देशों के बीच कूटनीतिक सम्बन्ध शत्रुतापूर्ण व्यवहार अपनाने लगा। दूसरे छोटे देशों से सीमा समझौता करके चीन भारत को अलग–थलग करने की कोशिश करने लगा। इसका उद्देश्य यह था कि चीन विश्व को यह बतलाना चाहता था कि वह पड़ोसियों के साथ सीमा–विवाद हल करने में कितना उदार तथा तर्कसंगत है, जबकि भारत इसके विपरीत

कठोर एवं असमझौतावादी है। चीन ने पुनः भारत विरोधी प्रचार तेज कर दिया। एक बार फिर चीन ने भारत को साम्राज्यवादियों का पिट्ठू कहना शुरू कर दिया और भारत को साम्राज्यवादियों के हाथ की कठपुतली कहा, जो इसे अन्तर्राष्ट्रीय चीन विरोधी अभियान में प्रयोग करते थे। उसने सिक्किम और भूटान के प्रति भारतीय नीति को विस्तारवादी कहना आरम्भ कर दिया।(15)

केवल इतना ही नहीं, चीन ने भारत के शत्रु पाकिस्तान को कश्मीर के लिये पूर्ण समर्थन, आर्थिक तथा सैनिक सहायता देकर मित्र बनाना आरम्भ किया। पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर की सीमा के सम्बन्ध में चीन ने पाकिस्तान के साथ एक सीमा तक समझौता पर हस्ताक्षर किये। 1965 ई. के भारत–पाक युद्ध में चीन ने पाकिस्तान को नैतिक राजनैतिक, मनोवैज्ञानिक तथा सैनिक सहायता के रूप में पूर्ण समर्थन दिया। भारत जब पाकिस्तानी आक्रमण को पीछे धकेलने का यत्न कर रहा था तभी चीन ने भारत–चीन सीमा पर तनाव पैदा करने की चेष्टा की। पाकिस्तान को समर्थन देने के लिये तथा भारत पर दबाव डालने के लिये चीन ने भारत को गम्भीर परिणामों की धमकी भी दी। लेकिन चीन ने 1965 ई. के भारत पाक युद्ध में किसी भी प्रकार के सैनिक हस्तक्षेप से गुरेज किया। 1965 ई. के बाद चीन और पाकिस्तान दोनों ने मिलकर दक्षिण एशिया में भारत विरोधी शक्तियों को संगठित करना शुरू कर दिया। चीन एवं पाकिस्तान की दुर्गम सन्धि ने भारत को सताना शुरू कर दिया। बीजिंग पिंडी धुरी, 1964 अणुबम विस्फोट के बाद चीन की तेजी से बढ़ती सैनिक शक्ति, चीन का भारत से सीमा विवाद के सम्बन्ध में कड़ा रुख, सीमा पर चीन और भारतीय सेना में बढ़ती हुई गोलाबारी की घटनायें तथा चीन का भारत विरोधी तत्वों जैसे आतंकवादी नागाओं, मिजो विद्रोहियों, नक्सलवादियों का समर्थन आदि सबने इन देशों के आपसी सम्बन्धों पर गहरा तनाव व दबाव पैदा कर दिया।

भारत–चीन सम्बन्धों में बने हुये सीमा तनावों, भारत सोवियत संघ की बढ़ रही मित्रता जिसने 1971 तक द्विपक्षीय मैत्री सन्धि को जन्म दिया था तथा चीन पाकिस्तान की भारत विरोधी धुरी ने 1962–67 तक भारत चीन सम्बन्धों को सीमित तथा कटुता से भरे हुये बनाये रखा।

दिसम्बर 1971 के भारत पाक युद्ध में चीन का भारत की भूमिका पर विरोध इतना शत्रुतापूर्ण नहीं था जितना 1965 ई. में था। वैसे कुछ प्रकार की सकारात्मक घटनाओं के साथ–साथ चीनियों द्वारा भारतीय क्षेत्रों का अतिक्रमण और भारतीय और चीनी सैनिकों के बीच

---

15. डा. प्रभात कुमार सिंह : भारत चीन एवं कश्मीर समस्या, सरस सलिल, जून 1995

पहले की तरह सीमा घटनायें होती रही। चीनी प्रेस भारत के लिये उतनी ही शत्रुतापूर्ण बनी रही और चीन पाकिस्तान को भारत के विरोध में समर्थन देता रहा। जनवरी 1972 में पाकिस्तानी प्रधानमंत्री श्री भुट्टो की चीन यात्रा की पूर्व सन्ध्या पर "पीकिंग डेली" ने अपने सम्पादकीय में भारत तथा सोवियत संघ की बांग्लादेश के युद्ध में निभाई गई भूमिका के लिये आलोचना की और चेतावनी दी कि भारत इस उपमहाद्वीप में और अधिक समस्याओं की अपेक्षा कर सकता है। 1972 ई. के पहले महीनों में चीन के अनेक नेताओं ने भारत के विरुद्ध बयान दिये।

लेकिन इन्हीं दिनों चीन ने भारत के साथ सम्बन्धों को सामान्य बनाने की प्रक्रिया को बनाये जाने की इच्छा भी प्रकट की। एक ओर चीन ने पाकिस्तान को कश्मीर समस्या का पूर्ण समर्थन दिया और दूसरी ओर भारत तथा पाकिस्तान के बीच समस्याओं के शान्तिपूर्ण समाधान के लिये वार्तालाप का भी स्वागत किया। जब श्रीमती इन्द्रिरा गाँधी चेकोस्लोवाकिया तथा हंगरी की यात्रा पर गई तो चीनी कूटनीतिज्ञ सभी समारोहों में उपस्थित रहे और भारतीय संवाददाताओं को दोनों देशों के सम्बन्ध के सुधारने की आवश्यकता व्यक्त करते रहे। इस समय के दौरान चीन की भारत के प्रति नीति में कई उतार–चढ़ाव आये हैं लेकिन इसे भी दशक के कठोर रूख तथा 1962 के काल में भारत चीन सम्बन्धों में आये गतिरोध की अपेक्षा अच्छा समझा जाने लगा। 1972 ई. के मध्य चीनी तथा भारतीय अधिकारियों के बीच गैर सरकारी तथा अप्रत्यक्ष स्तर पर सम्बन्ध पुनः बढ़े। वार्सा में भारतीय और चीनी राजदूतों के मध्य महत्वपूर्ण वार्तायें हुई और इस बात में बड़े सुदृढ़ संकेत मिले कि निकट भविष्य में भारत चीनी सम्बन्धों में सुधार आयेगा। भारतीय एवं चीनी नेता भी संभावित लाभ की बात करने लगे जो दोनों अपने वाणिज्य सम्बन्धों की स्थापना से प्राप्त कर सकते थे। इसी समय भारत चीनी सम्बन्धों की समीक्षा करते हुये तत्कालीन भारतीय विदेशमंत्री सरदार स्वर्ण सिंह ने 15 दिसम्बर 1972 को राज्यसभा में कहा कि सरकार दोनों देशों के मध्य सम्बन्धों से प्रसन्न नहीं थी। "भारत बीती हुई बातों को बिसारने तथा चीन के साथ नये सम्बन्ध स्थापित करने को तैयार था। उन्होंने कहा "भूगोल ने हमें इस महान देश का पड़ोसी बनाया, हम चीन को और चीन भारत को अब और अधिक दूर नहीं रख सकता। युगों से सीमा–विवाद कई देशों में रहा है और इसका समाधान भी शांतिपूर्ण ढंग से हुआ। इसलिये हमें ऐसा कोई कारण नहीं दिखाई देता कि भारत और चीन इस समस्या का कोई समाधान नहीं ढूढ़ सकेगें।[16] इस बयान से यह बात स्पष्ट हो गई कि 1972 तक भारत चीन के साथ अच्छे सम्बन्धों

16. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, भाई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 243

का नया अध्याय शुरू करने का इच्छुक था किन्तु 1972 ई. में चीनी नेता पूर्णतया भारतीय आकांक्षाओं का उचित प्रति उत्तर देने में असफल रहे वे अब भी इस बात को अच्छी तरह समझते थे कि बातचीत में नर्म तथा कर्म में कठोर बने रहे।"(17)

उपरोक्त सम्बन्धों के बाद भारत और चीन के सम्बन्धों में लगातार कटुता एवं सामान्य दोनों ही प्रकार के सम्बन्ध आये परन्तु विशेष रूप से कश्मीर समस्या को प्रभावित नहीं किया।

मई 1998 में भारत चीन सम्बन्धों में तनाव पैदा हो गया जब भारत ने 11 व 13 मई को पाँच परमाणु परीक्षण किये तथा अपने आप को परमाणु शस्त्र धारक देश घोषित कर दिया। ऐसी नीति परिवर्तन करते समय भारत ने शस्त्र धारक देश बनने के अपने निर्णय के पक्ष में जिन सुरक्षा कारणों को उद्धृत किया वे थे चीन की परमाणु शक्ति, पाकिस्तान की चोरी से विकसित परमाणु शस्त्र क्षमता तथा चीन उत्तरी कोरिया पाकिस्तान का परमाणु तथा मिसाइल का विकास सहयोग। भारत के रक्षामंत्री श्री जार्ज फर्नांडीज ने तो चीन को शत्रु नम्बर एक की संज्ञा दे डाली। इससे चीन की सरकार ने कठोर रूप से भारत की आलोचना की। भारतीय परमाणु विस्फोटों को विश्व शान्ति, विशेषकर दक्षिण एशिया में शांति का दुश्मन बतलाया। यह भी कहा कि नई भारतीय परमाणु नीति पाकिस्तान को परमाणु शस्त्र बनाने के लिये विवश करेगी तथा दक्षिण एशिया में परमाणु शस्त्र होड़ को पैदा करेगी। चीन ने अमरीका तथा कुछ अन्य देशों के साथ मिलकर भारत पर परमाणु शस्त्र नीति को समाप्त किये जाने के लिये तथा N.P.T. और C.T.B.T. पर हस्ताक्षर करने के लिये भारी दबाव डालने की नीति अपनाई। 5 जून 1998 को संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद द्वारा यह प्रस्ताव पास करवाया गया कि परीक्षण बन्द किये जायें, शस्त्र विकास प्रोग्राम बन्द किया जाये, मिसाइल विकास कार्यक्रम छोड़ दिया जाये तथा N.P.T. और C.T.B.T. पर हस्ताक्षर किये जायें। जुलाई 1998 में चीन तथा अमरीका ने यह घोषणा की कि दोनों देश इस प्रस्ताव का उद्देश्य प्राप्त करने के लिये निकट रूप में तालमेल करेंगे। 14 जुलाई 1998 को पहली बार कश्मीर मुद्दे के समाधान के लिये पाँच देशों भारत पाकिस्तान अमरीका चीन तथा रूस की एक बैठक बुलाने की माँग की। यह माँग कश्मीर मुद्दे के अन्तर्राष्ट्रीयकरण के लिये तथा भारत पर दबाव बनाने के लिये की गई।

पाकिस्तान के साथ कारगिल युद्ध के समय में चीन ने एक सकारात्मक दृष्टिकोण

---

17. यू. आर. घई : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, भाई हीरा गेट, जालन्धर, पृ. 243

अपनाया तथा नियंत्रण रेखा के सम्मान की बात की। चीन ने पाकिस्तान का पक्ष नहीं लिया। जून 1999 में भारतीय विदेशमंत्री श्री जसवन्त सिंह ने चीन की यात्रा की तथा चीन के नेताओं से उच्च स्तरीय वार्तालाप किया। दोनों देशों ने आपसी आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक सहयोग के उच्च स्तर पर विकसित करने का निर्णय लिया। दोनों देशों ने सामाजिक सम्बन्धों पर वार्तालाप की आवश्यकता को भी स्वीकार किया। इस यात्रा के दौरान दोनों देशों के विदेश मंत्रियों ने एक सुरक्षा वार्तालाप आरम्भ करने पर सहमति बनाई। झगड़े वाली सीमा के (भारत–चीन सीमा) सम्बन्ध में नियंत्रण रेखा को स्पष्ट करने के लिये औपचारिक बातचीत आरम्भ करने का निर्णय लिया गया कि राजनीति कूटनीतिक तथा सैनिक स्तर पर प्रतिनिधि मण्डलों की यात्राओं को बढ़ावा दिया जायेगा ताकि भारत चीन सम्बन्धों को परिपक्व बनाया जा सके।

मई 2000 में राष्ट्रपति के. आर. नरायणन ने चीन की राजकीय यात्रा की तथा चीन के नेताओं के साथ आपसी हितों के मुद्दों पर बातचीत की।

17 जुलाई 2000 के दिन भारत तथा चीन ने पहली बार टेक्नोलोजी के महत्वपूर्ण क्षेत्र में सहयोग के लिये एक समय के याद पत्र पर हस्ताक्षर किये। यह कार्य बीजिंग भारत के सूचना टेक्नोलोजी मंत्री श्री प्रमोद महाजन तथा चीन के मंत्री वू जीचुयेन ने किया। इसके अन्तर्गत दोनों देशों में इन मंत्रालयों के सूचना उद्योग के सम्बन्ध में नीतियों तथा रक्षा योजनाओं का आदान प्रदान परस्पर निवेश संयुक्त उपक्रमों तथा टेक्नोलोजी हस्तान्तरण के क्षेत्र में सहयोग करना था।

नई शताब्दी में विकसित हो रहे भारत–चीन सम्बन्धों को अधिक गति देने का एक अन्य प्रस्ताव भी जुलाई 2000 में हुआ जब चीन के विदेशमंत्री वेगजीम्सुन ने भारत की यात्रा की तथा विदेशमंत्री श्री जसवन्त सिंह ने वार्तालाप किया। यह निर्णय किया गया कि दोनों देशों को अब ऐसी कार्यवाही करनी थी जिससे अब सीमा विवाद का समाधान हो जाये। दोनों देशों के विशेषज्ञों को अब जल्दी मिलना था ताकि मध्य क्षेत्र में वास्तविक नियंत्रण रेखा (उत्तर प्रदेश तथा हिमाचल प्रदेश से लगती भारत–चीन सीमा) रेखांकन का काम शीघ्र हो सके। इस क्षेत्र में भारत–चीन सीमा विवाद पर प्रगति के साथ ही उत्तरी तथा पूर्वी सीमाओं की ओर लम्बी सीमा का रेखांकन करना सरल हो जायेगा। दोनों देश वास्तविक नियंत्रण रेखा का सम्मान करने तथा सीमा क्षेत्र में शान्ति एवं प्रशान्ति बनाये रखने के समझौते का 1993 से पालन कर रहे हैं। सीमा विवाद के समाधान के लिये आवश्यक है कि सीमा के रेखांकन का कार्य सम्पन्न हो।

इस दिशा में प्रगति 2002 तक यह हुयी कि चीन ने भारत की वर्षों पुरानी यह माँग

स्वीकार कर ली कि भारत तथा चीन एक संयुक्त नक्शे का प्रकाशन करेगा, जिससे सीमा विवाद को समाप्त करने की महत्वपूर्ण पहल को स्वीकार किया जा सके।[18]

उपरोक्त परिस्थितियों में बदलाव आने वाले समय में भारत चीन सम्बन्धों तथा कश्मीर समस्या के सन्दर्भ में भविष्य के सम्बन्ध में सुहावनी तथा आशावादी भावना रखते हुये भी हमें गुमराह नहीं होना चाहिये और यह नहीं मान लेना चाहिये कि वही भाई–भाई वाला युग वापस आने वाला है। कोई भी इस बात से इन्कार नहीं कर सकता और करना भी नहीं चाहिये कि हमें अपने उत्तरी पड़ोसी जो न केवल एशिया में ही बल्कि सारे विश्व की एक बड़ी शक्ति है, के साथ मैत्रीपूर्ण, स्नेहपूर्ण, सहयोगात्मक, लाभदायक तथा मधुर सम्बन्ध कायम करने हैं।

तथापि यह बात स्मरण रखी जानी चाहिये कि सर्वश्रेष्ठ मैत्री निरन्तर सहनशीलता समस्याओं के शान्तिपूर्ण एवं शीघ्र समाधान तथा स्वैच्छिक पारस्परिकता के आधार पर ही विकसित की जा सकती है।

क्षेत्रीय प्रयासों मूलतः सार्क तथा महाशक्तियों के शीतयुद्ध काल में विभाजन के फलस्वरूप कश्मीर समस्या के लिये कोई सकारात्मक प्रयास न होने तथा एक दूसरे की ओर टाल कर कोई विशेष प्रयास नहीं किये गये। महाशक्तियों ने दक्षिण एशिया में अपने वर्चस्व के लिये स्पष्ट रूप से दोनों ही देशों को कुछ आर्थिक लाभ प्रदान कर बहलाने का प्रयास किया है। अतः आज कश्मीर समस्या एक नासूर बन गयी है जिसका कि तत्काल सर्जरी ही एक मात्र उपाय है। अन्यथा यह समस्या दोनों ही देशों (भारत और पाकिस्तान) को आर्थिक रूप से अपंग बना देगी तथा दोनों के लिये ही अपने अस्तित्व का संकट खड़ा हो जायेगा। आज भारत अपनी आय का 25% तथा पाकिस्तान 35% रक्षा पर खर्च कर रहा है यही स्थिति विद्यमान रही तो दोनों ही देशों का भविष्य कुछ उज्जवल नहीं दिखाई देता।

---

18. बी. बी. सी. लन्दन, 20 मई 2002, घटनाक्रम कार्यक्रम में।

सप्तम् अध्याय

अध्याय सप्तम्

सुझाव एवं सम्भावनायें

भारत पाक सम्बन्ध में आँख की किरकिरी ''कश्मीर समस्या''

पाकिस्तान, संयुक्त राष्ट्र और पश्चिमी देशों से गुहार लगाता रहा है कि कश्मीर मुद्दे की नये सिरे से जाँच पड़ताल की जाये। पाकिस्तान ने ऐसा बहुत सोच समझकर किया। इस मुद्दे पर दक्षेस सम्मेलन में अपनी पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार नवाज शरीफ ने कश्मीर मुद्दे को मुख्य मसौदे के रूप में पेश किया। जब भारत ने विदेश सचिव स्तर की वार्ता की पहल की तो पाकिस्तान ने नामंजूर कर दिया।

मई 98 में परमाणु विस्फोटों के बाद पश्चिमी देशों की रुचि दक्षिण एशिया में अचानक बढ़ गई है। चूँकि इस क्षेत्र की शांति में बाधक मुख्यतः कश्मीर समस्या ही है। इसलिये पश्चिमी देशों का मानना है कि इस समस्या का हल यथाशीघ्र खोज लिया जाये। इस पहल को अंजाम देने के लिये पश्चिमी देश शक्ति प्रदर्शन की भी बात कह रहे हैं।[1]

इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि पश्चिमी विचारधारा के नाम एंग्लो अमेरिकन (ब्रिटेन और अमेरिकी) विचारधारा सुर्खियों में रही है। इस विचार के तहत पाकिस्तान को भारत के बराबर लाने की कोशिश की गई। इस पहल के जरिये दक्षिण एशिया में शक्ति संतुलन की परिकल्पना की गई। यह भी आशा की गई थी कि इस शक्ति संतुलन से इस क्षेत्र में शान्ति बनी रहेगी और संभवतः कश्मीर समस्या का भी कोई हल ढूंढ़ लिया जायेगा। लेकिन ऐसा नहीं हुआ, बल्कि परिस्थितियों में नकारात्मक परिवर्तन ही दृष्टिगोचर हुये। कश्मीर समस्या की आड़ में पश्चिमी देशों की लिप्सा जगजाहिर हो चुकी है। 1952 में जब भारतीय प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू और शेख अब्दुल्ला के बीच जम्मू कश्मीर की स्वायत्तता की बात चल रही थी तो पश्चिमी देशों ने इसका विरोध किया। पश्चिमी देशों को ऐसा प्रतीत हुआ कि यह वार्ता सफल हो जाती है तो पाक अधिकृत कश्मीर भी खतरे में आ जायेगा। चूँकि शेख अब्दुल्ला जम्मू कश्मीर के लोकप्रिय नेता थे इसलिये पाक अधिकृत कश्मीर की जनता भी उन्हें अपना नेता मानती थी। पश्चिमी देशों को इस बात की आशंका थी कि अगर यह समझौता सफल हो जाता है तो भारत

---

1. Abha Dixit : Indo-Pak relations today, World focus monthly discussion journal, June-July, 1998, p.p. 39

इसे पूरा करने का साहस भी रखता है। उसी समय से आज तक कश्मीर समस्या भारत पाकिस्तान सम्बन्धों में आँख की किरकिरी बनी हुयी है।

यही कारण था कि समझौते के दौरान अमेरिकी राष्ट्रपति के विशेष दूत भारत और पाकिस्तान का दौरा करते रहे। ठीक इसी समय पश्चिमी देश शेख अब्दुल्ला के कान भरने लगे। पश्चिमी देशों ने जम्मू कश्मीर की स्वतंत्रता का मंत्र शेख अब्दुल्ला को दिया। साथ में यह सीख भी दी कि शेख अब्दुल्ला इस मंत्र का जाप करते रहें। इस तरह कश्मीर की समस्या का जो अंत संभावित और निकट प्रतीत हो रहा था उसे हजारों मील घसीटकर संयुक्त राष्ट्र में पटक दिया गया। पश्चिमी देशों द्वारा ऐसा किया जाना महज एक संयोग नहीं था और न ही शेख अब्दुल्ला के प्रति उमड़ा हुआ प्यार था और न एकीकृत कश्मीर की सुन्दरता और अक्षुण्णता के प्रति निःस्वार्थ कृतज्ञता। बल्कि यह एक सुनियोजित पहल थी जिसमें उनकी स्वार्थ भावना काम कर रही थी। भारतीय नीति निर्देशकों द्वारा ब्रिटेन की पहल की चर्चा नहीं की जाती। अगस्त 1947 के बाद ब्रिटेन की विशेष रुचि इस क्षेत्र में बनी रही। पाकिस्तान की सहायता से ब्रिटेन ने गिलगित क्षेत्र को अपने कब्जे में कर लिया था, यहाँ पर ब्रिटेन की सैनिक छावनी भी थी। जब पाकिस्तान ने जम्मू कश्मीर पर कबायली हमला किया तो गिलगित क्षेत्र सामरिक दृष्टि से पाकिस्तान के लिये उपयोगी सिद्ध हुआ। गिलगित की सैनिक छावनी में प्रशिक्षित सेना पूरी तरह से ब्रिटेन के अधिकार में थी। इस छावनी के सैनिकों ने न केवल पाकिस्तानी मुहिम को आगे बढ़ाया, बल्कि गिलगित की पहाड़ियों पर पाकिस्तानी झंडा फहराया।(2)

जम्मू कश्मीर के भारत में विलय के बाद गिलगित क्षेत्र में पाकिस्तानी झंडा फहराया गया था। विलय के दौरान जम्मू कश्मीर का एक बड़ा हिस्सा भारतीय गणराज्य का अभिन्न अंग बन गया लेकिन ब्रितानी पहल की वजह से सामरिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण इलाका पाकिस्तानी कब्जे में चला गया। इस क्षेत्र के चले जाने से भारत, अफगानिस्तान और मध्य एशिया से पूरी तरह अलग हो गया। उत्तर–पश्चिम के पख्तून इलाके से भी भारत की जमीनी दूरी बढ़ गई। बावजूद इसके कि राजनैतिक दृष्टि से इस क्षेत्र के नेता कांग्रेस की नीतियों के हिमायती थे। खुद गिलगित जिसकी सीमा अफगानिस्तान की सीमा एवं चीन की सीमा से मिलती थी वह पाकिस्तान के कब्जे में रह गया।

---

2. Uma Singh : India Pakistan relations in a historical perspective, World focus monthly discussion journal, June-July, 1998

यह माना गया कि कश्मीर मुद्दा विवादास्पद है। इसकी जाँच पड़ताल नये सिरे से होनी चाहिये। लेकिन 1997 तक इसमें उल्लेखनीय बदलाव देखे गये। अमेरिकी दृष्टिकोण में भारत का महत्व काफी बढ़ गया था। उस दौरान अमेरिका चीन को घेरने की कोशिश में था। ताईवान की समस्या ने एक दूसरे को विरोधी बना दिया था। चूँकि चीन को घेरने की कोशिश भारतीय प्रयास के बिना संभव प्रतीत नहीं होती इसलिये अमेरिका भारतीय समस्याओं के प्रति संवेदनशील रुख अख्तियार करने लगा। इस समीकरण के साथ कश्मीर का मुद्दा भी जुड़ा हुआ था। 1998 के आरम्भिक महीनों में जब अमेरिकी राष्ट्रपति के विशेष दूत भारतीय महाद्वीप के दौरे पर थे तो उन्होंने कश्मीर मुद्दे को विशेष रूप से उल्लेखित किया था। जब अमरीकी विचार यह था कि कश्मीर समस्या का हल शिमला समझौते के तहत खोजा जाना चाहिये।

परमाणु विस्फोटों के उपरान्त अमेरिकी विचार फिर बदल गये। दक्षिण एशिया के हथियारों की होड़ के लिये भारत को दोषी ठहराया जाने लगा। विवाद के केन्द्र में कश्मीर मुद्दा ही अशांति की जड़ है इसलिये इसका हल ढूंढ निकालना अत्यन्त आवश्यक है। पाकिस्तान यही चाहता था कि परमाणु विस्फोटों से उत्पन्न अशांति को सुलझाने के लिये पश्चिमी देश अन्तर्राष्ट्रीय मध्यस्थता पर जोर दें। इसलिये पाकिस्तानी आवाज पश्चिमी देशों को मधुर लगी। दो–तीन महीनों में संयुक्त राष्ट्र और पश्चिमी देश लगातार भारत पर दबाब डाल रहे थे कि भारत अन्तर्राष्ट्रीय मध्यस्थता की तार्किकता को स्वीकार कर ले।

अगर तह में जाकर कारणों की तलाश की जाये तो प्रतीत होता है कि जम्मू कश्मीर की स्वतंत्रता उसके मौजूदा समीकरणों के विरोध में जायेगी। अगर ऐसा होता है तो पाकिस्तान वे सामरिक स्थल खो देगा जो उसके कबायली आक्रमण के द्वारा 1947–48 में हथिया लिये थे। इस परिवर्तन के साथ ही पाकिंस्तान और चीन का सामरिक जोड़ भी विच्छिन्न हो जायेगा। ऐसी स्थिति में चीनी हथियारों की निर्बाध सप्लाई भी ठप्प पड़ जायेगी। संभवतः चीन और पश्चिमी देशों के लिये पाकिस्तान की अहमियत अत्यन्त सीमित हो जायेगी। जाहिर है कि इन बदलावों को देखते हुये पाकिस्तान इसकी मुखालफत नहीं कर पायेगा।[3]

चीन के लिये भी यह परिवर्तन उसके सामरिक विस्तार के अनुकूल नहीं होगा। दक्षिण एशिया में चीन की पहुँच भी इसी बहाने के जरिये होती है। हाल में चीनी नेताओं के वक्तव्य से

---

3. Uma Singh : India Pakistan relations in a historical perspective, World focus monthly discussion journal, June-July, 1998

स्पष्ट होता है कि चीन दक्षिण एशिया में अपनी शक्ति का विस्तार करना चाहता है। ऐसी स्थिति में जम्मू कश्मीर का स्वतंत्र अस्तित्व चीन के लिये महंगा पड़ेगा। संयुक्त राष्ट्र प्रस्ताव जम्मू कश्मीर की स्वतंत्रता का उद्घोष नहीं करता। इस प्रस्ताव में पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर की मुक्ति की बात कही गई थी। यह भी व्यवस्था की गई थी कि एकीकृत जम्मू कश्मीर की जनता को अपना भविष्य निर्धारित करने का पूरा अधिकार होगा।

परमाणु विस्फोटों के उपरान्त पश्चिमी देशों द्वारा कश्मीर की समस्या को और पेचीदा बनाया जा रहा है। दक्षिण एशिया में शांति को पुनर्स्थापित करने के लिये चीन को प्रोत्साहित किया जा रहा है। यह जानते हुये भी कि चीन भारत का मुख्य प्रतिद्वंदी है, दोनों देशों के बीच बहुमुखी सीमा विवाद है दूसरी तरफ चीन–पाकिस्तान सांठगांठ मुख्यतः भारत के विरोध में है। क्या इन परिस्थितियों में चीन निष्पक्ष होकर मध्यस्थ की भूमिका निभा सकता है ?

4 जून, 1998 को भारतीय विदेश सचिव के. रघुनाथ ने कहा कि "कश्मीर भारत का अंदरूनी मामला है।" ठीक दूसरे दिन भारतीय प्रधानमंत्री श्री बाजपेयी पाकिस्तान के समक्ष यह प्रस्ताव रखते हैं कि "भारत पाकिस्तान के साथ कश्मीर मुद्दे पर विचार–विमर्श करने के लिये तैयार है।" स्पष्टतः मामला जब दो देशों के बीच हो तो कोई भी समस्या उस देश की अंदरूनी नहीं हो सकती। उल्लेखनीय है कि विश्व का कोई भी देश कश्मीर को भारत की अंदरूनी समस्या के रूप में नहीं देखता। इस परिप्रेक्ष्य में रक्षामंत्री जार्ज फर्नांडीज का वक्तव्य ज्यादा सटीक मालूम होता है। उन्होंने स्पष्ट करते हुये कहा था कि कश्मीर भारत का अभिन्न अंग जरूर है लेकिन यह कहना तर्कसंगत नहीं होगा कि कश्मीर की समस्या भारत की अंदरूनी समस्या है।[4]

परमाणु विस्फोटों के बाद दोनों के सम्बन्धों में खटास आई है। दक्षेस सम्मेलन के दौरान दोनों देशों के बीच किसी नये समीकरण की तलाश नहीं हो पाई है बल्कि परिस्थितियाँ विपरीत दिशा की ओर मुड़ती हुई प्रतीत हो रही है भारत पाकिस्तान की सीमा पर गोलाबारी फिर तेज हो गई है। पाकिस्तान कश्मीर की समस्या के तहत 1988–89 वाली स्थिति को दोहराना चाहता है। ज्ञातव्य है कि 1988 में भारत–पाकिस्तान की सेनायें युद्ध की विभीषिका के बिल्कुल नजदीक पहुँच गई थी। पाकिस्तान इस परिवर्तन के तहत पश्चिमी देशों की रुचि को और बढ़ाना चाहता है क्योंकि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारत–पाकिस्तान के बीच युद्ध अन्य युद्धों से भिन्न होगा।

---

4. जनसत्ता, 5 जून 1998

परमाणु अस्त्रों के प्रयोग से इंकार नहीं किया जा सकता। इसी मुद्दे के तहत पश्चिमी देशों का हस्तक्षेप इस महाद्वीप में और तेज होगा। जून में सम्पन्न हुई जी–8 की बैठक में तय किये गये मसौदे के तहत कश्मीर समस्या का विशेष जिक्र किया गया था। 1948–49 में संयुक्त राष्ट्र के द्वारा भेजे गये पर्यवेक्षकों के मुखिया जोसेफ कोरेबल जो वर्तमान अमेरिकी विदेश सचिव अलब्राइट के पिता भी थे, ने कहा था कि जैसे–जैसे कश्मीर मुद्दे पर द्विपक्षीय वार्ता विफल होगी वैसे ही अन्तर्राष्ट्रीय हस्तक्षेप की तीव्रता बढ़ती जायेगी और समस्या दिन प्रतिदिन जटिल होती जायेगी।

जबसे पाकिस्तान के साथ कश्मीर को लेकर विवाद शुरू हुआ है तब से हमारा देश पाकिस्तान से 3 बड़ी लड़ाइयाँ लड़ चुका है। इन लड़ाइयों के बाद जम्मू कश्मीर में वास्तविक नियंत्रण रेखा पर समय के अन्तराल पर रुक–रुक कर गोलाबारी की जाती रही है। वर्ष 1997 के पाँच महीनों में .....

- ✦ 9 से 13 अप्रैल तक पाकिस्तान सेना ने कारगिल में भारी गोलबारी की, जिससे 9 भारतीय नागरिक मारे गये।
- ✦ 11 जुलाई को पाकिस्तान रेंजरों ने 8 भारतीय सीमा चौकियों पर गोलाबारी की।
- ✦ 19 अगस्त को पाकिस्तान सेना ने साम्बा सब सेक्टर में भारतीय सीमा चौकियों पर भारी गोलाबारी की।

जब संयुक्त राष्ट्र के सितम्बर 97 में हुये अधिवेशन के दौरान प्रधानमंत्री श्री गुजराल और पाकिस्तानी प्रधानमंत्री नवाज शरीफ के मध्य न्यूयार्क में भेंट हुई तो उससे ठीक एक माह पहले पाकिस्तान ने जम्मू कश्मीर की सीमा पर पुनः गोलाबारी करके शरारतें प्रारम्भ कर दी। पाकिस्तान द्वारा 22 अगस्त से जम्मू कश्मीर में वास्तविक नियंत्रण रेखा पर उड़ी, केरन, कुपवाडा तंगधार, कारगिल, राजौरी, पुंछ, जम्मू तथा सियाचिन सीमा क्षेत्रों में निरन्तर गोलाबारी की गयी। पुंछ के बलोनी व बालकोट क्षेत्रों में भी पाकिस्तानी फौजों ने भारी गोलाबारी की। भारतीय सेना द्वारा की गई जबाबी कार्यवाही में पाकिस्तानी सेना के 30 बंकर नष्ट हो गये और 70 पाकिस्तानी सैनिक व अधिकारी मारे गये तथा 45 से अधिक घायल हो गये। रक्षा विभाग के सूत्रों के अनुसार पाकिस्तान द्वारा इस गोलाबारी में भारी तोपखाने का इस्तेमाल किया गया। कई देशों ने पाकिस्तान की इस कार्यवाही को अत्यन्त भड़काने वाली कार्यवाही बताया। उधर पाकिस्तान ने सीमा पर होने वाली गोलाबारी को स्वीकार तो किया लेकिन साथ ही कहा कि सीमा पर ऐसी बड़ी गोलाबारी नहीं हुई है जैसा कि भारत आरोप लगा रहा है। सीमा पर इस प्रकार की फायरिंग

की घटनायें सामान्य रूप से होती ही रहती हैं। पाकिस्तानी सैनिक प्रवक्ता जहीर अंसारी ने कहा कि "इस गोलाबारी में पाकिस्तान के 3 नागरिक अवश्य मारे गये हैं लेकिन यह गोलाबारी इतने बड़े पैमाने पर नहीं थी कि उसमें 70 से अधिक सैनिक मारे जायें" इस प्रकार पाकिस्तान अपने झूठ पर पर्दा डालने का प्रयास करता रहता है। जबकि भारतीय रक्षा विभाग के प्रवक्ता का कहना है कि पाकिस्तानी क्षेत्र में अनेक एम्बुलेंस गाड़ियाँ आती जाती दिखाई दीं, जो वहाँ से मृत सैनिकों के शवों तथा घायलों को ले जा रही थी। पाकिस्तान द्वारा अपने सीमा क्षेत्रों मे और सेनायें भी लाई जाती देखी गई।(5)

अब पाकिस्तान द्वारा शुरू की गई भीषण गोलाबारी की घटनाओं को देखते हुये हमारे रक्षामंत्री ने कहा कि देश की सुरक्षा के सवाल पर हम दुनिया की किसी भी ताकत के दबाव में नहीं आयेंगे तथा देश की एकता व अखंडता के साथ किसी को भी खिलवाड़ नहीं करने दिया जायेगा। पड़ोसी देशों में घटने वाली हर घटना पर हमारी सतर्क नजर है। पाकिस्तान ने अगर इस बार हम पर हमला करने का दुस्साहस किया तो वह बर्बाद हो जायेगा। जम्मू कश्मीर में पाक फायरिंग से उत्पन्न चुनौती का सामना करने के लिये भारतीय सेना पूरी तरह तैयार है। भारतीय सैनिकों ने पाकिस्तानी गोलाबारी का समुचित रूप से जबाब दिया है।

वास्तविक नियंत्रण रेखा पर गड़बड़ी की वजह

आखिर पाकिस्तान वास्तविक नियंत्रण रेखा पर यह गड़बड़ क्यों कर रहा है तथा उसने इसके लिये यही समय क्यों चुना है ? इस सम्बन्ध में कई कारण हो सकते हैं।

1. पाकिस्तान की आर्थिक स्थिति इस समय इतनी बुरी तरह बिगड़ी है वहाँ का सारा आर्थिक ढाँचा ही चरमराने लगा है। आटा, चीनी, आलू–प्याज तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं का अभाव पैदा हो गया है।
2. साम्प्रदायिक टकराव तथा निरन्तर बढ़ रहे आतंकवाद के कारण पाकिस्तान में कानून व्यवस्था का ढाँचा विफल होता दिखाई दे रहा है। इसलिये इन बातों की ओर से देश की जनता का ध्यान हटाने के लिये और उनमें भारत के विरुद्ध जेहाद का जुनून भड़काने के लिये सीमा पर पाकिस्तानी सेना द्वारा यह शरारत की जा रही है।
3. कुछ दिनों में बर्फवारी शुरू होने के कारण सीमा क्षेत्र के दर्रों के मार्ग बंद हो जायेंगे

---

5. डॉ. सुमित्रा नन्दन द्विवेदी : भारत पाक सम्बन्ध, मंथन, Vol IX, 1998

इसलिये पाकिस्तान उससे पहले ही गोलाबारी करके भारतीय सेना का ध्यान उस ओर से हटाकर बड़ी संख्या में घुसपैठियों की भारतीय सीमा में घुसपैठ करवाना तथा कश्मीर में हथियार आदि पहुँचाना चाहता है।

4. यह भी सम्भव है कि बाहरी शक्तियाँ जो कश्मीर के बारे में समय–समय पर टिप्पणियाँ करती रहती हैं, कभी इसे विवादास्पद क्षेत्र मानती हैं तो कभी दोनों देशों में मध्यस्थता की बात करती हैं, वे आज कश्मीर में चुनावों के बाद आ रही शांति को न सह पा रही हों और वहाँ अशांति पैदा करने तथा अपनी चौधराहट को बनाये रखने के लिये उन्होंने पाकिस्तान सरकार व फौज में बैठे लोगों को इसके लिये उकसाया है।

5. 1997 में भारत में 15 दलों की सरकार भी जो विभिन्न मसलों को लेकर विवादों में उलझी रहती हैं। कभी महिलाओं के लिये 33 प्रतिशत आरक्षण के मुद्दे पर, कभी पेट्रोल की कीमतों में वृद्धि पर, कभी वेतन आयोग के मामले पर फैसला नहीं ले पाती हैं। कभी किसी बिल को वापस लेती है तो कभी किसी बिल पर हार जाती है। हो सकता है कि इस समय भारत में कमजोर केन्द्रीय सरकार को देखते हुये पाकिस्तान सरकार, उसकी फौज, आई. एस. आई. तथा अन्य विदेशी शक्तियाँ यह समझती हों कि यह मौका है जबकि भारत पर दबाब बनाया जा सकता हैं।

6. पंजाब में सरकार बदलने के बाद कुछ बम धमाके जरूर हुये तथा छुटपुट हिंसा की घटनायें अवश्य हो रही हैं लेकिन पाकिस्तान, उसकी आई. एस. आई. तथा वहाँ बैठे पंजाब के आतंकवादी जिस पैमाने पर यहाँ गड़बड़ करवाना चाहते हैं उसमें वे सफल नहीं हो पा रहे हैं न ही वे यहाँ हिन्दू सिक्खों के मध्य तनाव पैदा करने के प्रयासों में सफल हो पाये हैं। इसलिये अब उनका यह प्रयास है कि सीमा पर इस प्रकार की गड़बड़ करवाकर भारत का ध्यान बांटा जाये तथा उसे अपनी रक्षा के लिये भारी भरकम खर्च करने के लिये विवश किया जाये जहाँ पाकिस्तान आज खड़ा हुआ है।

7. जम्मू–कश्मीर में पाकिस्तान व आतंकवादियों की आशा के विपरीत चुनाव शांतिपूर्वक सम्पन्न हुये तथा वहाँ की निर्वाचित सरकार आतंकवादियों द्वारा ध्वस्त किये गये राज्य के पुर्ननिर्माण में लग गई है, जबकि पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर में केवल इस्लामाबाद की कठपुतली सरकारें ही सत्तारूढ़ होती रही हैं तथा वह सारा क्षेत्र ही विकास के मामले में भारत कश्मीर के मुकाबले में 50 वर्ष पिछड़ा हुआ है।

8. पाकिस्तान आई. एस. आई. और उसके समर्थक आतंकवादियों को अपने संगठनों में भर्ती के लिये कश्मीरी युवक नहीं मिल रहे हैं दूसरी ओर भाड़े के विदेशी उग्रवादी भी अब हताशा अनुभव कर रहे हैं उनकी हिम्मत बढ़ाने के लिये सीमा पर इस प्रकार की गोलाबारी की जा रही है।

9. आई. एस. आई. और पाकिस्तानी फौज, जिनके बारे में स्वयं पूर्व प्रधानमंत्री बेनजीर ने कहा है कि उन पर प्रधानमंत्री तत्व का भी नियंत्रण नहीं है, स्वयं ही यह सब करवा रही हों ताकि प्रधानमंत्री नवाज शरीफ भारत के साथ मैत्री का हाथ बढ़ाने से संकोच करें।

10. इसके अतिरिक्त हथियार व्यापारियों की लॉबी भी इस प्रकार के टकराव के पीछे सक्रिय हो सकती है। खाड़ी व बोस्निया युद्ध के उपरान्त अब उन्हें अपने हथियारों की बिक्री के नये क्षेत्र चाहिये। वे काफी समय से कश्मीर के मामले में भारत एवं पाकिस्तान में युद्ध कराने के प्रयास में रही है।

11. इसके अतिरिक्त भारत व पाकिस्तान के मध्य शांति व सीधे व्यापार के लिये किये जा रहे प्रयासों से दुबई तथा अन्य देशों व पाकिस्तान के उन व्यापारियों के हितों को आघात पहुँचेगा, जो कि अभी भारत से सामान मंगाकर उसे पाकिस्तान की जनता को महंगे मूल्यों पर बेचकर भारी भरकम मुनाफा कमाते हैं भारत पाकिस्तान के मध्य शांति व सीधे व्यापार से पाकिस्तान को सस्ते मूल्यों पर भारतीय सामान मिलेगा। इससे आशंकित व्यापारिक लॉबी भी दोनों के मध्य अशांति उत्पन्न कराने का प्रयास कर सकती है।

12. वास्तव में पाकिस्तान में कुछ सैनिक व कट्टरपंथी तत्व चाहते हैं कि भारत सरकार के पाकिस्तान के साथ मैत्री प्रयास विफल हो जायें।

13. पाकिस्तान द्वारा की गई भारी गोलाबारी से भारतीय सीमा क्षेत्र से ग्रामीण अब सुरक्षित स्थानों की ओर जा रहे हैं। उड़ी क्षेत्र के दर्जनों गांवों के लोग अपने घरों व मकानों को छोड़कर अपने परिवारों को लेकर श्रीनगर व अन्य सुरक्षित स्थानों की ओर भाग रहे हैं। पाकिस्तान द्वारा फैलाये गये आतंकवाद के कारण हजारों कश्मीरी पंडित व मुस्लिम परिवार घाटी से पलायन कर जम्मू, दिल्ली तथा देश के अन्य भागों में जाने के लिये विवश हुये हैं पाकिस्तान चाहता है कि घाटी के बाद अब सीमावर्ती क्षेत्रों में भी अफरातफरी हो तथा अशांति फैले व भारत सरकार को वहाँ के लोगों के पुनर्वास पर भारी भरकम रकम खर्च करनी पड़े।

वर्ष 1997 में भी पाकिस्तान की पूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती बेनजीर भुट्टो ने धमकी दी थी कि वह देश के 50वें दशक में स्वतंत्रता दिवस समारोह यानी आगामी 14 अगस्त के बाद कई रहस्यों की पोल खोलेंगी। उन्होंने कहा कि वह पाकिस्तान के लोगों को बताना चाहती है कि कैसे राष्ट्रपति फारूख लेघारी ने उनकी सरकार को अपदस्थ किया और कैसे उनका भाई मीर मुर्तजा मारा गया। वह आई. एस. आई. की भूमिका को भी बेनकाब करेंगी। बेनजीर भुट्टो ने "पाकिस्तान टाइम्स" को दी गई भेटवार्ता में यह आरोप लगाया कि वह वरिष्ठ नेता श्री आफताब शेरपाओ को राष्ट्रपति बनाना चाहती थी लेकिन आई. एस. आई. के अध्यक्ष जनरल जावेद अशरफ काजी ने इस पद पर श्री फारूक लेघारी को लाने के लिये दबाब डाला और उसी के दौरान श्री लेघारी को राष्ट्रपति चुना गया।

श्रीमती बेनजीर भुट्टो जब सत्ता में थी, उस पर श्री लेघारी को राष्ट्रपति पद पर बैठाने तथा अन्य कई बातों के लिये आई. एस. आई. की ओर से दबाब पड़ा, तो उस समय वह खामोश रहीं तथा इन सभी बातों को जनता के सामने नहीं लाई। वह पाकिस्तान की जनता की चुनी हुई प्रधानमंत्री थी। अतः उनमें इतना साहस तो होना ही चाहिये था कि वह देश के आन्तरिक प्रशासन में आई. एस. आई. के दखल के बारे में जनता को बतातीं। बेनजीर के बयान से तो यही मतलब निकलता है कि पाकिस्तान की राजनीति और प्रशासन पर फौज तथा उसकी गुप्तचर संस्था आई. एस. आई. आज भी पिछले कई दशकों की भांति हावी है तथा उससे पाकिस्तान के सभी राजनेता डरते हैं, चाहे वे किसी भी पार्टी के क्यों न हों। श्रीमती बेनजीर भुट्टो अपने प्रधानमंत्रित्व काल में फौज व आई. एस. आई. के लम्बे हाथों से भयभीत होकर उनके इशारों पर नाचती रहीं।[6]

यही कारण है कि पाकिस्तान के प्रधानमंत्री श्री नवाज शरीफ जो कि भारत के साथ विभिन्न समस्याओं का बातचीत द्वारा शांतिपूर्ण हल निकालना चाहते थे तथा जिन्हें पाकिस्तान की जनता ने इसके लिये भारी जनादेश भी दिया था। आई. एस. आई. तथा सेना की नीतियों व गतिविधियों के कारण इस सम्बन्ध में अपने को बेवस सा पा रहे थे। भारत व पाकिस्तान के मध्य सम्बन्धों को सामान्य बनाने की दिशा में कश्मीर का मामला सबसे बड़ा अवरोध है। दोनों देशों के मध्य जब भी विदेश सचिवों, विदेश मंत्रियों या प्रधानमंत्रियों के स्तर पर बातचीत हुई, तब यहं

---

6. Ahmad Rashid : Taliban Islam, Oil and the new great game in Central Asia, Z. B. Tauris Publishers, London, 2000

मामला किसी न किसी रूप में उभरता रहा है। पाकिस्तान तो अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर इसे बेनजीर भुट्टो के शासनकाल में इतना उछालता रहा कि उनके समर्थक पश्चिमी तथा इस्लामी देश भी अब इससे ऊब चुके हैं। तथा उनकी रुचि इस ओर से हटती जा रही है लेकिन पाकिस्तान की आई. एस. आई. व सेना कश्मीर में पिछले एक दशक से अशांति की आग को निरन्तर भड़काती आ रही हैं तथा उनका यही प्रयास है कि वहाँ शांति न आने पाये। उनके द्वारा प्रशिक्षित तथा प्रोत्साहित कश्मीरी तथा भाड़े के विदेशी आतंकवादी वहाँ खून की होली खेलते रहें। पाकिस्तानी सेना जम्मू–कश्मीर में सीमा रेखा पर अक्सर अकारण गोलाबारी करके तनाव का वातावरण बनाये रखती है। वही आई. एस. आई. द्वारा जम्मू–कश्मीर में घुसपैठ, हिंसा तथा बम विस्फोट आदि करवाये जा रहे हैं।(7)

इस प्रकार के समाचार भी मिलते रहे कि भारतीय सेना व सुरक्षा बलों के दबाब के कारण तितर–बितर हो रहे हैं। आतंकवादियों को पुनः संगठित करने के लिये आई. एस. आई. ने फिर कोशिशें शुरू कर दी हैं। जम्मू–कश्मीर मे कुछ नये उग्रवादी संगठन बने हैं तथा उग्रवादियों द्वारा नई भर्ती भी की जा रही है। पाकिस्तान में पाक अधिकृत कश्मीर के प्रशिक्षण कैम्पों में बड़ी संख्या में उग्रवादी रह रहे हैं तथा आई. एस. आई. व पाकिस्तानी फौज इन क्षेत्रों में उनकी घुसपैठ कराने तथा उग्रवादियों को हथियार व विस्फोटक आदि पहुँचाने का प्रयास करती हैं। आये दिन इस प्रकार की घुसपैठ करने वाले कई कश्मीरी व भाड़े के उग्रवादी मारे जाते हैं या पकड़े जाते हैं। इनसे बड़ी मात्रा में हथियार, गोला–बारूद तथा विस्फोटक सामग्रियाँ भी पकड़ी जाती हैं।(8)

इस बीच जम्मू–कश्मीर में उग्रवादियों द्वारा की जाने वाली हिंसक गतिविधियों तथा बम विस्फोटों की घटनाओं में वृद्धि हुई है। गत 9 जून को जम्मू–कश्मीर में जम्मू–पठानकोट रेलमार्ग पर विजयनगर के पास उग्रवादियों ने शक्तिशाली आर.डी.एक्स बम विस्फोट से रेल पटरी के एक बड़े भाग को उड़ा दिया, जिसकी वजह से 16 घंटे तक रेल यातायात अवरुद्ध हो गया सौभाग्यवश उस विस्फोट के समय कोई यात्री गाड़ी नहीं गुजर रही थी अन्यथा जान–माल का भारी नुकसान होता।(9)

---

7. Ahmad Rashid : Taliban Islam, Oil and the new great game in Central Asia, Z. B. Tauris Publishers, London, 2000
8. Summary of world broadcasts, SU/3958/g/1, 29th Sept. 2000
9. Ibid

आई.एस.आई. द्वारा 20 जुलाई से प्रारम्भ होने वाली अमरनाथ यात्रा में आई. एस. आई. द्वारा अमरनाथ यात्रा के दौरान उग्रवादियों के माध्यम से गड़बड़ कराने का एक षड़यंत्र भी जम्मू–कश्मीर पुलिस ने अनावृत किया हैं। पुलिस ने सिम्बल शिविर के पास स्थित एक स्थान से आर. डी. एक्स विस्फोटक के 40 पैकेट तथा भारी मात्रा में गोला बारूद तथा हथियार बरामद किये। जम्मू–कठुआ रेंज के डी. आई. जी. श्री मिश्रा के अनुसार पकड़े गये कुछ उग्रवादियों से पूछताछ में यह जानकारी मिली थी कि उग्रवादियों की अमरनाथ यात्रा के दौरान गड़बड़ी करने की योजना थी। इसी आधार पर रणवीर सिंह पुरा व अन्य क्षेत्रों में उग्रवादियों के ठिकानों पर छापे मारे गये। पुलिस ने इस सम्बन्ध में पंजाब के दो उग्रवादियों को गिरफ्तार भी किया। अफगान उग्रवादियों द्वारा अमरनाथ यात्रा में गड़बड़ी कराने के लिये कश्मीरी उग्रवादियों को प्रशिक्षण दिया जा रहा है।[10]

कश्मीर घाटी की भांति ही आई. एस. आई. जम्मू क्षेत्र में भी तबाही मचाने का ताना–बाना बुन रही है तथा इसके लिये वह इस क्षेत्र में टनों गोला–बारूद तथा हथियार इकट्ठा कर रही है। सीमा पार से मिली रिपोर्टों के अनुसार आई. एस. आई. ने 70 प्रशिक्षित आतंकवादियों को विस्फोटों व तोड़फोड़ के लिये जम्मू क्षेत्र में भेजा है। जम्मू व हिमाचल में पुनः अपने अड्डे बनाने के प्रयास किये जा रहे हैं।

आई. एस. आई. ने भारत के विरुद्ध नशीले पदार्थों की तस्करी का एक ओर मोर्चा भी खोला है। उसका उद्देश्य यह है कि भारतीय युवाओं को हेरोइन तथा अन्य नशीले पदार्थों का गुलाम बनाकर खोखला कर दिया जाये। पाकिस्तान में इस समय 600 तस्कर तथा अनेक राजनेता व सैनिक अधिकारी हेरोइन की तस्करी के कारोबार से जुड़े बताये जाते हैं।

पाकिस्तान को इस तस्करी से 5 अरब डालर प्रतिवर्ष की आय होती है। जिसका उपयोग आई. एस. आई. हथियारों की खरीद व उग्रवादियों को सहायता देने के लिये करती है। वह पेशावर से 30 किमी. दूर इन हथियारों व विस्फोटकों का भंडार रखती है तथा बाद में उन्हें भारत में तस्करी द्वारा भेजती है।[11]

उग्रवादियों की जम्मू–कश्मीर में महत्वपूर्ण राजनीतिक नेताओं को अपना निशाना

---

10. Ibid
11. जयप्रकाश पाराशर : जेहाद का रास्ता हेरोइन से होकर गुजरता है : अमर उजाला, रविवार, 15 जुलाई 2001

बनाने की योजना है। हालत यह हो गई है कि पाकिस्तान समर्थक आल पार्टी हुर्रियत कांफ्रेंस के अध्यक्ष मीर वायज, उमर फारुक, अब्दुल गनी लोन तथा अहमद शाह गिलानी सहित कुछ अन्य नेताओं को भी उग्रवादियों से अपनी सुरक्षा के लिये राज्य सरकार से संरक्षण मांगना पड़ा है तथा उनकी सुरक्षा के लिये सशस्त्र पुलिस कर्मी तैनात कर दिये हैं।

आई. एस. आई. द्वारा नेपाल में भी भारत–विरोधी गतिविधियाँ जारी है, इस प्रकार की चर्चायें भी हैं कि उसने बांग्लादेश की शेख हसीना सरकार का तख्ता पलटने के लिये 20 करोड़ टका (बांग्लादेशी मुद्रा) खर्च करने की योजना बनाई है। इस प्रकार वह अशांति व अस्थिरता पैदा करने के षड़यंत्र में लगी है।

पाकिस्तान में अब आई. एस. आई. को एक ऐसे भस्मासुर की तरह समझा जाने लगा है जो अपनी गतिविधियों के कारण कभी भी पाकिस्तान को गहरे संकट में फंसा सकती है। इसे देश में सरकार के समानान्तर सरकार के रूप की संज्ञा दी जा सकती है तथा अफगानिस्तान के गृह युद्ध में पाकिस्तान को बुरी तरह से फंसा देने के लिये भी इसे ही जिम्मेदार ठहराया है।[12]

इन सभी बातों के दृष्टिगत यह बात स्पष्ट प्रतीत होती है कि चाहे पाकिस्तान अन्य पड़ोसी देशों से कितने ही मधुर सम्बन्ध बनाने की बातें करता रहे लेकिन जब तक आई. एस. आई. और फौज उस पर हावी है वह कुछ अधिक कर पाने की स्थिति में नहीं है। जब भी भारत व पाकिस्तान के मध्य बातचीत की चर्चा होती है, उस समय आई. एस. आई. जम्मू–कश्मीर में कोई न कोई हिंसक वारदात करवा देती है।

अब भारत व पाकिस्तान के विदेश सचिवों की बातचीत का सिलसिला शुरू हो चुका है। इससे पूर्व ही पाकिस्तान में कुछ तत्वों द्वारा भारत–विरोधी दुष्प्रचार शुरू कर दिया गया है। इसके पीछे आई. एस. आई., सेना व उन कट्टरपंथी तत्वों का हाथ है जो अपने निहित स्वार्थों के कारण भारत के साथ सम्बन्धों में सुधार नहीं चाहते इसलिये हमें इस बात को ध्यान में रखना चाहिये कि जब तक पाकिस्तान सरकार पर ये तीनों तत्व हावी है तब तक भारत–पाक सम्बन्धों में सुधार के लिये बहुत सोच–समझ कर ही कदम उठाये जायें।

मई 1998 में हुये परीक्षणों के बाद भारत और पाकिस्तान के राष्ट्राध्यक्षों की पहली मुलाकात कोलम्बो में सम्पन्न हुये सार्क सम्मेलन में हुई। पाकिस्तान की नीति और उसके रवैये से परिचित होने के बावजूद भारत यह उम्मीद कर रहा था कि सार्क के सौहार्दपूर्ण वातावरण में

---

12. News from Russia, Vol. IV, No. 40, New Delhi, 5 October 2001

दोनों देशों के प्रधानमंत्री सी.टी.बी.टी. तथा पूर्ण परमाणु निरस्त्रीकरण जैसे मुद्दों पर आम राय बना सकेंगे और दक्षिण एशिया को परमाणु अस्त्र विहीन क्षेत्र बनाने तथा "नो फस्ट यूज" जैसे महत्वपूर्ण मसलों पर समझौते की संभावनाओं को तलाश पायेंगे, लेकिन पाकिस्तान का मन्तव्य ऐसा नहीं था।

वह द्विपक्षीय बातचीत के लिये तैयार नहीं था। पाकिस्तान के प्रधानमंत्री भारत के प्रधानमंत्री के साथ महज औपचारिकता के निर्वाह हेतु मिलने को तैयार हुये। पाकिस्तान ने सार्क को अपने भारत विरोधी अभियान का निशाना बनाने का भी प्रयास किया, लेकिन उसे कोई सफलता नहीं मिली।

पाकिस्तान ने हमेशा की तरह दक्षिण एशिया में शस्त्र स्पर्धा, परमाणुकरण तथा तनाव के लिये भारत को दोषी ठहराया। कश्मीर के मुद्दे का अन्तर्राष्ट्रीयकरण करने की चेष्टा की। शस्त्र आयात तथा उच्च्व प्रौद्योगिकी के आदान–प्रदान से सम्बन्धित वार्तायें शुरू की। इतना ही नहीं उसने कश्मीर सीमा पर निरन्तर गोलीबारी जारी रखी हुई है जिससे भारत के सैन्य बलों को तथा सामान्य जनता के जान–माल का बराबर नुकसान पहुँच रहा है। कश्मीर को पाकिस्तान एक सुलगते हुये अंगारे की तरह रखना चाहता है ताकि जब चाहे उसे धधकाकर अशांति और तनाव उत्पन्न कर सके तथा कश्मीर की ओर दुनिया के अन्य देशों का ध्यान आकर्षित कर सके। दरअसल पाकिस्तान चाहता ही नहीं है कि कश्मीर विवाद का समाधान हो। पूर्व प्रधानमंत्री इंद्र कुमार गुजराल ने पड़ोसियों के साथ अच्छे सम्बन्धों की स्थापना के लिये "गुजराल सिद्धान्त" प्रतिपादित किया और सांस्कृतिक, सामाजिक साहित्यिक स्तरों पर सद्भावना बढ़ाने के कई अभियान चलाये। राजनीतिक स्तर पर भी वार्ताओं का दौर चला, लेकिन इन सबका कोई ठोस सकारात्मक परिणाम नहीं निकला। शीत युद्धोत्तर दुनिया में हुये बदलाव का भारत व पाकिस्तान पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। रूस, अमरीका और चीन मित्र बन गये। अरब और इस्राइल नफरत की दीवार को तोड़कर बातचीत की टेबिल पर आ गये। पूर्वी और पश्चिमी जर्मनी का विलय हो गया। लेकिन भारत और पाकिस्तान अभी तक नफरत की चिंगारी को जीवित रखे हुये तनाव में जी रहे हैं।

भारत और पाकिस्तान के बीच मौजूद तनाव के लिये काफी हद तक अमरीका जिम्मेदार है। पश्चिम एशिया, खाड़ी क्षेत्र और मध्य एशिया में ही नहीं, चीन व रूस के खिलाफ की गई जासूसी और बाद में उनके साथ हुई मैत्री वार्ताओं की पृष्ठभूमि में भी पाकिस्तान की

सक्रिय भूमिका रही है। उसने इन क्षेत्रों में अमरीकी हित में काम किया है। अफगानिस्तान में पहले अमेरिका ने ही पाकिस्तान को आतंकवाद के लिये तैयार किया और अब पाकिस्तान के साथ मिलकर वहाँ आतंकवाद के खिलाफ आर–पार की लड़ाई लड़ रहा है। पाकिस्तान द्वारा तैयार की जा रही आतंकवाद की फसल का प्रणेता अमरीका रहा ऐसी स्थिति में पाकिस्तान भारत से मैत्री के लिये क्यों तैयार होगा। पाकिस्तान चाहता है कि तनाव बढ़ता ही जाये और बढ़ते–बढ़ते युद्ध के हालात पैदा कर दे ताकि पाकिस्तान अपनी सुरक्षा के लिये खतरे का बिगुल बजाकर अमरीका को मध्यस्थता करने के लिये पुकारे या अन्य किसी "अन्तर्राष्ट्रीय मध्यस्थ" (चीन) को आवाज दे सके। अमरीका भी बराबर मध्यस्थता की पेशकश कर रहा है। वह चाहता है कि परेशान होकर भारत पाकिस्तान की शिकायत लेकर आये और अमरीका से पाकिस्तान को नियंत्रित करने को कहे पर भारत ऐसा नहीं कर सकता यह द्विपक्षीय मुद्दा है दोनों देश ही इसका समाधान कर सकते हैं इसका अन्तर्राष्ट्रीयकरण भारत बर्दाश्त नहीं करेगा।

स्थिति नाजुक है कश्मीर में बढ़ रही हिंसा, आतंकवाद एवं अस्थिरता देश में तनाव पैदा कर रही है। इसे संभाल पाने में सरकार की असफलता लगभग वैसे ही हालत पैदा कर सकती है जैसा पाकिस्तान चाहता है इसके लिये आवश्यक है कि सरकार विदेश नीति खासकर पाकिस्तान व चीन विषयक नीति का संचालन गंभीरता से करे। कश्मीर की सुरक्षा की पूरी व्यवस्था करने के साथ ही राजनीतिक स्तर पर प्रयासों को तेज करने की जरूरत है। सैन्य बल के सामने पाकिस्तान 1965 में भी कुछ भी नहीं था और आज भी कुछ नहीं है पर सवाल यह है कि क्या भारत युद्धात्मक स्थिति में फंसने का खतरा मोल ले सकता है। आज के जमाने में ऐसा करने का सोचना भी खतरनाक होगा, क्योंकि वह विकास को पिछड़ने और अर्थव्यवस्था को जर्जर बनाने के अधिक अनेक नये मुद्दे खड़े कर देगा। वार्ता की निरंतरता और राजनयिक खिड़कियों का खुले रखना अत्यन्त उपयोगी हो सकता है और उसी का प्रयास करना चाहिये। अभी मनीला में हुये आसियान सम्मेलन और कोलम्बो में हुये सार्क सम्मेलन में भारत को राजनीतिक विजय मिली है दोनों ही मंचों पर किसी ने भी भारत के परमाणु परीक्षणों के खिलाफ प्रस्ताव पारित नहीं किया। इन दोनों मंचों ने भारत के द्वारा उठाई गई पूर्ण परमाणु निरस्त्रीकरण की मांग के पक्ष में आवाज उठाई है जो भारत की सफलता मानी जा सकती है। इससे तिलमिलाकर पाकिस्तान सीमा पर आक्रामक तेवर दिखा रहा है। राजनयिक स्तर पर भारत को विश्व भर को यह बताना चाहिये कि किस तरह पाकिस्तान आतंकवाद की फसल उगा रहा है

और उसका सीमा पार निर्यात करके सम्पूर्ण क्षेत्र में शांति भंग कर रहा है पाकिस्तान में हो रहे मानवाधिकार हनन की घटनायें और दूसरे देशों के नागरिकों के मानवाधिकारों पर अतिक्रमण के पाकिस्तानी कृत्यों को अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के समक्ष ले जाकर उसे आतंकवादी राज्य घोषित करवाना चाहिये ताकि उस पर सब प्रतिबंध लग सकें जो अभी तक लगते रहे थे।

अमरीका की पक्षपातपूर्ण और गैर जिम्मेदार भूमिका से अमरीकी लोगों को भी परिचित कराना चाहिये। वहाँ पाकिस्तान लॉबी सक्रिय है, लेकिन भारत समर्थकों की भी कमी नहीं है। उन्हीं के माध्यम से भारत अपनी बात अमरीकी जनता व समाज तक पहुँचा सकता है। चीन को भी हमें यह बताना होगा कि पाकिस्तानी आतंकवाद धार्मिक कट्टरवाद की ओर से पनपता है और उसी के नाम पर चोट करता है। कश्मीर के रास्ते यह कट्टरवाद का सैलाब यदि बहने दिया तो एक दिन चीन के लिये भी मुश्किलें पैदा करेगा।

कश्मीर भारत और पाकिस्तान की समस्या है। चीन का इससे कोई वास्ता नहीं है उसे इससे अलग रहना चाहिये। सर्वाधिक जरूरी है कश्मीर समस्या के अन्तर्राष्ट्रीयकरण के पाकिस्तानी प्रयासों के विफल करने तथा उन सब देशों को चेतावनी देना जो बेमतलब दक्षिण एशिया में अस्थिरता लाने के लिये पाकिस्तान को उकसा रहे हैं और मध्यस्थ बनने का दावा कर रहे हैं। पाकिस्तान चाहता था कि कश्मीर की काली छाया सार्क को प्रभावित करे तो वह तो नहीं हो पाया। श्रीलंका और बांग्लादेश ने उत्कृष्ट राजनीतिक सूझबूझ दिखाते हुये सार्क को द्विपक्षीय मुद्दों का मंच बनने से रोके रखा यह सार्क की परिपक्वता का भी परिचायक है जहाँ तक भारत और पाकिस्तान का सवाल है दोनों ही कश्मीर मुद्दे पर अत्यन्त संवेदनशील हैं। तनाव और चुनाव दोनों ही स्थितियों में यह संवेदनशीलता और भी बढ़ जाती है। पाकिस्तान में पिछले 50 वर्षों में कितनी ही सरकारें बनी और टूटी लेकिन कश्मीर पर यथास्थिति को परिवर्तित करने में कोई भी सरकार सफल नहीं हुई। राजनीतिक मजबूरियों और नफा नुकसान को एक तरफ रखकर यह देखने का प्रयास करना चाहिये कि क्या यथा स्थिति को बदला जा सकता है। क्या कोई भी सरकार इसे बदल पायेगी या बदलने का साहस जुटा पायेगी। बदलते अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में ऐसा हो पाना सम्भव नहीं लगता।

"पाक के पास इतनी ताकत नहीं थी कि वह भारत से बड़ी लड़ाई लड़ सके"

वाशिंगटन (वा.) अमरीकी सेना के एक नये अध्ययन के मुताबिक पाकिस्तान भारत में ही उग्रवादियों को समर्थन देकर भारत के साथ–साथ पुराने राजनीतिक विवादों को हल करने

या उसे कमजोर करने का रास्ता अपनाये हुये है।

टुडे अध्ययन रिपोर्ट के अनुसार पाकिस्तान की इस रणनीति के पीछे मान्यता है कि भारत परमाणु हथियारों के विनाशकारी प्रभाव के डर से उसके खिलाफ परम्परागत हथियारों से लड़ाई नहीं शुरू करेगा इस मामले में पाकिस्तान, भारत के लचरपन का फायदा उठा रहा है। अध्ययन रिपोर्ट के मुताबिक पाकिस्तान की इस चाल से भारत को भी ''सठे साठ्यम समाचरेत्'' का बहाना मिल गया है और इसी कारण अमरीका बार–बार कहता है कि दक्षिण एशिया में हथियारों की होड़ एक दिन बेकाबू हो सकती है लेकिन रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत की शांत रहने और संयम रखने की सोची–समझी रणनीति के चलते ज्यादा बढ़ने का अंदेशा कम है।

टुडे अध्ययन रिपोर्ट के अनुसार भारत के संयम के बारे में यह मत इस तथ्य पर आधारित है कि भारत सरकार सुरक्षा क्षेत्र में तीव्र होड़ के बावजूद देश में 1991 में शुरू आर्थिक संचार कार्यक्रमों को कामयाबी के साथ पूरा करने के रास्ते से नहीं हटा है।

टुडे अध्ययन रिपोर्ट में इस बात का भी उल्लेख है कि भारत की रणनीतियाँ तय करने वालों ने सीमा पार करके कार्यवाही करने के बजाय अपनी ही सीमा में सुरक्षाबल तैनात करने की रणनीति अपना रखी है ''दक्षिण एशिया में स्थिरता'' शीर्षक यह रिपोर्ट रैड स्थान ने तय की है इस अध्ययन संस्था को अमरीकी प्रशासन से वित्तीय सहायता मिलती है इसके लेखक जे. टेलिस हैं।

टुडे रिपोर्ट का निष्कर्ष है कि भारतीय उपमहाद्वीप में बढ़ती अस्थिरता का वर्तमान वातावरण एक दशक या उससे भी अधिक समय तक और बना रहेगा। रिपोर्ट में कहा गया कि यह खास किस्म की अस्थिरता इसलिये है क्योंकि भारत और पाकिस्तान दोनों ही देश उस राजनीतिक लक्ष्य को हासिल करने की शक्ति नहीं रखते जिसे वे युद्ध के जरिये हासिल करना चाहते हैं।

इसी तर्क के आधार पर रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि क्षेत्र में इस समय जारी हिंसा का दौर कमोबेश होता रहेगा और इस हिंसा के बीच हथियारों की होड़ भी चलती रहेगी लेकिन आने वाले कुछ समय तक परम्परागत युद्ध नहीं होगा जिसकी कि कल्पना की जाती है रिपोर्ट के अनुसार पाकिस्तान के पास इतनी ताकत नहीं है कि वह भारत के सभी असीमित उद्देश्यों के लिये बड़ी लड़ाई लड़ सके, लेकिन सैनिक क्षमता के विश्लेषण से नहीं लगता कि भारत एक झटके में पाकिस्तान को दबोच लेगा।

चूँकि लंबी लड़ाई की अपनी एक विशेष शुरूआत होती है और इसमें अपने खिलाफ प्रचार का भी सामना करना पड़ सकता है इसलिये नहीं लगता है कि भारत, पाकिस्तान से लंबी लड़ाई करना चाहेगा। रिपोर्ट के अनुसार दोनों देश सीमित उद्देश्य के लिये थोड़े दिन की लड़ाई लड़ने में सक्षम है किन्तु निकट भविष्य में इसकी संभावना नहीं लगती।

अन्ततः कहा जा सकता कि भारत तथा पाकिस्तान के मध्य ही नहीं वरन् कश्मीर समस्या भारतीय विदेश नीति के प्रतिपादन में आँख की किरकिरी बनी हुयी।

कश्मीरियों की दृष्टि में कश्मीर समस्या

सम्पूर्ण कश्मीर समस्या का अवलोकन करने के लिये आवश्यक है कि कश्मीर समस्या के सन्दर्भ में लगातार प्रभावित हो रहे लोगों का कश्मीर समस्या के बारे में क्या दृष्टिकोण है। सम्पूर्ण कश्मीर प्रान्त के लोगो को हम दो भागों में बाँटकर अध्ययन कर सकते है –

1. जो व्यक्ति कश्मीर समस्या का हल शक्ति के माध्यम से करना चाहते है।
2. साधारण जनता।

कश्मीर के जो व्यक्ति कश्मीर समस्या का हल अपने तरीके से या राज्य कानून के विपरीत जाकर करना चाहते है। जिन्हें भारतीय सरकार आतंकवादी तथा पाकिस्तानी सरकार स्वतंत्रता सेनानी कहती है।

कश्मीर में खूनी आतंकवाद का सिलसिला 1987–88 में शुरू हुआ था। 87–88 से लेकर 1994–95 तक के दौर को कश्मीरी आतंकवाद का पहला चरण माना जाता है। इस दौर में आतंकवादी कश्मीरी आवाम के दिलों में एक नयी भावना पैदा करने में सफल हुये थे। आतंकवादियों की हर कार्यवाही को कश्मीरी जनता जायज मानती थी। हजारों की संख्या में लोग उनके समर्थन में सड़क पर उतरने, गोली खाने को तत्पर रहते थे। लोगो को लगता था कि जल्द ही कश्मीर आजाद हो जायेगा।[13] "इन दिनों लगता था जैसे जनता इन विशेष लोगों की दीवानी हो गयी है।"[14]

उस वक्त कश्मीरी आतंकवादियों के मुख्यतः तीन खेमे थे। एक खेमा "आजाद

13. श्री धर : मुख्यधारा में वापसी की बेचैनी, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार 23 दिसम्बर 2000
14. रामचन्द्र सिन्हा : कश्मीर में आतंकवाद का आरम्भ, क्रनिकल मई 1995

कश्मीर'' का समर्थक था तो दूसरा खेमा कश्मीर को पाकिस्तान में शामिल कराने का हिमायती था और तीसरा खेमा चाहता था कि हर हाल में कश्मीर पर भारत का नियंत्रण खत्म होना चाहिये। इन तीनो खेमों का कश्मीरी जनता पर काफी प्रभाव था लेकिन 1995 आते–आते लोगो को लगने लगा कि उनके सपने साकार नहीं हो सकते और कश्मीर कभी आजाद नहीं हो सकता।(15)

कश्मीरी आवाम के साथ–साथ आतंकवादियों में भी एक खास तरह की निराशा पैदा होने लगी। आतंकवादी गतिविधियों में कमी आयी और माहौल थोड़ा शांत हुआ।

पाकिस्तान को यह बात अच्छी नहीं लगी। उसके इशारे पर 1995 में आतंकवाद का दूसरा चरण आरम्भ हुआ। पाकिस्तानी फौज के अफसरों ने अपनी सेना द्वारा प्रशिक्षित आतंकवादियों को कश्मीर भेजना शुरू किया। कश्मीरी बनकर ये आतंकवादी घाटी के अन्दर अपनी गतिविधियाँ संचालित करने लगे। 1998–99 में भारतीय फौज एवं सुरक्षा बलों का घाटी पर पूरी तरह नियंत्रण स्थापित हो गया। पकड़े गये आतंकवादियों से पता चला कि उनमें से अधिकतर पर हत्या, लूट, डकैती जैसे जघन्य अपराधों के लिये पाकिस्तान में मुकदमा चल रहा है।(16) यह क्रम कारगिल तक चलता रहा।

कारगिल के बाद कश्मीरी आतंकवाद के तीसरे चरण की शुरूआत हुयी।(17) अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अलग थलग हो जाने और कारगिल में पराजय झेलने के क्रम में पाकिस्तान की आन्तरिक राजनीति में भी बदलाव आये। पाक सेना ने अपने सैनिकों एवं कुछ दूसरे देश के बेरोजगारों को कश्मीर भेजना आरम्भ कर दिया। पिछले एक वर्ष के दौरान गिरफ्तार आतंकवादियों में 18 देशों के उग्रवादी तत्वों की शिनाख्त हुई। इनमें बांग्लादेश, टर्की, चीन, अफगानिस्तान, इराक, सऊदी अरब, कुवैत, फिलिस्तीन और सूडान आदि के उग्रवादी शामिल हैं जिन्हें पाक सेना ने पैसा देकर जेहाद करने के लिये घाटी भेजा था। इनके आने के बाद अब कश्मीर का आतंकवाद कट्टर इस्लामी विचारधारा के हाथों का खिलौन बन चुका है।(18)

आतंकवाद के पहले चरण में आम तौर पर घाटी के निम्न मध्यवर्गीय परिवारों के

---

15. श्री धर : मुख्यधारा में वापसी की बेचैनी, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार 23 दिसम्बर 2000
16. श्री धर : मुख्यधारा में वापसी की बेचैनी : राष्ट्रीय सहारा, शनिवार 23 दिसम्बर 2000
17. श्री धर : मुख्यधारा में वापसी की बेचैनी : राष्ट्रीय सहारा, शनिवार 23 दिसम्बर 2000
18. श्री धर : मुख्यधारा में वापसी की बेचैनी, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार 23 दिसम्बर 2000

नौजवान केन्द्र में थे। दूसरे चरण में असमाजिक तत्वों का दबदबा रहा जबकि मौजूदा तीसरा चरण इस्लामिक राज्य के निर्माण की भावना से ओतप्रोत है।

कश्मीर में सक्रिय प्रमुख आतंकवादी संगठन

हिजबुल मुजाहिदीन

यह पाकिस्तान समर्थक आतंकवादी संगठन है जिसे कश्मीर में सक्रिय जमायते इस्लामी ने 1989 में खड़ा किया था पिछली जुलाई में इसने कश्मीर में संघर्ष विराम की घोषणा की थी उस समय तक पाक अधिकृत कश्मीर और पाकितान इसे वित्तीय मदद दे रहे थे।

कश्मीर में खूनी आतंकवाद का एक दशक[19]

सेना द्वारा आतंकवादियों के विरुद्ध की गयी कार्यवाही

वर्ष	मारे गये आतंकवादी	पकड़े गये आतंकवादी	आत्म समर्पण किये आतंकवादी	शहीद भारतीय सैनिक	घायल भारतीय सैनिक
1990	466	3267	37	18	69
1991	632	2973	138	44	161
1992	637	4089	226	50	201
1993	1042	3405	73	88	405
1994	1228	3197	128	139	426
1995	1102	3541	657	186	517
1996	902	1826	224	150	359
1997	888	1257	235	153	363
1998	825	475	118	133	377
1999	1039	281	74	223	516
2000	8781	24311	1900	1184	3394

19. श्री धर : मुख्यधारा में वापसी की बेचैनी, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार 23 दिसम्बर 2000

आतंकवादियों से सेना द्वारा जब्त हथियार[20]

सेना द्वारा आतंकवादियों के विरुद्ध की गयी कार्यवाही

क्रम सं.	अस्त्र शस्त्रों के प्रकार	मात्रा
1.	एसाल्ट रायफल एके 47/56	14706
2.	लाइट/यूनीवर्सल मशीनगन	799
3.	स्राइपर रायफल	521
4.	स्टेन गन्स	30
5.	पिस्तौल	5161
6.	बंदूके	869
7.	एंटी पर्सेनेल माइंस	5772
8.	एंटी टैंक माइंस	354
9.	हथगोले	41830
10.	बारूद–विध्वंसक (क्रिग्रा. में)	14022
11.	गोलियां	2860243

सैय्यद सलाहुद्दीन इसका प्रमुख सरगना है इसमें ज्यादातर जम्मू कश्मीर तथा पाक अधिकृत कश्मीर के आतंकवादियों की हिस्सेदारी है। पाकिस्तान, अफगानिस्तान एवं अरब के आतंकवादी इसके सदस्य हैं इसका प्रशिक्षण अफगानिस्तान में दिया जाता है।

तहरीक–ए–जेहाद

अंसरूल इस्लाम और अलवर्क के एक धड़े के मध्य विलय से 1997 में बना। जम्मू कश्मीर में सक्रिय अब्दुल गनी बट की मुस्लिम कांफ्रेस का यह आतंकवादी संगठन है। फारूख कुरैशी इसका मुख्य कर्त्ताधर्त्ता है। कश्मीर को पाकिस्तान में मिलाने के उद्‌देश्य से इस संगठन ने सशस्त्र संघर्ष छेड़ा हुआ है।[21]

अल–बदर मुजाहिदीन

एक हजार सदस्यों वाला तीसरा सबसे बड़ा संगठन 1998 में मुजाहिदीन की आपसी कलह से उपजा। बख्त जमीन इसके मुखिया है।

हरकत उल मुजाहिदीन

यह ऐसा संगठन है जिस पर पश्चिमी देश आतंकवाद फैलाने के लिये दोषी मानते

---

20. श्री धर : मुख्यधारा में वापसी की बेचैनी, राष्ट्रीय सहारा, शनिवार 23 दिसम्बर 2000
21. डॉ. कृष्ण कुमार रत्तू : कारगिल कौन है साजिश के पीछे, पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर, पृ. 57

है। इसका पहले नाम "हरकत उल अन्सार" था। इसमें पाकिस्तान, अफगानिस्तान एवं अरब के आतंकवादी शामिल है। मौलाना अजहर मसूद इसी का साक्ष्य है।

हरकत–ए–जिहाद–ए–इस्लामी

कारी सैफुल्ला इसका सर्वेसर्वा है। पाकिस्तान, अफगानी, तुर्की, इरांकी, सऊदी आदि देशों के आतंकवादियों का मिश्रण है।

जैश ए मुहम्मद

1999 में भारतीय जेल से रिहा अजहर मसूद ने किया।

लश्कर–ए–तोइबा

कश्मीर में सक्रिय खूँखार आतंकवादी संगठन जम्मू में स्थित सैन्य ठिकानों को निशाना बनाने के लिये आत्मघाती दस्तों का प्रयोग किया। प्रो. हाफिज सईद इसका सरगना है।[22]

जमायत उल मुजाहिदीन

यह पाकिस्तान समर्थक आतंकवादी संगठन है शेख अब्दुल वसीत ने 1990 में इसे खड़ा किया। इसके समर्थक कश्मीर के अहले सुन्नत सम्प्रदाय से आते है।

हिजबुल मोमिनीन

शियाओं का 1991 में ईरान में प्रशिक्षित शुजा अब्बास के नेतृत्व में पाकिस्तानी शिया सम्प्रदाय से वित्तीय सहायता प्राप्त करता है।

अल फतह फोर्स

अल जिहाद और जिहाद फोर्स के विलय के बाद 1994 में अस्तित्व में आया। यह पाकिस्तान समर्थक माना जाता है। इसका मुखिया एजाजुर्रहमान है।

अल–उमर–मुजाहिदीन

1989 में जरगर ने स्थापित किया परन्तु अब लगभग शान्त।

हिजबुल्लाह

1990 में श्रीनगर में इस संगठन का गठन हुआ। जम्मू–कश्मीर मुस्लिम लीग का यह

---

22. डॉ. कृष्ण कुमार रत्तू : कारगिल कौन है साजिश के पीछे, पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर, पृ. 57

उग्रवादी गुट है।

तहरीक उल मुजाहिदीन

अहले हदीथ विचारधारा वाला संगठन, पर इस क्षेत्र में कोई विशेष योग्यता नहीं।

जम्मू कश्मीर लिबरेशन फ्रन्ट

अमानउल्ला खान ने 1978 में किया। यह संगठन कश्मीर को आजाद कराने के लिये आतंकवादी गतिविधियाँ करता है आज यासीन मलिक इसका प्रमुख है जो 2002 में कांग्रेस–मुफ्ती गठबन्धन सरकार द्वारा रिहा किया गया।

अल–जिहाद

यह कश्मीर पीपुल्स का उग्रवादी धड़ा है।

मुस्लिम जांबाज फोर्स

1990 में बना। शब्बीर अहमद शाह के नेतृत्व वाले पीपुल्स डेमोक्रेटिक फोरम का उग्रवाटी गुट है।

इस्लामिक फ्रंट

इखवानुल मुस्लिम लीग का नया नाम है। हिलाल अहमद बेग इसका मुखिया है। इस संगठन में कोई खास सक्रियता नहीं है।

उपरोक्त प्रमुख आतंकवादी संगठन जम्मू–कश्मीर में जारी आतंकवादी गतिविधियों के लिये उत्तरदायी है परन्तु इन संगठनों में तीन प्रमुख विचारधारायें कार्य कर रही है। पहले वे है जो जम्मू कश्मीर को स्वतंत्र अस्तित्व प्रदान करना चाहते है इनमें प्रमुख जम्मू–कश्मीर लिवरेशन फ्रंट दूसरे जो जम्मू कश्मीर को पाकिस्तान में मिलाना चाहते है ऐसे ही संगठन अधिक है तीसरे वे है जो जम्मू कश्मीर को हरहाल में मुक्त कराना चाहते है परन्तु उनका आगे का कोई विशेष कार्यक्रम नहीं है वह तो केवल इस्लाम के नाम पर संघर्ष में लगे हुये है। इसके बाद चाहे इस क्षेत्र को स्वतंत्र कर दिया जाये या पाकिस्तान से मिला लिया जाये इससे उनका कोई लेना देना नहीं है।

इस अध्ययन से ज्ञात होता है कि जम्मू कश्मीर में सक्रिय आतंकवादी संगठन भी धीरे–धीरे अपने कार्यो में सिलसिला बनाये हुये है आज कुछ आतंकवादी संगठन अपने आत्म मंथन पर विचार करने लगे है इसलिये हिजबुल मुजाहिदीन जैसे आतंकवादी संगठन ने कश्मीर

में संघर्ष विराम की घोषणा की है।

"शान्ति के लिये संघर्ष विराम की घोषणा करना और बन्दूकें रख देना कहीं से भी गलत नहीं है पाकिस्तान में बैठकर संघर्ष विराम के निर्णय की आलोचना करने वालो को कश्मीरी आवाम की पीड़ा नहीं मालूम है। इन लोगो को कश्मीर में जाकर वहाँ के लोगो की भावनाओं को देखना चाहिये। कश्मीरी संघर्ष विराम से बेहद खुश है। वह शान्ति चाहता है। वह काफी झेल चुका है। जब हम भारत के एक फौजी को मारते है तो भारतीय फौज दस निर्दोष कश्मीरियों को मार डालती है। कश्मीर का सबसे बड़ा संगठन होने के नाते हिजबुल मुजाहिदीन को भारत सरकार से खुली बातचीत करने का पूरा अधिकार है। इस पर पाकिस्तान या दूसरे संगठनों को कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिये। आखिर हमने बंदूकें तभी उठायी थी जब हमारे पास कोई दूसरा रास्ता नहीं था। अब रास्ता है तो उस पर आगे बढ़ना चाहिये। हम मानते है कि बड़े से बड़े संघर्ष का भी युद्ध क्षेत्र में नहीं बातचीत की मेज पर बैठने से ही हल निकलता है।"[23]

हिजबुल मुजाहिदीन का एक सीनियर कमांडर

इस प्रकार आज आतंकवादी संगठन भी अपने उदारवादी स्वरूप को अपनाकर बातचीत की मेज पर आने को तैयार हो सकते है।

कश्मीरियों को दूसरा पक्ष है आम जनता जो ज्यादातर आतंकवाद के डर से स्पष्ट तौर से कुछ कहने से डरती है परन्तु वह भी अमन की कामना करते हुये स्वतंत्रता की माँग भारत के अन्य प्रांतों की तरह करती है। इसके लिये प्रत्यक्ष जन आन्दोलनों का तो अभाव है परन्तु आतंकवादियों के लगातार विरोध एवं चुनाव बहिष्कार के बाद भी 50–60 फीसदी मतदान इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि कश्मीरी जनता अब समझने लगी है कि कश्मीर का उज्जवल भविष्य भारत के साथ ही संभव है। सम्पूर्ण कश्मीरी जनता को मौटे तौर पर चार भागों में बाँटा जा सकता है।

(1) जम्मू का हिन्दी बहुल मैदानी क्षेत्र
(2) इस्लामी प्रभाव वाली कश्मीर घाटी
(3) लद्दाख का बौद्ध धर्मानुयायी प्रदेश
(4) पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर[24]

---

23 पाकिस्तान की चर्चित अंग्रेजी मासिक पत्रिका 'द हेराल्ड' के अगस्त 2000 अंक में अपना नाम न छापने की शर्त पर प्रकाशित एक कमांडर के इंटरव्यू का अंश

24. डा. गिरीश खरे : कश्मीर की भौगोलिक पृष्ठभूमि, मंथन Vol. IV, 1995

जम्मू का हिन्दु बहुल मैदानी प्रदेश में लगभग 60% लोग भारत के साथ रहना चाहते है एवं अन्य लोगो का स्पष्ट कोई मत नहीं है वह केवल शान्ति चाहते हैं।

दूसरी ओर इस्लामी प्रभाव वाली कश्मीर घाटी में लगभग 70% लोग पाकिस्तान के साथ रहना चाहते है एवं अन्य लोग केवल शान्ति के पक्षधर हैं चाहे वह पाकिस्तान के साथ रहकर प्राप्त हो या स्वतंत्र राज्य के रूप में। वह अब 'जेहाद' के नाम पर अपने विकास को कुर्बान नहीं करना चाहते। अब वह अपने विकास की ओर सोचने पर मजबूर हो रहे हैं।[25]

तीसरा क्षेत्र है लद्दाख का बौद्ध धर्मानुयायी क्षेत्र जो लगातार स्वतंत्रता के पहले से ही भारत में विलय के लिये प्रयास कर रहा है तथा भारत के प्रशासन के साथ मिलकर अपने सुधार एवं जीविका तथा शान्ति के लिये प्रयासरत है।[26]

चौथा क्षेत्र है पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर यहाँ पाकिस्तान सरकार से सदस्यता प्राप्त आतंकवादियों के प्रशिक्षण शिविर है और यही से जेहाद के नाम पर नवयुवकों को गुमराह कर आतंकवाद के रास्ते पर लगाया जाता है। बशीर अहमद जो 1990 में हथियारों की ट्रेनिंग के लिये गये थे का कहना है कि पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर के हालात बहुत खराब है वहाँ लोगो को जीने के लिये प्राथमिक वस्तुओं का भी अभाव है वहाँ आधुनिक वस्तुओं जैसे – फ्रिज, टी. वी. आदि का तो उन्होंने नाम भी नहीं सुना है।[27]

बशीर कहते है कि अधिकतर लोग पाकिस्तान से आजादी चाहते है क्योंकि उन्होंने पाकिस्तान में मुजाहिरो की हालत देखी है।[28]

ये शब्द मुनीरा रशीद के है जो अभी हाल में अपने रिश्तेदारों से मिलने के लिये बीजा लेकर पाकिस्तान गई थीं "वहाँ जब मैंने अपने रिश्तेदारों को यह बताया कि मुझे पोस्ट ग्रेजुएशन करने के बाद एक कालेज में नौकरी मिल गयी है तो उन्हें बड़ी हैरत हुई।"[29]

अतः पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर की जनता भी अब पाकिस्तान से त्रस्त हो चुकी है एवं जम्मू तथा कश्मीर के लोग भी अब शान्ति के लिये लगातार प्रयासरत है। अतः दोनों के मध्य

---

25. डा. रियाज सिद्दीकी : घाटी की आशा, यूथ कम्पटीशन टाइम का एक सर्वे जिसे उसने 2000 में प्रकाशित किया।
26. डा. गिरीश खरे : कश्मीर की भौगोलिक पृष्ठभूमि : मंथन Vol. IV, 1995
27. करामत कयूम : बहुत पीछे है पाक अधिकृत कश्मीर के लोग, अमर उजाला रविवार 15 जुलाई 2001
28. करामत कयूम : बहुत पीछे है पाक अधिकृत कश्मीर के लोग, अमर उजाला रविवार 15 जुलाई 2001
29. करामत कयूम : बहुत पीछे है पाक अधिकृत कश्मीर के लोग, अमर उजाला रविवार 15 जुलाई 2001

एक सेतु की आवश्यकता मात्र रह गयी है।

यदि भारत सरकार से हुर्रियत बातचीत करता है तो सरकार उससे साफ कह सकती है कि हुर्रियत कश्मीरियों की एक मात्र प्रतिनिधि पार्टी नहीं है। लद्दाख की अपनी पोजीशन है। हुर्रियत में शामिल पार्टियों के अलग–अलग दृष्टिकोण है। जमायते इस्लामी कश्मीर को पाकिस्तान के हवाले करना चाहती है। जे. के. एल. एफ. आजादी का नारा लगाता है। पाक अधिकृत कश्मीर तथा गिलगित में पाकिस्तानी शासकों के खिलाफ आवाजें बुलन्द हो रही है। वहाँ पाकिस्तान को इन इलाकों की दौलत लूटने वाली करार दिया जाता है। पाकिस्तान सरकार वहाँ के नेताओं को बातचीत का अवसर देना नहीं चाहती। सच्चाई यह भी है कि कश्मीर की जनता महसूस करती है कि पाकिस्तान की ओर से भेजे गये मुजाहिद ही उसकी मुसीबत के लिये जिम्मेदार है। जंग समूह का सप्ताहिक 'अखबारे जहाँ' ने खुलकर लिखा कि मुजाहिदीन के कारण ही कश्मीर में तबाही हो रही फारूख अब्दुल्ला जो निर्विवाद धर्मनिरपेक्ष और राष्ट्रवादी व्यक्ति है राज्य के तीनों क्षेत्रों में उनके प्रति सद्भावना है अतः फारूख अब्दुल्ला जम्मू कश्मीर स्वयत्तता के पक्षधर है तथा भारत के साथ कुछ सुविधाओं को प्राप्त कर रहना चाहते है। जैसे – अनुच्छेद 370 का विस्तार आदि।[30]

यासीन मलिक ने, जो जे. के. एल. एफ. के अध्यक्ष हैं, एक सशस्त्र संघर्ष की अलख जगाई। हाल ही में मुफ्ती मुहम्मद सईद ने उन्हें रिहा किया है परन्तु रिहा होते ही उन्होंने अलगाववादी विचारों को पुनः प्रसारित करना प्रारम्भ किया।[31]

मीरवायज उमर फारुक, अध्यक्ष आवामी एक्शन कमेटी, दिल्ली के साथ शान्तिवार्ता चलाने वालों का केन्द्र बनकर उभरे हैं। अतः वह जम्मू कश्मीर में शान्ति के लिये लगातार प्रयासरत हैं।[32]

सैयद अली शाह गिलानी, पूर्व अध्यक्ष जमायते इस्लामी, पुराने कट्टरपंथी नेता हैं वे पाकिस्तान में विलय के पक्षधर हैं। अतः जेहाद तथा आतंकवाद के पोषक माने जाते हैं।[33]

अब्दुल मजीद डार, पूर्व कमांडर हिज्बुल मुजाहिदीन ने सन् 2000 के अल्प संघर्ष

---

30. कश्मीर के प्रमुख खिलाड़ी, 5 जून 2002 इण्डिया टुडे पृ. 24
31. कश्मीर के प्रमुख खिलाड़ी, 5 जून 2002 इण्डिया टुडे पृ. 24
32. कश्मीर के प्रमुख खिलाड़ी, 5 जून 2002 इण्डिया टुडे पृ. 24
33. कश्मीर के प्रमुख खिलाड़ी, 5 जून 2002 इण्डिया टुडे पृ. 24

विराम की रचना की तथा दिल्ली से सम्पर्क साध लिया है तथा लगातार वार्ता के पक्षधर हैं।[34]

शब्बीर शाह, संस्थापक पीपुल्स लीग, पाकिस्तान समर्थक हैं अतः अलगाववादी गतिविधियों के कारण लगभग 10 साल जेल रहे परन्तु वह अब कश्मीर की स्वतंत्रता के पक्षधर हो गये है और कश्मीर में निष्पक्ष चुनाव की माँग कर रहे है।[35]

आल पार्टी हुर्रियत काफ्रेंस के नेता अब्दुल गनी लोन साफ कहते है कि आतंकवादियों की बन्दूक का कश्मीर में अब कोई औचित्य नहीं है श्रीनगर में उन्होंने कहा "वक्त आ गया है कि विदेशी इतिहास पसन्द हमें अकेला छोड़ दे और बातचीत की हावी ताकतें उनकी जगह ले लें।"[36]

पाकिस्तान की तीसरे नम्बर की सबसे बड़ी सियासी पार्टी मुत्ताहिदा कौमी मूवमेंट के अध्यक्ष अल्ताफ हुसैन से जब पूछा गया कि कश्मीर समस्या का क्या समाधान है तो उन्होंने कहा कि हमारी स्पष्ट नीति है कि कश्मीर के लोगो को अपना भाग्य भविष्य और नियति चुनने का मौका दिया जाना चाहिये।[37]

"कश्मीर पर हमारी दृष्टि भावनाओं पर आधारित है न कि सूचनाओं पर"[38]

हुर्रियत के एक गुट के नेता अब्दुल गनी लोन ने इस्लामाबाद श्रीनगर और दिल्ली में एक सा ब्यान दिया और पाकिस्तान से आये आतंकवादियों से कहा कि वे कश्मीर में अपनी हरकतों से बाज आयें क्योंकि इससे शान्ति प्रयासों में रूकावट आती है। अमानुल्लाह खान ने भी लश्करे तोएबा, हरकत उल अंसार और जैश ए मोहम्मद के खून खराबे की निन्दा की और कहा कि हम नहीं चाहते कि कश्मीर दूसरा अफगानिस्तान तथा इराक बन जाये। कश्मीरी अब महसूस कर रहे है कि जिस देश में हिंसा का बाजार गर्म रहता है और जहाँ बार–बार सेना सरकार का तख्ता पलट देती है उस पाकिस्तान में शामिल होना खतरनाक है। कश्मीरी यह भी सोचते है कि पाकिस्तान बनने के साथ ही खून खराबा हुआ और खून बहाने वाले मुजाहिरों का कराची में सफाया किया जा रहा है।

एक ध्यान देने वाली बात यह भी है कि जो बड़ी ताकतें पाकिस्तान को कश्मीर के

---

34. कश्मीर के प्रमुख खिलाड़ी, 5 जून 2002 इण्डिया टुडे पृ. 24
35. कश्मीर के प्रमुख खिलाड़ी, 5 जून 2002 इण्डिया टुडे पृ. 24
36. बाहर वाले वापस जायें, 5 जून 2002 इण्डिया टुडे पेज – 23
37. तवलीन सिंह : ए ट्रेजडी आफ इरर्स, विकिंग नई दिल्ली, 1995
38. तवलीन सिंह : ए ट्रेजडी आफ इरर्स, विकिंग नई दिल्ली, 1995

विराम की रचना की तथा दिल्ली से सम्पर्क साध लिया है तथा लगातार वार्ता के पक्षधर हैं।[34]

शब्बीर शाह, संस्थापक पीपुल्स लीग, पाकिस्तान समर्थक हैं अतः अलगाववादी गतिविधियों के कारण लगभग 10 साल जेल रहे परन्तु वह अब कश्मीर की स्वतंत्रता के पक्षधर हो गये है और कश्मीर में निष्पक्ष चुनाव की माँग कर रहे है।[35]

आल पार्टी हुर्रियत काफ्रेंस के नेता अब्दुल गनी लोन साफ कहते है कि आतंकवादियों की बन्दूक का कश्मीर में अब कोई औचित्य नहीं है श्रीनगर में उन्होंने कहा "वक्त आ गया है कि विदेशी इतिहास पसन्द हमें अकेला छोड़ दे और बातचीत की हावी ताकतें उनकी जगह ले लें।"[36]

पाकिस्तान की तीसरे नम्बर की सबसे बड़ी सियासी पार्टी मुत्ताहिदा कौमी मूवमेंट के अध्यक्ष अल्ताफ हुसैन से जब पूछा गया कि कश्मीर समस्या का क्या समाधान है तो उन्होंने कहा कि हमारी स्पष्ट नीति है कि कश्मीर के लोगो को अपना भाग्य भविष्य और नियति चुनने का मौका दिया जाना चाहिये।[37]

"कश्मीर पर हमारी दृष्टि भावनाओं पर आधारित है न कि सूचनाओं पर"[38]

हुर्रियत के एक गुट के नेता अब्दुल गनी लोन ने इस्लामाबाद श्रीनगर और दिल्ली में एक सा ब्यान दिया और पाकिस्तान से आये आतंकवादियों से कहा कि वे कश्मीर में अपनी हरकतों से बाज आयें क्योंकि इससे शान्ति प्रयासों में रूकावट आती है। अमानुल्लाह खान ने भी लश्करे तोएबा, हरकत उल अंसार और जैश ए मोहम्मद के खून खराबे की निन्दा की और कहा कि हम नहीं चाहते कि कश्मीर दूसरा अफगानिस्तान तथा इराक बन जाये। कश्मीरी अब महसूस कर रहे है कि जिस देश में हिंसा का बाजार गर्म रहता है और जहाँ बार–बार सेना सरकार का तख्ता पलट देती है उस पाकिस्तान में शामिल होना खतरनाक है। कश्मीरी यह भी सोचते है कि पाकिस्तान बनने के साथ ही खून खराबा हुआ और खून बहाने वाले मुजाहिरों का कराची में सफाया किया जा रहा है।

एक ध्यान देने वाली बात यह भी है कि जो बड़ी ताकतें पाकिस्तान को कश्मीर के

---

34. कश्मीर के प्रमुख खिलाड़ी, 5 जून 2002 इण्डिया टुडे पृ. 24
35. कश्मीर के प्रमुख खिलाड़ी, 5 जून 2002 इण्डिया टुडे पृ. 24
36. बाहर वाले वापस जायें, 5 जून 2002 इण्डिया टुडे पेज – 23
37. तवलीन सिंह : ए ट्रेजडी आफ इरर्स, विकिंग नई दिल्ली, 1995
38. तवलीन सिंह : ए ट्रेजडी आफ इरर्स, विकिंग नई दिल्ली, 1995

मामले में मदद देती थी, अब यही ताकतें आतंकवाद के खिलाफ आवाद बुलन्द करके कड़ी कार्यवाही की धमकियाँ दे रही है। अब इन्हें किराये के जेहादी इस्तेमाल करने की आवश्यकता नहीं रही। पाकिस्तानी लेखक, पत्रकार और बुद्धिजीवी आज भारत से मित्रता के इच्छुक हैं।[39]

अतः आज चारों ओर से भारत के पक्ष में सकारात्मक रुख ही प्राप्त हो रहा है परन्तु कुछ रूढ़िगत समस्याओं के चलते इस दिशा में प्रगति का अभाव है यदि धर्म एवं रूढ़ियों से ऊपर आकर दोनों ही पक्ष बातचीत के लिये एक मेज पर आ जाते है तो परिणाम निःसन्देह आशानुरूप हो सकते हैं। अब भारत को पाकिस्तान से नहीं वरन् सीधे अपनी मानसिकता में सुधारकर आतंकवादी संगठनों एवं राजनीतिक दलों से विचार विमर्श के लिये एक सफल योजना बनाना चाहिये जो निः सन्देह आशानुरूप परिणाम पेश कर सकती है।[40]

"यदि भारत सरकार वास्तव में कश्मीर समस्या के ठोस समाधान के प्रति संवेदनशील है तो कश्मीरी जनता के असली प्रतिनिधियों के साथ बातचीत को महत्व और इसे प्राथमिकता दी जानी चाहिये इसके लिये सबसे सही तरीका यह है कि पहले कश्मीर घाटी में सकारात्मक माहौल बनाया जाये।"[41]

"जमायत–ए–इस्लाम द्वारा निकाले जा रहे एक अखबार में पाकिस्तानी सरकार को स्पष्ट रूप से कहा गया है कि वह दोहरे चरित्र की आदत छोड़े और खुलेआम स्वीकार करे कि पाकिस्तानी सेना कश्मीर में इस्लामिक आतंकवादियों को नजदीकी से समर्थन दे रही है।"[42]

भारत के सामने एक समस्या यह है कि यदि कश्मीरी स्वतंत्रता का आन्दोलन सफल होता है तो वह धर्मनिरपेक्ष भारत का अन्त होगा और भारत के विघटन की शुरुआत होगी।"[43]

कश्मीर के लोग अतीत के बन्दी है उन्हें धर्म निरपेक्ष भारत एवं अनुच्छेद 370 ही भारत के करीब लाये क्योंकि कश्मीर ने हिन्दू भारत में नहीं धर्म निरपेक्ष भारत में विलय करने का निर्णय लिया था।

---

39. प्रो. कलीम बहादुर : बातचीत कश्मीरी जनता के असली प्रतिनिधियों से हो, राष्ट्रीय सहारा, 23 दिसम्बर 2000
40. तवलीन सिंह : ए ट्रेजडी आफ इरर्स, विकिंग नई दिल्ली, 1995
41. रियाज पंजाबी : हिन्दुस्तान टाइम्स, 19 जुलाई 2002
42. प्रो. कलीम बहादुर : बातचीत कश्मीरी जनता के असली प्रतिनिधियों से हो, राष्ट्रीय सहारा 23, दिसम्बर 2000
43. तवलीन सिंह : ए ट्रेजडी आफ इरर्स, विकिंग नई दिल्ली, 1995

अतः आर. एस. एस. एवं शिवसेना जैसे कट्टर संगठनों की माँग को नजर अन्दाज कर भारत तथा कश्मीर के उत्तराधिकारी जो आज कश्मीरी संस्कृति बचाने की बात कर रहे हैं एवं कश्मीर की समस्या कश्मीर के नागरिकों के माध्यम से सुलझाने का सुझाव देते हैं। रियाज पंजाबी के एक सर्वे के अनुसार सम्पूर्ण कश्मीर के 86% लोग कश्मीर में शान्ति बहाली के पक्षधर है।[44]

अब्दुल मजीद डार तथा शब्बीर शाह जैसे कट्टरपंथी लोग भी आज पाकिस्तान की हिमायत की जगह कश्मीर की स्वायत्तता की बात करने लगे है अतः वक्त आ गया है कि कुछ कट्टरपंथी ताकतों की जिनसे POK की जनता भी मुक्ति चाहती है, को नजरअन्दाज कर कश्मीर के यथार्थ प्रतिनिधियों से बातकर एक स्थायी हल निकाला जा सकती है। कश्मीर में एक ओर कुछ भाड़े के आतंकवादी ही हिंसा फैला रहे हैं तो वही दूसरी ओर सम्पूर्ण कश्मीरी जनता मिलकर एक ओर कश्मीरी पंडितों को अपने घर वापस आने का आवाहन कर रही है और कश्मीरी संस्कृति बचाने के नाम पर भारत के पक्ष में अपना बयान दे रही है जो निःसन्देह इस समस्या के समाधान का उचित समय हो सकता है।

उपेक्षित आर्थिक विकास, बेकारी, भ्रष्ट प्रशासन व केन्द्रीय उपेक्षा ने शासन के प्रति कश्मीरी जनता की निराशा में अभिवृद्धि की है और उनकी स्वतंत्रता की माँग स्वतंत्र इस्लामिक राज्य की माँग में परिवर्तित हो गई है तथा कश्मीर में भारत एक कब्जे वाली शक्ल में देखा जाने लगा है।''[45]

त्रासदी और हिंसा के बावजूद जम्मू कश्मीर में हिन्दू एवं मुसलमान समान सपना पालते हैं कि कैसी भी कश्मीरियत को बचाना चाहिये इसके लिये दो तत्वों को प्रमुख उत्तरदायी समझते हैं। कश्मीर में सामाजिक मनोविज्ञान को परिवर्तित करने के लिये –

1. जनता उन व्यक्तियों और समुदायों द्वारा छोटे अस्त्र शस्त्र एकत्र कर समाज के कुछ भाग की जो बर्बरतापूर्ण हत्या कर रहे हैं, उससे क्षुब्ध हैं।
2. कश्मीर के लोगों को यह अहसास है कि प्रजातन्त्र का स्वांग अराजकता से अच्छा विकल्प है तथा अव्यवस्था से एक खराब सरकार ही अच्छी है। उनका विचार है कि आतंकवाद और उग्रवाद ने कश्मीरियत को आहत अवश्य किया है परन्तु उसे विलुप्त नहीं कर पाये।[46]

---

44. डा. कृष्ण कुमार रत्तू : कारगिल संघर्ष – नियंत्रण रेखा के आर–पार, पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर, पृ. 61
45. तवलीन सिंह : आँखें मूंदने से बात नहीं बनेगी, इण्डिया टुडे, 5 जून 2002
46. प्रो. रियाज पंजाबी : हिन्दुस्तान टाइम्स, 19 जुलाई 2002

मुशर्रफ ने अपने 12 जनवरी 2002 के भाषण में कहा कि "कश्मीर हमारे खून में है कोई पाकिस्तानी कश्मीर से नाता नहीं तोड़ सकता हम कश्मीर को नैतिक, कूटनीतिक, राजनैतिक समर्थन देते रहेगें।" अतः कश्मीरियों से पूछे बिना ही पाकिस्तान अपना अधिकार जमाता रहता है। आज कश्मीरियों ने आदर्शवादी विचार को त्यागकर समयानुसार यथार्थवादी विचार का अनुसरण करने की ओर कदम बढ़ा दिया है जो कि कश्मीर में चुनाव भागीदारी तथा जेहाद की जगह कश्मीरियत को मिलने लगी है आज कश्मीरी लोग कश्मीरी संस्कृति के लिये ज्यादा चिन्तित है न कि जेहाद के लिये।

कश्मीर समस्या के निदान के सुझाव एवं सम्भावनायें

श्री राममनोहर लोहिया जी के अनुसार " भारत पाकिस्तान के सम्बन्ध कभी सामान्य हो ही नही सकते। वे या तो एक होंगे या लड़ते–झगड़ते रहेंगे।"(47)

इसी दृष्टिकोण को आगे बढ़ाते हुये श्री राममनोहर लोहिया जी कहते हैं "भारत–पाक प्रश्नों का हल ढूँढ़ने में हमें वज्र की तरह कठोर परन्तु हिन्दू मुस्लिम सम्बन्धों में फूल की तरह कोमल होना चाहिये। भारत पाकिस्तान में साधारण मित्रों जैसे सम्बन्ध नहीं हो सकते या दोनों देशों में वैर–भाव होगा या दोनों एक होंगे।"(48)

कश्मीर भारत का अविच्छिन्न अंग है यह वाक्य हम भारतवासियों को बहुत मधुर लगता है। जब कोई विदेशी इस वाक्य को सीधे या थोड़ा घुमा फिरा कर दुहराता है, तो हमारी बाँछें खिल जाती है। विदेश से जब भी कोई राजनेता भारत आता है, हमारी कोशिश होती है कि वह कश्मीर पर भारत के पक्ष में जरूर कुछ बोले। हमारे प्रधानमंत्री जब विदेश जाते हैं, वे वहाँ के लोगों को यह याद दिलाना नहीं भूलते कि कश्मीर भारत का अविच्छिन्न अंग है। कहना न होगा कि भारत का यह कश्मीर प्रेम अब ऊब सी पैदा करने लगा है क्योंकि इसके साथ ही कश्मीर की जमीन से यह घोषणा एक बार भी सुनाई नहीं पड़ती कि हाँ हम भारत के अविच्छिन्न अंग हैं। न इसके लिये कोई गम्भीर प्रयास ही किया गया है।

क्या यह कुछ–कुछ वैसी ही स्थिति नहीं है जैसे किसी स्त्री के बारे में कोई पुरुष

---

47. राजकिशोर : भारत–पाक संघर्ष, प्रकाशन संस्थान, 4715/21 दयानन्द मार्ग, दरियागंज नई दिल्ली पृ. 1
48. राजकिशोर : भारत–पाक संघर्ष, प्रकाशन संस्थान, 4715/21 दयानन्द मार्ग, दरियागंज नई दिल्ली पृ. 39

बार–बार घोषणा करे कि वह मेरी पत्नी है, लेकिन वह स्त्री इस बारे में क्या सोचती है, इस बात को कोई अहमियत न दी जाये ? जाहिर है, दाम्पत्य सम्बन्ध एकतरफा नहीं होता। इस सम्बन्ध के होने की घोषणा दोनों ओर से होनी चाहिये। यह उन मामलों मे एक है जिनमें मौन स्वीकृति का लक्षण नही होता है। लेकिन कश्मीर मौन भी नहीं है। वह बार बार और तरह–तरह से आजादी की माँग करता रहा है। उसका एक हिस्सा कह रहा है कि हम भारत का अविच्छिन्न अंग नहीं हैं बल्कि भारत का अंग ही नहीं हैं। एक बड़ा हिस्सा कह रहा कि हम पाकिस्तान का भी अंग नहीं है। कश्मीरियों का बहुमत आजादी यानि स्वतन्त्र कश्मीर के पक्ष में दिखाई देता है। कभी–कभी मुखरता से कभी मौनतः। यह विकल आवाज भारत के दावे को संदिग्ध बनाती है। यह संदिग्धता जितनी गहरी होती है, भारत का सत्तारूढ़ वर्ग उतना ही जोर से चीखता है कि कश्मीर भारत का अविच्छिन्न अंग है। शायद यह शेष दुनिया के साथ–साथ कश्मीरियों को भी सुनाने के लिये है यानि तुम अपने को हमारा अंग मानो या नहीं, तुम्हें अब हमारे साथ ही रहना होगा। इससे भारत से कश्मीर की दूरी और बढ़ती है।

दूसरी ओर पाकिस्तान पाक साफ नहीं कहता कि कश्मीर हमारा है हालांकि उसकी यह अभिलाषा तरह–तरह से व्यक्त होती रहती है। लोकिन वह जम्मू और कश्मीर को भारत का हिस्सा मानने से भी इन्कार करता है। उसकी माँग है कि कश्मीर वासियों की राय ली जाये कि वे भारत मे रहना चाहते हैं या पाकिस्तान में। कश्मीरी पाकिस्तान का अंग बन जायें, इसके लिये वह तरह–तरह के प्रयास करता रहता है। वह कहता है कि कश्मीरियों के आत्म निर्णय के संघर्ष को हम नैतिक समर्थन देते हैं। भारत मे यह आम मान्यता है कि पाकिस्तान का समर्थन सिर्फ नैतिक नहीं है। यह समर्थन भौतिक भी है। पाकिस्तान में प्रशिक्षण पाये हुये अनेक कश्मीरी उग्रवादी भारत में गिरफ्तार हो चुके हैं। कारगिल में यह अच्छी तरह साबित हो चुका है। पाकिस्तानी हाथ का आरोप भारत में लगभग रोज लगाया जाता है। लेकिन भारत की विदेश नीति इतनी दुर्बल है कि वह उस हाथ को न रोकने की कोशिश करती है और न ही तोड़ने की। किसी देश के एक समूह मे यदि अलगाव की इच्छा है, तो कोई दूसरा इस इच्छा के तर्क का सम्मान और स्वागत कर सकता है। न करे तो तो अच्छा है। लेकिन करे तो आप रोक कैसे सकते हैं? आन्तरिक मामले मे दखल न देने का सिद्वान्त यहाँ लागू नही होता, क्योकि किसी भी राष्ट्र के अन्दर बहुत से मामले ऐसे होते हैं जो वस्तुतः विश्व या सार्वभौम मामले हैं। जैसे मानव अधिकारों का सवाल। फिर यह पूर्ण रूप से आन्तरिक मामले मे दखल भी नहीं है, क्योकि जब

कोई समूह अलग होने की इच्छा व्यक्त कर चुका होता है, तब वह पूरी तरह से उस देश का अंग नही रह जाता तथा उस समूह को अन्य देशों से या अन्य देशों के समूहों से नैतिक समर्थन माँगने का अधिकार हो जाता है। लेकिन अलगाववाद को सम्पन्न करने में धन या अधिकारों की मदद करना हमेशा उचित नहीं माना जा सकता। हिंसक शक्ति तर्क और सद्भाव से नहीं, पाशविकता से सहमति पैदा करती है। फिर तो शक्तिशाली देश किसी भी कमजोर देश की एकता में कभी–कभी बाधा पैदा कर सकता है। हाँ जब स्थिति बहुत ज्यादा बिगड़ जाये, तब बाह्य हस्तक्षेप नैतिक भी हो सकता है। जैसे बांग्लादेश में भारत का हस्तपेक्ष नैतिक था। लेकिन कश्मीर में अभी ऐसी स्थिति नहीं है। अतः पाकिस्तानी सहायता अनुचित है। ऐसे हिंसक समर्थन को निरस्त करने के दो ही रास्ते हैं–

1. प्रत्याक्रमण
2. संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा शक्तिशाली हस्तपेक्ष।

भारत ने इन दोनों में ये कोई भी रास्ता नही अपनाया यह उसकी इच्छा और तर्कशक्ति दोनों की दुर्बलता का सूचक है। यदि अमेरिका या चीन के किसी राज्य मे किसी पड़ोसी देश का ऐसा हस्तपेक्ष हो रहा होता, तो क्या वे इतने दिनों तक बरदाश्त करते ? कमजोर सिर्फ आरोप लगाकर रह जाता है, मजबूत आरोप को उसकी तार्किक परिणित तक ले जाते हैं।

कश्मीर समस्या का समाधान शिमला समझौते के तहत बातचीत के द्वारा हो सकता है यह न केवल भारत की बहुप्रचारित स्थापना है बल्कि भारत में शुभचिंतक देशों ने भी इसे बार–बार दुहराया है। लेकिन इस उक्ति में एक खतरनाक स्थापना निहित है। वह स्थापना यह है कि कश्मीर या तो भारत का हिस्सा रहे या पाकिस्तान का। यह सच है कि अंग्रेजों ने भारत को 15 अगस्त 1947 से स्वाधीनता देने का फैसला किया तो लगभग पौने छह सौ रियासतों को भी उन्होने आजाद कर दिया तथा उन्हे यह विकल्प दिया कि वे चाहें तो भारत या पाकिस्तान में शामिल हों चाहे तो स्वतन्त्र रहें। लेकिन लार्ड माउंटबेटन ने उन्हें यह सलाह भी दी कि स्वतन्त्र रहना उनके हित में न होगा–उन्हें भारत या पाकिस्तान दोनों में से किसी एक को चुन लेना चाहिये। कुछ रियासतें स्वेच्छा से पाकिस्तान में शामिल हुयीं ; ज्यादातर भारत में ये छोटी–छोटी रियासतें थीं। जूनागढ़ और हैदराबाद का भारत में विलय उचित नहीं था। कुछ दिनों और इन्तजार करने से ही स्थिति अनुकूल हो जाती। लेकिन दूसरी ओर यह आवश्यक नहीं था कि स्वाधीन भारत एक महादेश ही होता। इसके लिये प्रयास करना गलत नहीं था, पर कोई

छोटे–छोटे सुव्यस्थित देश हो जाते, तब भी कोई हर्ज नहीं था। भारत की जो राजनीतिक एकता अंग्रेजों ने सम्भव की थी, उसे ही अपनी विरासत मानकर चलना कोई बुद्धिमानी नहीं थी। स्वतन्त्र भारत की यह सलाह ही ठीक थी कि अंग्रेज चले जायें, हम अपना फैसला कर लेंगे। यदि इतिहास इस राह पर चलता तो शुरु में जरूर कुछ कटुतायें होती पर बाद में फल मीठे आते।

चूंकि भारत विभाजन और उसके बाद रियासतों के विलय का सारा किस्सा जोड़–तोड़ पर आधारित था, इसलिये भारत और पाकिस्तान दोनों देशों मे अलगाववाद की इतनी समस्यायें नजर आती हैं। कश्मीर समस्या को हम इस दृष्टि से देखेंगे तभी समझ सकेंगे कि सिर्फ भारत और पाकिस्तान उसके दो ही विकल्प क्यों नहीं हैं ?

जोड़ तोड़ की एक नीति का परिणाम हम आज तक भुगत रहे हैं। यह अकारण नहीं कि अंग्रेजों ने भारत के दो टुकड़े किये, लेकिन आज तीन टुकड़े हैं। यह हमारी अपनी ही नीतियों का नतीजा है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि यदि दो के तीन टुकड़े हुये तो तीन के चार भी हो सकते हैं। राष्ट्रों के मामले मे 'दो या तीन' का सिद्वान्त लागू नहीं होता। किसी राष्ट्र की सीमायें एक हद तक ही प्राकृतिक चीज हैं उसके बाद वह एक राजनीतिक परिघटना बन जाती हैं। अतः कश्मीर के बारे में ये कहना कि भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधि मिलकर उसके भाग्य का फैसला कर लें, जानबूझ कर कश्मीरियों का अपमान करना है। वस्तुतः भारत द्वारा कश्मीरियों का बार बार अपमान किये जाने से ही कश्मीर मे अलगाव की इच्छा मजबूत हुयी है। कश्मीर सियाचीन की तरह निर्जन इलाका होता, तो न केवल भारत और पाकिस्तान आपसी बात–चीत से उसका निपटारा कर सकते थे, बल्कि उसे बोली पर भी चढ़ा सकते थे। अतः कश्मीर के लोग यदि यह माँग करते हैं कि कश्मीर पर किसी भी बातचीत में उनके प्रतिनिधियों को अवश्य शामिल किया जाये तो यह एक तार्किक माँग प्रतीत होती है। दूसरी बात यह है कि शिमला समझौते के तहत या वैसे भी कश्मीर पर भारत पाकिस्तान के बीच बातचीत के मौजूदा माहौल के कोई अर्थ नहीं हैं। ऐसी बातचीत सफल नहीं होगी। अतः यह ढोंग जल्द से जल्द छोड़ देना चाहिये। बातचीत शत्रुओं के बीच नहीं होती। मित्रों के बीच होती है। पहले मित्रता का माहौल बनाया जाना चाहिये। तब बातचीत खुद बखुद होगी। जहाँ तक कश्मीर का सवाल है, भारत पाकिस्तान के बीच बातचीत हो सकती है तो कुछ इस तरह की कि भारत पाकिस्तान और संयुक्त कश्मीर का एक महासंघ बनाया जाय। इस ढांचे मे कश्मीर को एक स्वतन्त्र देश का दरजा दिया जा सकता है। बाद में इस महासंघ में बांग्लादेश, नेपाल और अफगास्तिान को भी शामिल किया जा

सकता है। लेकिन भारत–पाकिस्तान उपमहादेश की प्रभावशाली राजनीतिक धारायें इस बारे में फिलहाल सोचती तक नहीं। न ऐसी कल्पना शक्ति है और न इतना बड़ा कलेजा है। फिर भी यह एक ऐसा विकल्प है जिसके बारे में सभी बुद्धिमान लोगों को जनमत बनाना चाहिये। देश तोड़े जा सकते हैं, तो देश जोड़े भी जा सकते हैं शायद यही एकमात्र रास्ता है जिससे सबके स्वाभिमान की रक्षा की जा सकती है और सबका भविष्य भी सुधर सकता है। भारतीय उपमहादेश को शायद एक विस्मार्क या कोल चाहिये।

कश्मीर के भविष्य पर विचार करते समय यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से प्रकट होता है कि कश्मीर किसका है ? इसमें क्या सन्देह है कि कश्मीर सबसे पहले कश्मीरियों का है। मजे की बात यह है कि भारत स्वयं इस सिद्वान्त की घोषणा कर चुका है। भारत में कश्मीर के विलय पर भारत की मान्यता यह थी कि यह कश्मीर के विलय आवाम की इच्छा पर निर्भर होना चाहिये भारत में कश्मीर के विलय के प्रस्ताव को स्वीकार करते हुये भारत के गवर्नर जनरल के रूप में लार्ड माउन्टबेटन ने कश्मीर के महाराजा को लिखा था कि हमारी सरकार चाहती है कि जैसे ही कश्मीर में शान्ति स्थापित हो जाये और हमलावरों से छुटकारा मिल जाये, विलय का अन्तिम निर्णय राज्य की जनता की राय से हो। यह लार्ड माउन्टबेटन का निजी मत नहीं था – भारत सरकार की राय थी। कांग्रेस शुरू से कहती रही थी कि प्रभुसत्ता जनता की होती है, राज्य की (यानि सरकार की) नहीं। इस दृष्टि से कश्मीर के महाराजा हरी सिंह द्वारा भारत मे विलय का निर्णय उसका निजी निर्णय था। बेशक इस निर्णय को कश्मीरी बहुमत का समर्थन था, लेकिन यह समर्थन परिस्थितिजन्य था। कश्मीरी जनता ने यह फैसला खूब सोच समझ कर नही लिया था न कि विलय की शर्तें तय की थीं। विलय बेशक सशर्त था। भारतीय संघ को सिर्फ सुरक्षा, विदेश नीति और संचार के अधिकार प्रदत्त किये गये थे। बाकी सब अधिकार कश्मीरी राज्य ने अपने पास सुरक्षित रखे थे। लेकिन विलय का यह सीमित स्वरूप बना नही रह सका। भारत ने कश्मीर की स्वायत्ता का लगातार अतिक्रमण किया। यहाँ तक कि कश्मीर की संविधान सभा ने (बहुत से लोगों को यह भी पता नही कि कश्मीर का अपना स्वतन्त्र संविधान है, उसका अपना राष्ट्र ध्वज भी है) कश्मीर और भारत के बीच जो रिश्ते तय किये, उनका भी भारतीय सरकार ने लगातार अतिक्रमण किया। इस बात को हम जितनी अच्छी तरह समझेंगे, उतनी ही स्पष्टता से यह अनुभव कर सकेंगे कि कश्मीर के मामले में इतनी पेचीदगियाँ कहाँ से पैदा हुयी हैं। भारत को या तो 1947 में ही सम्पूर्ण विलय की माँग करनी चाहिये थी या जिन शर्तों पर विलय हुआ

था, उनका सम्मान करना चाहिये था। अतिक्रमण से एकता नहीं बढ़ती। आंशिक विलय से सम्पूर्ण विलय की ओर बढ़ने का एक और तरीका था। कश्मीर मे शान्ति स्थापित हो जाने के बाद पूर्ण विलय के पक्ष में वातावरण बनाया जाता और कश्मीरियों की राय ली जाती। कश्मीर मे जनमत संग्रह का वादा भारत की ओर से सिर्फ पाकिस्तान को नहीं था, न ही शेष विश्व को। यह वादा कश्मीर की जनता से भी था। इस वादे से पीछे हटना अनैतिकता है। अतः कश्मीर में जनमत संग्रह का समर्थन सिर्फ आत्मनिर्णय के सामान्य सिद्धान्त के तहत ही नही, बल्कि कानूनी और तकनीकी दृष्टि से भी उचित है।

लेकिन राष्ट्रों के मामलों में अक्सर कुछ घालमेल मौजूद रहता है क्योंकि किसी भी राष्ट्र का निर्माण पाक–साफ ढंग से नही हुआ है। अलगाव के सवाल पर जनमत संग्रह के सिद्धान्त से सभी राष्ट्र डरते हैं, क्योंकि यदि इस सिद्धान्त को मान्यता मिल गई, तो कोई भी राष्ट्र अछूत नहीं रह जायेगा। अब भारत सरकार का दावा है कि विलय के बाद कश्मीर में सविधान सभा का गठन हुआ, उसका अपना संविधान बना, कश्मीर में लगातार चुनाव होते रहे, इन चुनावों में कश्मीर के लोगों ने हिस्सा लिया, कश्मीर में प्रतिनिधि सरकारें बनी और चलती रहीं। यह बात स्पष्ट है कि भारत में कश्मीर के विलय को कश्मीर के लोगों का लोकतान्त्रिक समर्थन रहा है। यह सच है। दूसरी ओर यह भी सच है कि आज कश्मीर की बहुसंख्यक आबादी आजादी के पक्ष में है या कम से कम कश्मीर उग्रवादियों का दावा यही है और कश्मीरी आवाम ने अभी तक इस दावे का खण्डन नही किया है। जब शेख अब्दुल्ला कश्मीर के मुख्यमंत्री थे तब कश्मीर में जनमत संग्रह किया जाता तो बहुमत विलय के पक्ष में ही होता। आज जनमत संग्रह कराया जाये, तो बहुमत शायद विलय के विरुद्ध होगा। किन्तु दोनों ही सच्चाईयों के साथ कुछ मिलावट भी है। भारत में कश्मीर के विलय की शर्तों को धीरे–धीरे कम किया गया, तो इसमें कश्मीरी जनता की राय नही ली गई। मानो यह भारत सरकार और राज्य सरकार के बीच का मामला हो। कश्मीर के अधिकांश चुनावों में धाँधली की गयी, यह कश्मीर के साथ अब्दुल्ला परिवार और भारत सरकार दोनों का संयुक्त भितरघात था। अब्दुल्ला परिवार जब यह कहता था कि भारत मे कश्मीर का विलय अटूट है तो वह कश्मीर की जनता को इस बारे मे कायल करने की कोशिश नही करता था न यह परिभाषित करता था कि विलय की शर्तें ठीक–ठीक क्या हैं ? अतः यह बताने का प्रश्न ही नही था कि उन शर्तों की रक्षा कैसे की जा सकती है ? यहाँ तक कि भारत सरकार ने 1970 और 1980 के दशकों मे ऐसे अनेक कानून बनाये जो कश्मीर की वैधानिक

स्वायत्ता का अपहरण करते थे, किन्तु अब्दुल्ला परिवार ने उनका विरोध नही किया। अब्दुल्ला परिवार ने कश्मीर को हमेशा एक सौदे की चीज माना। उसका रुख यह रहा है कि कश्मीर पर हमारा वर्चस्व भारत सरकार स्वीकार करे, हम भारत में कश्मीर के विलय को स्वीकार करते हैं।

शेख अब्दुल्ला लगातार दोहरी भाषा बोलते रहे और फारुख अब्दुल्ला भी यही करते जा रहे हैं। कश्मीर के इस परिवारवाद को भारत सरकार ने उस वक्त तक घिनौनी मान्यता दी जब फारुख अब्दुल्ला को बरखास्त कर नेशनल कान्फ्रेंस के किसी अन्य नेता को मुख्यमंत्री बना दिया गया। उसके पहले और उसके बाद कश्मीर की राजनीति में जी. एम. शाह की कोई खास अहमियत नही रही। बहरहाल, इससे इन्कार नही किया जा सकता कि अब्दुल्ला परिवार ने लम्बे समय तक कश्मीर को एक खास तरह का नेतृत्व दिया, जिसे स्वीकार करने के कारण कश्मीरी बहुमत का राजनीतिक निर्णय वही रहा जो अब्दुल्ला परिवार का राजनीतिक निर्णय था। यह निर्णय कश्मीर पर परिस्थतियों द्वारा आरोपित निर्णय था, यह इस बात से साबित होता है कि अब्दुल्ला परिवार का राजनीतिक वर्चस्व कमजोर होने से अब कश्मीर के उग्रवादी कश्मीरी जनता को एक और तरह का पहले के बिल्कुल विपरीत नेतृत्व दे रहे हैं और यह नेतृत्व भी उतना ही उत्कटता से स्वीकार किया जा रहा है।

दोनों नेतृत्वों मे एक बुनियादी फर्क है, हालांकि दोनों से ही कश्मीर की समस्या जटिल हुयी है। अब्दुल्ला परिवार के नेतृत्व में हल था, भारत के साथ हल और कश्मीर जनता के साथ भी छल। यही कारण है कि जब कश्मीर में उग्रवादियों का शिकंजा मजबूत होने लगा और फारुख अब्दुल्ला को भारत सरकार का समर्थन नही रहा, तो फारुख कश्मीर छोड़ कर भाग चले। यह कश्मीर के साथ फारुख का सबसे बड़ा विश्वासघात था। जिसके लिये उन्हे क्षमा नहीं किया जा सकता। यदि फारुख की बर्खास्तगी गलत थी, तो फारुख को कश्मीर की जमीन से ही अपना लोकतांत्रिक संघर्ष चलाना चाहिये था। तब तक फारुख की लोकप्रियता काफी कम हो चुकी थी, किन्तु इतनी तो थी कि कश्मीर के स्वाभिमान को एक महत्वपूर्ण प्रश्न के रूप में स्थापित कर पाते। इससे उग्रवाद का प्रभाव निश्चय ही कम होता। लेकिन ऐसा लगता है कि फारुख स्वयं चाहने लगे थे कि कश्मीर में उग्रवाद बढ़े, ताकि भारत सरकार को फारुख की जरूरत महसूस हो। यही खेल कुछ समय तक उनके पिता शेख अब्दुल्ला भी खेलते रहे। यह अंततः अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी मारना साबित हुआ। जो दूसरों के लिये साँप पालता है, उसकी अपनी मौत अक्सर साँप के काटने से ही होती है। कश्मीर से भागकर फारुख कहाँ गये ? वे भारत नहीं

आये इंग्लैण्ड चले गये। इस तरह उन्होने वस्तुतः यही सिद्ध किया कि कश्मीर का मामला कश्मीर और भारत का मामला नहीं, एक अन्तर्राष्ट्रीय मामला है। उनकी तुलना दलाईलामा से की जा सकती है। दलाईलामा तिब्बत से भागे, तो उन्होने भारत की शरण ली, क्योंकि भारत में रह कर ही तिब्बत की मुक्ति संघर्ष सर्वश्रेष्ठ ढंग से चलाया जा सकता था। लेकिन कश्मीर की हालत चीन अधिकृत तिब्बत से लाख दरजे बेहतर थी और है; कश्मीर पर भारत ने कब्जा नहीं किया है। वहाँ खतरा उग्रवादियों से है। क्या उग्रवादियों से नागरिक संघर्ष की पृष्ठभूमि बनाने की उचित जगह भारत नहीं है ? लेकिन फारुख लम्बे समय तक इंग्लैण्ड मे पड़े रहे और समय समय पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में भारत सरकार का प्रतिनिधित्व करते रहे। ऐसे में कश्मीर के लोग अब्दुल्ला परिवार के नेतृत्व पर कैसे भरोसा करें ? इस परिवार का छल पूरी तरह सामने आ चुका है, इसीलिये उसका नेतृत्व भी संदिग्ध हुआ है।

उग्रवादियों के नेतृत्व ने छल की जगह बल की स्थापना की है। उनका राजनीतिक दर्शन बन्दूक की नली से निकलता है। इसलिये कश्मीर के जनसामान्य पर उनका एक तरह का आतंक भी है। उनके आह्वान पर कश्मीर घाटी में तुरन्त हड़ताल हो जाती है। इसके पीछे उनके प्रति कश्मीरी आवाम को सिर्फ लगाव ही नही, बल्कि डर भी है। यह सच है कि कश्मीरी आवाम को भारतीय राष्ट्रीयता से दूर करने की कोई भी कोशिश भारत सरकार ने उठा नही रखी है। इससे उग्रवादियों का काम और आसान हुआ है। फिर भी यह असंदिग्ध रूप से नही कहा जा सकता है कि कश्मीर की जनता भी चाहती है। स्वयं कश्मीर के उग्रवादियों ने राज्य में ऐसी स्थिति पैदा कर रखी है जिसमें जनमत का निर्भीक प्रकाश नहीं हो सकता है। ऐसे भयभीत माहौल में जनमत संग्रह का क्या मतलब हो सकता है ? आत्म निर्णय का अधिकार स्वतन्त्र जनता का होता है न कि किसी बन्धक समूह का। बारूद की छाया में कोई लोकतांत्रिक निर्णय नहीं हो सकता न शांत सोच विचार ही संभव है। कश्मीर, कश्मीर की जनता का ही है। यदि वह हरी सिंह या अब्दुल्ला परिवार की जागीर नहीं थी तो उग्रवादियों की भी जागीर नहीं है। अतः कश्मीर के मत को कश्मीर का मत मानकर चलना न तो निर्भ्रांत है और न ही उचित। कश्मीर का वास्तविक मत जानने के लिये पहले कश्मीर मे भयमुक्त समाज की स्थापना की जरूरत है। जिस तरह अब्दुल्ला परिवार ने पहले कश्मीर को बन्धक बना रखा था, उसी तरह आज उग्रवादियों ने कश्मीर को बंधक बना कर रखा है। लेकिन भारत के राजनेता तो जनमत मात्र से डरते हैं। यह अकारण नही कि भारत विभाजन जैसा ऐतिहासिक निर्णय भी बिना जनमत संग्रह के कर लिया

गया था। कांग्रेस और मुस्लिम लीग के नेताओं ने मिलकर देश को बाँट लिया। यह मुस्लिम लीग द्वारा प्रायोजित हिंसा की सफलता थी। हिंसा को सफल होने का मौका कम से कम मिलना चाहिये। हिंसा के प्रति आकर्षण कम करने का एक तरीका यह भी है।

क्या कश्मीर के अलगाववादियों की हिंसा भी सफल होगी ? अधिकांश परिस्थितियाँ इसके पक्ष में नही हैं। कश्मीर एक छोटा सा राज्य है। फिर अलगाववादियों का वर्चस्व पूरे कश्मीर पर भी नहीं है। भारत की सेना काफी मजबूत है। सेना के बल पर कश्मीर को अनन्त काल तक भारत का अंग बना कर रखा जा सकता है। पाकिस्तान के समर्थन की सामरिक शक्ति हर हाल में भारत से कमतर ही रहेगी। नाभिकीय क्षमता ने दोनों देशों की सामरिक शक्ति को बराबर कर दिया है, लेकिन महज कश्मीर घाटी के लिये पाकिस्तान नाभिकीय युद्ध का खतरा मोल लेगा, यह संभव नहीं जान पड़ता है। यदि ऐसा होता है तो वह उन्मादवश ही होगा। पर व्यक्तिगत जीवन की तरह राष्ट्रीय जीवन मे भी उन्माद के महत्व को कम करके नहीं आँकना चाहिये। जैसे लोग छोटी–छोटी चीजों के लिये जान दे देते हैं, वैसे ही राष्ट्र भी हैं।

पाकिस्तान मे कश्मीर को लेकर ऐसा उन्माद पैदा हो जाये, इसके लिये परिस्थितियाँ तैयार करने में भारत भी अंशतः जिम्मेदार है। पाकिस्तान शुरू से ही कश्मीर को अपना अंग बनाना चाहता रहा है। एक समय तो मुहम्मद अली जिन्ना ने घोषणा तक कर दी थी कि कश्मीर मेरी जेब में है। पाकिस्तान के कश्मीर लगाव का एक मुख्य कारण यह है कि कश्मीर भारत का एक मात्र राज्य है जहाँ मुसलमानों का बहुमत है और वह पाकिस्तान की सीमा से सटा हुआ है। यदि भारत विभाजन पर जनमत संग्रह हो गया होता और रियासतों की भी राय ले ली जाती, तो सब कुछ साफ–साफ तय हो जाता और भारत पाकिस्तान के बीच विद्वेष का कोई कारण नहीं रह जाता। लेकिन सब कुछ षड़यंत्रपूर्ण माहौल मे हुआ। अतः पाकिस्तान का यह मलाल़ स्वाभाविक है कि कश्मीर के हिन्दू महाराजा ने जबरदस्ती कश्मीर का विलय भारत में कर दिया। स्पष्ट है कि पाकिस्तान द्विराष्ट्रवाद के सिद्धान्त पर अब भी अडिग है। लेकिन क्या भारत भी व्यवहारिक रूप से सही सिद्धान्त नही मानता है ? भारत के नेता बार–बार कहते हैं कि हम द्विराष्ट्रवाद को नहीं मानते हैं। यदि सचमुच नही मानते, तो उन्होने भारत पाकिस्तान बांग्लादेश एकता के लिये प्रयास क्यों नहीं किया ? यदि भारत विभाजन कृत्रिम था और सिर्फ मुस्लिम लीग की तात्कालिक दादागीरी के कारण स्वीकार कर लिया गया था, तो भारतीय नेताओं को बराबर यह कोशिश करनी चाहिये थी कि उस कृत्रिम विभाजन को समाप्त कर वास्तविक एकता स्थापित

की जाये। लेकिन हुआ इसके विपरीत। भारतीय नेताओं ने पाकिस्तान को हमेशा शत्रु देश के रूप में चित्रित किया। यहाँ तक कि पाकिस्तान की जनता के साथ भी दोस्ती करने की कोशिश नही की गयी। अतः पाकिस्तान किस बात के लिये भारत का आभारी हो ?

भारत पाक तनाव बढ़ने के दो मुख्य कारण हैं। एक कारण तो कश्मीर ही है। यदि अनुकूल परिस्थितियों मे जनमत संग्रह करा कर भारत ने कश्मीर की स्थिति स्पष्ट कर दी होती तो पाकिस्तान का कश्मीर मोह कभी का समाप्त हो जाता। लेकिन कश्मीर स्थिति की अस्पष्टता लगातार बने रहने के कारण पाकिस्तान की आशा कभी खत्म नही हुयी और अब जबकि कश्मीर की आन्तरिक स्थिति भारत के प्रतिकूल है, पाकिस्तान की कश्मीर आशा और उग्र हो गयी है। भारत पाकिस्तान के बीच का तनाव बढ़ने का दूसरा कारण वे परिस्थितियाँ है, जिनमें बांग्लादेश का जन्म हुआ। हम भारतीय इस बात पर बहुत गर्व करते हैं कि बांग्लादेश के मुक्ति संग्राम में भी भारतीय सेना की गौरवशाली भूमिका थी। लेकिन अब ऐसा प्रतीत होता है कि यह भूमिका इस उपमहादेश में सौहार्द बढ़ाने वाली नहीं सिद्ध हुयी। पहली बात तो यह है कि हमें किसी भी परिस्थिति में पाकिस्तान के विभाजन को प्रोत्साहित नहीं करना चाहिये। बांग्लादेश में पाकिस्तानी सेना द्वारा जाति संहार निश्चय ही एक बहुत ही गम्भीर घटना थी। किन्तु इसे रोकने के लिये पाकिस्तान पर नैतिक दबाब का भरपूर इस्तेमाल होना चाहिये था और वह विफल हो जाने पर राष्ट्रसंघ का हस्तक्षेप आमंत्रित करना चाहिये था। यदि राष्ट्रसंघ का हस्तक्षेप व्यर्थ साबित होता, तब भी भारतीय सेना को अकेले बांग्लादेश में प्रवेश नहीं करना चाहिये था। बांग्लादेश की मुक्ति के लिये एक संयुक्त दक्षिण एशियाई सेना का गठन करना चाहिये था। सब तरह के विकल्पों को आजमा लेने के बाद यदि भारतीय सेना बांग्लादेश में जाती और गहरे अनुपात के साथ जाती तथा सफलता के बाद भी यह अनुपात न केवल बना रहता, बल्कि समय समय पर प्रकट भी किया जाता, तो पाकिस्तान की जनता में भारत के प्रति प्रशंसा भाव पैदा हो सकता था। लेकिन बांग्लादेश के निर्माण पर भारत में जिस तरह की खुशी मनायी गयी और अब भी जैसे उस पर गर्व किया जाता है, उसने भारत पाकिस्तान के बीच की दूरी और बढ़ा दी। बांग्लादेश के जन्म की व्याख्या द्विराष्ट्रवाद की विफलता के रूप में की गयी। किन्तु भारत–पाकिस्तान युद्ध और तनाव की लगातार उपस्थिति क्या द्विराष्ट्रवाद की सफलता नहीं है ? द्विराष्ट्रवाद का सिद्धान्त यदि पूर्णतः व्यर्थ है, तो भारत–बांग्लादेश में एकता की इच्छा क्यों नहीं पैदा हुई। इसमें क्या शक है कि पंजाब और कश्मीर के उग्रवाद को पाकिस्तान का सहयोग निश्चित रूप से पाकिस्तान के

बांग्लादेश को प्रतिशोध की भावना से पैदा हुआ। जब तक पाकिस्तान भारत को कुछ वैसा ही सबक नहीं सिखा देता, वह अन्दर ही अन्दर आत्मलज्जा से घिरा रहेगा। यह प्रयास भारत को ही करना है कि पाकिस्तान अपनी भारत ग्रन्थि से उबर सके और सामान्य आचरण कर सके।

क्या अन्तर्राष्ट्रीय दबाव कश्मीर की आजादी के पक्ष में काम कर सकता है ? कुछ हद तक निश्चित रूप से, क्योंकि यह अमेरिका की नयी भूमिका की माँग है। शीत–युद्ध की समाप्ति के बाद अमेरिका अपने को एक मात्र विश्व नेता के रूप में स्थापित करने की कोशिश कर रहा है। विश्व का नेतृत्व करने की इच्छा कोई बुरी या अनैतिक इच्छा नहीं है। लेकिन हम जिसका नेतृत्व करना चाहते हैं, उसके प्रति हमारे अन्दर शुभकामना भी होनी चाहिये। अमेरिका ने जरूरत पड़ने पर यूरोप के प्रति जो कुछ शुभकामना दिखाई है, किन्तु तीसरी दुनिया के प्रति नहीं। यहाँ वह सिर्फ धौंस से काम लेना चाहता है। कश्मीर के मामले मे भी उसकी आवाज मे प्रेम या विनय नहीं है, महज अकड़ है। बहरहाल, अमेरिकी हस्तपेक्ष किस हद तक बढ़ता है, यह इस पर निर्भर करता है कि भारतीय उपमहादेश में अमेरिकी स्वार्थ कितने प्रबल सिद्ध होते हैं। कुवैत में अमेरिका का स्वार्थ बहुत प्रबल था। अतः इराक पर तुरन्त हमला जरूरी हो गया। कश्मीर में अमेरिका का वैसा स्वार्थ नहीं है अतः चेतावनी का स्वर अब भी धीमा है। भारत द्वारा नयी अर्थ नीति अपनाने के बाद भारत में अमेरिका का स्वार्थ तेजी से बढ़ा है। अतः भारत को अपना दुश्मन बनाकर अमेरिका कश्मीर कों आजाद कराना शायद न चाहे। लेकिन भविष्य की कौन जानता है ? अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की रफ्तार और मोड़ों के बारे मे कोई भविष्यवाणी नहीं की जा सकती।

यही बात कुछ हद तक राष्ट्रों के बनने बिगड़ने के बारे में भी सच है। इस बारे में कोई गफलत नहीं होनी चाहिये कि कश्मीर का मामला असम, पंजाब वगैरह से बिल्कुल अलग है। असम आन्दोलन अलगाववादी नही था। पंजाब आन्दोलन खड़कुओं के हाथ पड़कर अलगाववादी हो गया, किन्तु उन्हे कभी भी पंजाब की व्यापक जनता का समर्थन नहीं मिल पाया। कश्मीर की स्थिति भिन्न इसलिये है कि वहाँ माँग आजादी की है और उसे कश्मीर घाटी के मुसलमानों का लगभग पूर्ण समर्थन दिखाई देता है अतः यह उम्मीद नहीं करनी चाहिये कि कश्मीरी अलगाववाद भी अन्ततः थककर दम तोड़ देगा। यह एक संभावना जरूर है, क्योंकि हिंसक आन्दोलनों की व्याप्ति की एक सीमा है लेकिन कौन जाने ! परिस्थितियों के अनुकूल होने से यह बढ़ भी सकता है। शिवाजी के सैनिक चने खाकर लड़ सकते थे, तो कश्मीरी उग्रवादी भी आधे पेट खाकर अपना संघर्ष जारी रख सकते हैं यह बहस महत्वपूर्ण नहीं है कि कश्मीरी राष्ट्रीयता एक वैध्या

अवधारणा है या नहीं ! राष्ट्रीयता के बारे में देकार्त की यह उक्ति ज्यादा तर्कसंगत प्रतीत होती है – मैं सोचता हूँ इसलिये मैं हूँ। द्विराष्ट्रवाद के तमाम तार्किक खण्डन के बावजूद पाकिस्तान बनकर रहा, क्योंकि पाकिस्तानी राष्ट्रीयता का विचार जड़ पकड़ चुका था। राष्ट्र हमेशा तर्क के आधार पर नहीं बनते। अक्सर तो उनके पीछे भावना ही होती है। तर्क उनकी एकता को मजबूत करता है। दूसरी ओर अतार्किक स्थितियों से भावनायें भी दरकने लगती हैं। फिलहाल कश्मीर और भारत के बीच न तर्क का कोई रिश्ता बचा दिखाई देता है न भावना का। अतः कश्मीर यदि भारत का अंग बना रहता है, तो इसका श्रेय भारतीय सेना को ही होगा।

यदि भारत सचमुच मानता है कि कश्मीर उसका अविच्छिन्न अंग है, तो उसे कश्मीर के साथ सचमुच का आवयविक सम्बन्ध बनाना चाहिये। आजादी की व्यापक माँग से लोकतांत्रिक ढंग से निपटाने का एक व्यवहारिक रूप यह हो सकता है कि उग्रवादियों के साथ भारत का एक समझौता हो कि दोनों ओर से हिंसा एक निश्चित अवधि के लिये बन्द रहेगी। इस बीच कश्मीर का प्रशासन किसी ऐसे व्यक्ति के हाथ में रहेगा, जिस पर दोनों को भरोसा रहेगा। यह व्यक्ति राष्ट्रसंघ का कोई प्रतिनिधि भी हो सकता है। बेहतर होगा कि यह दायित्व किसी पड़ोसी देश के तटस्थ व्यक्ति को सौपा जाये। इस अवधि मे सबको अपने–अपने ढंग से कश्मीर मे प्रचार करने की सुविधा हो। उसके बाद जनमत संग्रह किया जाये यह एक रास्ता है। इस तरह के कई और रास्ते भी निकल सकते हैं। लेकिन इन रास्तों पर वही गौर करेगा जो कश्मीर समस्या का न्याययुक्त तथा शांति पूर्ण समाधान करना चाहेगा। हर सूरत में एक बात बहुत साफ है। कश्मीर मे बहुत मवाद जमा हो गया है। यह मवाद साफ करना जरूरी है, अन्यथा कश्मीर अपने लिये और भारत के लिये लगातार एक रिसता हुआ घाव बना रहेगा। इस बात का अहसास हम भारतीयों को नहीं हो पाता, तो इसीलिये कि हममे से अधिकांश का अपना अस्तित्व भी एक रिसता हुआ घाव ही है और हम उसके उपचार की कोई गम्भीर कोशिश नहीं करते।

दूसरे शब्दों में, कश्मीर का भविष्य मुख्यतः इस बात से निर्धारित होगा कि भारत और पाकिस्तान का भविष्य किस रूप में ढलता है। यदि इन देशों मे मनुष्यता और राजनीति का स्तर कुछ ऊँचा उठता है, तो कश्मीर समस्या का भी कोई मानवीय समाधान निकल सकता है। वैसे कश्मीर में आजादी का जो संघर्ष चल रहा है, उसने भी अभी तक अपना कोई सुसंगत और मानवीय रूप नहीं बनाया है यहाँ तक कि उसका कोई सुव्यवस्थित नेतृत्व तक नहीं है आपस में इतनी प्रतिद्वंदिता है जैसे वे किसी साझा उद्देश्य के लिये न लड़ रहे हों। कहना न होगा कि यह

भी भारतीय उपमहादेश के चरित्र का ही एक दुर्भाग्यपूर्ण हिस्सा है। ऐसी स्थिति में यह आशा भी नहीं बंधती कि स्वयं कश्मीर इस उपमहादेश को कोई दिशा दे सकता है। उसकी वेदना सच्ची है। लेकिन सिर्फ इतने में किसी समुदाय की मुक्ति के रास्ते नहीं खुलते। कश्मीर की आजादी में ही उसकी मुक्ति है यह सोचना भ्रामक है। आजाद भारत 47 वर्षों से अपनी मुक्ति की प्रतीक्षा कर रहा है। लेकिन सिर्फ इसी से कश्मीर पर हुकूमत करने का अधिकार किसी और को नहीं मिल जाता। सबकों अपना भविष्य तय करने की सुविधा होनी चाहिये– यहाँ तक कि उसके साथ खेलने की भी। इसी में भविष्य की पवित्रता है और वर्तमान की पवित्रता ? जाहिर है, वह इसमें है कि कोई किसी के साथ न खेले– यहाँ तक कि अपने साथ भी नहीं।

✦✦✦

परिशिष्ट

परिशिष्ट

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अयूब मुहम्मद : इण्डिया पाकिस्तान एवं बांग्लादेश, दिल्ली, 1975
2. अधिकारी जी. : पाकिस्तान एण्ड यूनिटी, 1994
3. एडिमी वी. सी. : नेशनल फ्रोनटीश इन रिलेशन्स आफ इन्टरनेशनल लॉ
4. एशियन रिकार्डर
5. आलम अल्ताफ : पाकिस्तान्स फोर्थ मिनिस्ट्र कॉप, राज पब्लिकेशन, दिल्ली, 2001
6. अपादोराई ए. एण्ड राजन एम. एस. : इण्डियास फॉरेन पालिसी एण्ड रिलेशन, नई दिल्ली, 1988
7. ब्लैक एण्ड थॉमसन : फॉरेन पालिसी इन वर्ल्ड ऑफ चेन्ज
8. बहादुर कलीम : रीसेन्ट डेवलपमेन्ट इन पाकिस्तान्स इन्टरनल एण्ड एक्सटर्नल अफेयर्स, नई दिल्ली, 1974
9. बहादुर कलीम : साउथ एशिया इन ट्रान्जीशन
10. ब्रीचर माइकल : इलाइट इमेज एण्ड फॉरेन पॉलिसीज – पेसिफिक अफेयर सफरिंग एण्ड समर, 1967
11. बालपर्ट एस. : रूट्स ऑफ कन्सन्ट्रेशन ऑफ साउथ एशिया
12. भाटिया किशन : एवाउट सम लीक्स
13. ब्रीचर माईकल : द स्ट्रगल फार कश्मीर
14. ब्राउन नार्मन : यूनाइटेड स्टेट्स एण्ड पाकिस्तान, 1963
15. प्रिन्स रसेल : द इण्डो पाकिस्तान कानफ्लिक्ट
16. बनयाल एस. एस. : कश्मीर द मिराज एच. ए. आर., आनन्द पब्लिकेशन्स, 1994
17. बहादुर कलीम : पाकिस्तान्स सिस्टम क्राइसिस
18. भुट्टो ए. जे. : मिथ आफ इन्डिपेन्डेन्स, लन्दन, 1988

19. भारत सरकार आर्थिक सर्वेक्षण, 2000

20. जुल्फिकार अली भुट्टो : माइथ ऑफ इन्डिपेन्डेन्स, लन्दन, 1988

21. चोपड़ा बी. डी. : पाकिस्तान एण्ड एशियन पीस

22. चौधरी अली : द इमरजेन्स आफ पाकिस्तान

23. चित्रकार जी. एम. : मोहाजिरस पाकिस्तान – ए. पी. एच. पब्लिशिंग कारपोरेशन, 5 अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, 1996

24. चतुर्वेदी बी. के. : कारगिल वी ट्रायल, इण्डिका पब्लिशर्स, ए–24, ओरियन्टल अपार्टमेन्ट, प्लॉट नं. 50, सेक्टर–9, रोहिणी, नई दिल्ली

25. चतुर्वेदी बी. के. : कारगिल कूप हाइजेकिंग, इण्डिका पब्लिशर्स, ए–24, ओरियन्टल अपार्टमेन्ट, प्लॉट नं. 50, सेक्टर–9, रोहिणी, नई दिल्ली, 2002

26. चन्द्र प्रकाश एण्ड अरोरा प्रेम : इन्टरनेशनल रिलेशन, नई दिल्ली, 1992

27. देसाई जनित : कारगिल एण्ड पाकिस्तान पॉलिटिक्स, कॉमन वेल्थ पब्लिशर्स, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, 2000

28. दीक्षित जे. एन. : भारतीय विदेश नीति, प्रभात प्रकाशन, 4/19, आसफ अली रोड, नई दिल्ली

29. दीक्षित जे. एन. : इण्डिया पाकिस्तान वार एण्ड पीस

30. दत्त संजय : इनसाइड पाकिस्तान, 52 इयर आउटलुक, ए. पी. एच. पब्लिशिंग कारपोरेशन, 5, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, 2000

31. ग्रोवर वीरेन्द्र : द स्टोरी आफ कश्मीर यस्टरडे एण्ड टुडे, वोल्यूम 1, दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन, एफ–159, राजौरी गंज, नई दिल्ली

32. ग्रोवर वीरेन्द्र : द स्टोरी आफ कश्मीर यस्टरडे एण्ड टुडे, वोल्यूम 5, दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन, एफ–159, राजौरी गंज, नई दिल्ली

33. घई यू. आर. : भारतीय विदेश नीति, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर

34. गुप्ता : भवानी सेन : द फुल क्रम आफ एशिया

35. गोपालाचारी के. : बेसिक फैक्टस एवाउट इण्डिया चाइना बोर्डर, नई दिल्ली

36. गोपालाचारी के. : द इण्डिया चाइना बाउंडरी क्वश्चन, इन्टरनेशनल स्टडीज, नई दिल्ली, 1963

37. हेल्पर्न एम. ए. : पॉलिटिक्स टुवर्ड चाइना एण्ड हिज पॉलिटिकल सिस्टम ऑफ पाकिस्तान, इट. एम. सी. ओ. वोस्टन, 1957

38. हैम्स्थ एच. चार्ल्स : डिप्लोमेटिक हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न इण्डिया, बम्बई, 1971

39. हडसन एच. वी. : द ग्रेट डिवाइड ब्रिटेन इण्डिया पाकिस्तान

40. हन्नाह नेगार : अफगानिस्तान ए मार्कसिस्ट रेजींग इन द मुस्लिम सोसाइटी करेन्ट हिस्ट्री

41. हसन एण्ड रसीद : पाकिस्तान द रुट्स ऑफ डिक्टेटरशिप

42. कौल टी. एन. : फारेन रिलेशन, नई दिल्ली, 1972

43. काजी अहमद एस. : ए ज्योग्राफी आफ पाकिस्तान, कराची, 1969

44. खान अयूब मुहम्मद : पाकिस्तान वर्क्स पेक्टीवस ऑन फारेन अफेयर्स, न्यूयार्क, 1960

45. कुमार एल. सी. : इण्डिया व्यू आफ सोवियत रसिया, नई दिल्ली, 1979

46. फिसिंगर ए. हेनरी : द व्हाइट हाउस इयर्स, लन्दन

47. कोली सी. एम. : प्रमुख देशों की विदेश नीतियाँ, साहित्यागार, 2000

48. खान अयूब : फ्रैन्ड्स नॉट मास्टर्स, लन्दन, ऑक्सफोर्ड, 1967

49. कुकरेजा बीना : सिविल मिलेट्री रिलेशनशिप इन साउथ एशिया पाक बांग्लादेश इण्डिया

50. कुमार रवीन्द्र : इण्डिया पाक बांग्लादेश

51. किशोर राज : भारत पाक संघर्ष – प्रकाशन संस्थान, 4715/21, दयानन्द मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली

52. मेहता ए. एण्ड पटवर्धन ए. : द कम्युनल ट्राइगल इन इण्डिया, 1942

53. मिश्रा ए. एस. : इण्डियास फारेन पॉलिसी

54. मूर्ति वी. एस. एन. : नेहरूज फारेन पॉलिसी, नई दिल्ली, 1953

55. मोहित दिलीप : इण्डिया यू.एस.ए. एण्ड इमरजिंग वर्ल्ड आर्डर, बरौदा, 1995

56. मानकेकर डी. के. : ट्वन्टी टू फेटफुल डेस, बम्बई, 1965

57. मल्होत्रा इन्दर : डायलाग विद पाकिस्तान

58. मालवंकर एम. एस. : प्राब्लम आफ इण्डिया, 1940

59. मित्रा एन.एन. : एनुअल रजिस्टर, 1942

60. मेक्रीडीज सी. राय : फारेन पॉलिसी इन वर्ल्ड पॉलिटिक्स, न्यूयार्क, 1962

61. मचवे बी. : इन्डो यू.एस. रिलेशन, न्यू दिल्ली

62. मेनन वी. पी. : द स्टोरी ऑफ द इन्टीग्रेशन ऑफ द इण्डियन स्टेट्स

63. मलिक वेस्टर : द गवर्नमेन्ट एण्ड पॉलिटिक्स इन साउथ एशिया वेस्ट व्यू प्रेस, लन्दन, 1987

64. नाथ बीरबल : कश्मीर द न्यूक्लियर फ्लैश प्वाइन्ट, मानस पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1998

65. नन्दा बी. आर. : इण्डियाज फारेन पालिसी – द नेहरू इयर्स, दिल्ली, 1976

66. परांजये आर. पी. : द क्रास आफ इण्डियन प्रॉब्लम, 1946

67. पंत पुष्पेश एवं श्रीपाल : भारतीय विदेश नीति, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ

68. पोपलाई एवं टालबोट : इण्डिया एण्ड अमेरिका – ए स्टडी ऑफ देयर रिलेशन, नई दिल्ली

69. राय ए. के. : डोमेस्टिक कम्पल्शन्स एण्ड फारेन पॉलिसी, पाकिस्तान इन इन्डो सोवियत रिलेशन 1947–1958, नई दिल्ली

70. राजन एम. एस. : इण्डिया इन वर्ल्ड अफेयर, बम्बई 1964

71. रत्तू कृष्ण कुमार : नियंत्रण रेखा के आर–पार, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर

72. सावरकर बी. डी. : थॉट्स आन पाकिस्तान, 1946

73. सेज पब्लिकेशन नई दिल्ली : फ्राम सरप्राइज टू रिफोनिंग – द कारगिल रिव्यू कमेटी रिपोर्ट, नई दिल्ली, 15 दिसम्बर 1999, थाउजेन्ट ओक्स, लन्दन

74. शर्मा सुरेश कुमार एण्ड शर्मा ऊषा : काश्मीर – थॉट्स ए ऐज, सोसायटी, इकोनामी एण्ड कल्चर, दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन, एफ–159, राजौरी गार्डन, नई दिल्ली, 1999

75. शर्मा सुरेश कुमार एण्ड शर्मा ऊषा : पॉलिटिकल एण्ड कान्सटीट्यूशनल डेवलपमेन्ट ऑफ कश्मीर, दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन, एफ–159, राजौरी गार्डन, नई दिल्ली

76. श्रीवास्तव एण्ड जोशी : इन्टरनेशनल रिलेशन, मेरठ, 1989–90

77. शर्मा रामनाथ : कश्मीर ऑटोनामी – एन एक्सरसाइज इन सेन्ट्रल स्टेट रिलेशन, शुभि पब्लिकेशन, दिल्ली, 2000

78. स्टेविन्स पी. रिचर्ड : द यूनाइटेड स्टेटस इन वर्ल्ड अफेयर्स, न्यूयार्क, 1965

79. सिंह महेन्द्र : इण्डो यू.एस. रिलेशन, दिल्ली, 1982

80. सिंह एल. पी. : इण्डियाज फारेन पालिसी – द शास्त्रीज पीरियड, दिल्ली, 1980

81. सईद वी. खालिद : पाकिस्तान की विदेश नीति का विश्लेषण

82. शाह के. टी. : व्हाई पाकिस्तान व्हाई नाट, 1940

83. सिंह सुरजीत मान : इण्डियाज सर्च फार पावर – इन्दिरा गाँधीज फारेन पालिसी, 1966–82, दिल्ली 1984

84. सिंह जसजीत : कारगिल 99 – पाकिस्तान फोर्थवार कश्मीर, नॉलेज वर्ल्ड, एस.ए./12, फर्स्ट फ्लोर, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, 1999

85. स्प्राउट हेराल्ड एण्ड स्प्राउट मारग्रेट : फाउन्डेशन्स ऑफ इन्टरनेशनल पॉलिटिक्स, न्यूयार्क, 1962

86. स्मिथ कर माइकल जी. : लाहौर एण्ड इट्स रूलर्स – ए हिस्ट्री ऑफ रेनिंग फेमिलीज ऑफ लाहौर एण्ड द राजाज ऑफ जम्मू, शुभि पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 1998

87. सेन असित कुमार : इन्टरनेशनल रिलेशन, नई दिल्ली

88. टेलर हेरिस : ए ट्रीटीज इन इन्टरनेशनल पब्लिक लॉ, शिकागो, 1901

89. टन्डन जे. सी. एण्ड दिलीप सिंह : इण्डो पाकिस्तान रिलेशन, नई दिल्ली, 1966

90. वर्मा एस. पी. एण्ड मिश्रा के. पी. : फारेन पॉलिसी इन साउथ एशिया

91. वर्मा दीनानाथ : अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध

Reports, Journal & Periodicals

1. Official records of the security council (SCOR)
2. White paper on Indian's States
3. White paper on Jammu and Kashmir
4. Security Council Official Records
5. Department of State Bulletin
6. Bangladesh Document, New Delhi, 1971
7. Ministry of Defence Report, New Delhi, 1972
8. Foreign Affairs Record, 1974
9. Joint Communique issued in Delhi on 1974
10. India External Affairs (Ministry of Aggression in Kashmir), New Delhi, 1963.
11. India Bangladesh Document, New Delhi, 1971
12. India Kashmir and The United States, New Delhi, 1962
13. India Kashmir Papers, New Delhi, 1952
14. India selected Indo-Pakistan Agreement, New Delhi
15. India information service the Kashmir question, Delhi, 1956
16. Civil Service Chronicle, October, 1996
17. India Journal of Political Science, 1992
18. The Washington Quarterly Autumn, 1992
19. South Asian Newsletter, Jaipur
20. World Focus monthly discussion journal
21. प्रतियोगिता दर्पण
22. प्रतियोगिता किरण
23. पॉलिटिक्स
24. परीक्षा मंथन
25. यूथ कम्पटीशन टाइम
26. धर्मयुग
27. आउटलुक
28. पांचजन्य

29. माया

31. इण्डिया टुडे

32. इण्डिया क्वार्टरली

33. मेनस्ट्रीम

Newspaper

1. Asian Recorder
2. National Herald
3. Indian Express, New Delhi
4. Hindustan Times, New Delhi
5. Times of India, New Delhi
6. Statesman, New Delhi
7. New Delhi
8. The Economic Times, New Delhi
9. Deccan Herald, Bangalore
10. The Tribune, Chandigarh
11. The Pioneer, New Delhi
12. Amrit Bazar Patrika, Calcutta
13. दैनिक जागरण
14. दैनिक अमर उजाला
15. दैनिक राष्ट्रीय सहारा
16. दैनिक हिन्दुस्तान
17. दैनिक स्वतंत्र भारत
18. दैनिक आज